ISSN-0971-8397

योजना

नवंबर 2013 | विकास को समर्पित मासिक | ₹ 10

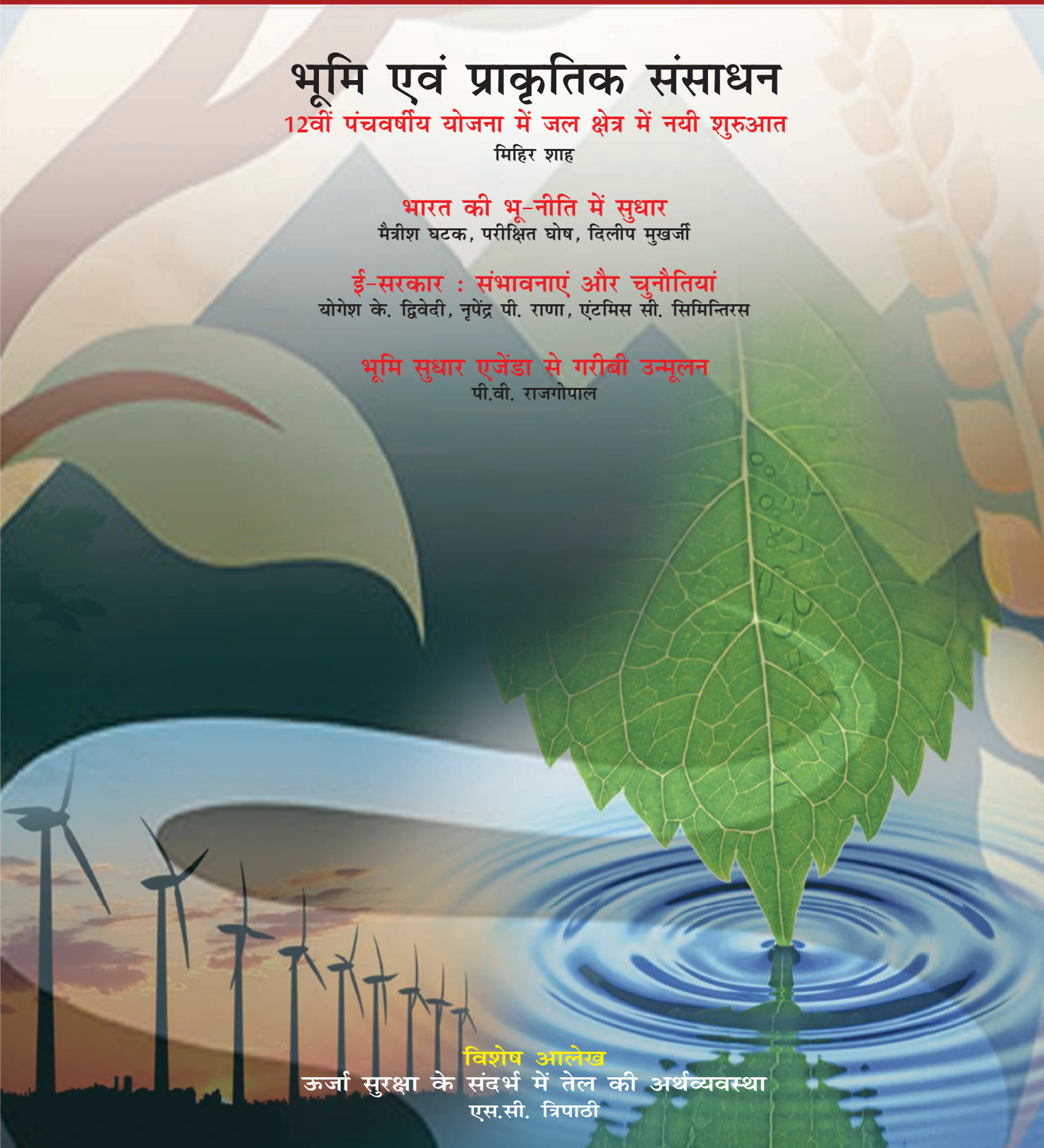

भूमि एवं प्राकृतिक संसाधन

12वीं पंचवर्षीय योजना में जल क्षेत्र में नयी शुरुआत
मिहिर शाह

भारत की भू-नीति में सुधार
मैत्रीश घटक, परीक्षित घोष, दिलीप मुखर्जी

ई-सरकार : संभावनाएं और चुनौतियां
योगेश के. द्विवेदी, नृपेंद्र पी. राणा, एंटमिस सी. सिमिन्तिरस

भूमि सुधार एजेंडा से गरीबी उन्मूलन
पी.वी. राजगोपाल

विशेष आलेख
ऊर्जा सुरक्षा के संदर्भ में तेल की अर्थव्यवस्था
एस.सी. त्रिपाठी

भारतेंदु हरिश्चन्द्र पुरस्कार वर्ष 2011 एवं 2012

भारतेंदु हरिश्चन्द्र पुरस्कार योजना के अंतर्गत प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय द्वारा वर्ष 2011 एवं 2012 के पुरस्कारों के लिए निम्नलिखित विषयों पर हिंदी में मौलिक लेखन के लिए प्रविष्टियां आमंत्रित हैं ।

- **पत्रकारिता एवं जनसंचार**
  (प्रचार, फिल्म, विज्ञापन, रेडियो, टेलीविजन, प्रकाशन आदि विषयों सहित)

  प्रथम पुरस्कार 75,000/– रुपए, द्वितीय पुरस्कार 50,000/– रुपए, तृतीय पुरस्कार 40,000/– रुपए

- **राष्ट्रीय एकता**
- **महिला विमर्श**
- **बाल साहित्य**

  प्रथम पुरस्कार 40,000/– रुपए, द्वितीय पुरस्कार 20,000/– रुपए (उपरोक्त तीनों वर्गों के लिए)

- सभी भारतीय लेखक इस पुरस्कार योजना में भाग ले सकते हैं।

  प्रकाशित पुस्तकें तथा टाइप की हुई पांडुलिपियां स्वीकार की जाएंगी। उन्हीं पुस्तकों/पांडुलिपियों पर विचार किया जाएगा जो वर्ष 2011 के पुरस्कारों के लिए 1 जनवरी, 2011 से 31 दिसम्बर 2011 के दौरान एवं वर्ष 2012 के पुरस्कारों के लिए 1 जनवरी, 2012 से 31 दिसम्बर, 2012 के दौरान लिखी अथवा प्रकाशित की गई हों। **(दोनों वर्षों के लिए अलग–अलग प्रविष्टियां होंगी।)**
- प्रकाशन विभाग के कर्मचारी एवं उनके निकट पारिवारिक सदस्य (जिसमें माता–पिता, पति/पत्नी, पुत्र/पुत्री शामिल हैं) इस योजना में भाग लेने के पात्र नहीं हैं।
- पुरस्कारों के निर्णय के लिए चार मूल्यांकन समितियां गठित की जाएंगी।
- यदि पुरस्कृत पुस्तक/पांडुलिपि के लेखक एक से अधिक व्यक्ति हैं तो पुरस्कार की राशि विभिन्न लेखकों में एक समान वितरित की जाएगी।
- यदि पुस्तक अथवा पांडुलिपि के लेखक एक से अधिक व्यक्ति हैं तो प्रत्येक लेखक अलग से प्रविष्टि प्रपत्र भरें।
- इस पुरस्कार योजना के अंतर्गत बाल साहित्य वर्ग को छोड़कर अन्य वर्गों में कविता, नाटक, उपन्यास, कहानियां, व्यक्ति विशेष आदि पर लिखी पुस्तकें/पांडुलिपियां नहीं आती हैं।
- बाल साहित्य को छोड़कर किसी भी पुस्तक की पृष्ठ संख्या 80 और पांडुलिपि की पृष्ठ संख्या 120 से कम नहीं होनी चाहिए।
- यदि कोई लेखक किसी वर्ष पुरस्कृत किया गया है तो वह अगले तीन वर्ष तक पुरस्कार योजना में भाग नहीं ले सकता।
- प्रविष्टियां निर्धारित प्रपत्र में पुस्तक/पांडुलिपि की छह प्रतियों के साथ **सहायक निदेशक (राजभाषा), कमरा नं. 342, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, सूचना भवन, सी.जी.ओ. कॉम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली – 110003 (फोन 011–24362977) (ई–मेलः pub.div.hin@gmail.com)** को **18 नवंबर, 2013** तक पहुंच जानी चाहिएं। इसके साथ अपना संक्षिप्त जीवनवृत्त अवश्य भेजें जो 100 शब्दों से अधिक का न हो। जीवनवृत्त के साथ पासपोर्ट साइज का रंगीन फोटो होना आवश्यक है, साथ ही अपना फोन एवं मोबाइल नम्बर एवं ई–मेल पता देना अनिवार्य है। यदि पुस्तक/पांडुलिपि की छह से कम प्रतियां प्राप्त होंगी तो प्रविष्टि स्वीकार नहीं की जाएगी।
- नियम, विनियम तथा प्रविष्टि प्रपत्र इस विभाग की वेबसाइट www.publicationsdivision.nic.in से डाउनलोड किए जा सकते हैं। इस संबंध में अन्य किसी प्रकार की जानकारी के लिए सहायक निदेशक (राजभाषा) से संपर्क किया जा सकता है।
- **प्रकाशन विभाग में प्रविष्टियां प्राप्त होने की अंतिम तिथि 18 नवंबर, 2013 है ।**

प्रकाशन विभाग

सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय
सूचना भवन, सीजीओ कॉम्पलैक्स, नई दिल्ली 110003

योजना

वर्ष : 58 • अंक : 11 • नवंबर 2013 • कार्तिक-अग्रहायण, शक संवत 1935 • कुल पृष्ठ : 64

प्रधान संपादक
राजेश कुमार झा

वरिष्ठ संपादक
रेमी कुमारी

संपादक
ऋतेश पाठक

संपादकीय कार्यालय
538, योजना भवन, संसद मार्ग,
नयी दिल्ली-110 001
दूरभाष : 23717910, 23096738
टेलीफैक्स : 23359578
ई-मेल : yojanahindi@gmail.com
वेबसाइट : www.yojana.gov.in
www.publicationsdivision.nic.in

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)
वी.के. मीणा

व्यापार व्यवस्थापक (प्रसार एवं विज्ञापन)
सूर्यकांत शर्मा

दूरभाष : 26100207
फैक्स : 26175516
ई-मेल : pdjucir@gmail.com

आवरण : **जी. पी. धोपे**

इस अंक में

संपादकीय	–	5
12वीं पंचवर्षीय योजना में जल क्षेत्र में नयी शुरुआत	मिहिर शाह	7
भारत की भू-नीति में सुधार	मैत्रीश घटक परीक्षित घोष दिलीप मुखर्जी	13
ऊर्जा सुरक्षा के संदर्भ में तेल की अर्थव्यवस्था	एस.सी. त्रिपाठी	17
भूक्षरण रोकथाम की आवश्यकता	एम.ए. हक	21
भूमि सुधार एजेंडा से गरीबी उन्मूलन	पी.वी. राजगोपाल	24
जल प्रबंधन में जवाबदारी की चुनौती	अरुण तिवारी	27
ई-सरकार : संभावनाएं और चुनौतियां	योगेश के. द्विवेदी नृपेंद्र पी. राणा एंटनिस सी. सिमिन्तिरस	31
अनुकरणीय पहल : जैविक सपने	–	35
भूमि अधिग्रहण, पुनर्वास और पुनर्व्यवस्थापन विधेयक	देवेंद्र उपाध्याय	37
प्रकृतिः रक्षति रक्षिता	मानवर्धन कंठ	41
प्रकृति का उपहार-मैंग्रोव वन	नवनीत कुमार गुप्ता	45
औद्योगिकीरण, जनजातीय सरोकार और मीडिया	उमाशंकर मिश्र सुबोध कुमार	51
शोधयात्रा : विकलांगों के लिए सेंसर युक्त श्वसन यंत्र	सुशांत पटनायक	55
पुस्तक समीक्षा : खुदरा व्यापार में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश	स्वाति जैन	57
बाड़मेर तेल-शोधन संयंत्र	सुरेश अवस्थी	58

योजना **हिंदी के अतिरिक्त असमिया, बांग्ला, अंग्रेजी, गुजराती, कन्नड़, मलयालम, मराठी, तमिल, उड़िया, पंजाबी, तेलुगु तथा उर्दू भाषाओं में भी प्रकाशित की जाती है। पत्रिका मंगवाने हेतु, नयी सदस्यता, नवीकरण, पुराने अंकों की प्राप्ति एवं एजेंसी आदि के लिए मनीआर्डर/डिमांड ड्राफ्ट/पोस्टल आर्डर 'अपर महानिदेशक, प्रकाशन विभाग' के नाम से बनवा कर निम्न पते पर भेजें : व्यापार व्यवस्थापक (प्रसार एवं विज्ञापन), प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड IV, तल VII, आर.के.पुरम, नयी दिल्ली-66 दूरभाष : 26100207, 26105590 तार : सूचनाप्रकाशन।**

सदस्य बनने अथवा पत्रिका मंगाने के लिए आप हमारे निम्नलिखित बिक्री केंद्रों पर भी संपर्क कर सकते हैं : सूचना भवन, सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नयी दिल्ली-110003 (दूरभाष : 24367260, 5610), हाल सं. 196, पुराना सचिवालय, दिल्ली-110054 (दूरभाष : 23890205) * 701, सी- विंग, सातवीं मंजिल, केंद्रीय सदन, बेलापुर, नवी मुंबई-400614 (दूरभाष : 27570686) * 8, एसप्लानेड ईस्ट, कोलकाता-700069 (दूरभाष : 22488030) * 'ए' विंग, राजाजी भवन, बंसल नगर, चेन्नई-600090 (दूरभाष : 24917673) * प्रेस रोड नयी गवर्नमेंट प्रेस के निकट, तिरुवनंतपुरम-695001 (दूरभाष : 2330650) * ब्लॉक सं-4, पहला तल, गृहकल्प, एमजी रोड, नामपल्ली, हैदराबाद-500001 (दूरभाष : 24605383) * फर्स्ट फ्लोर, 'एफ' विंग, केंद्रीय सदन, कोरामंगला, बंगलुरु-560034 (दूरभाष : 25537244) * बिहार राज्य कोऑपरेटिव बैंक भवन, अशोक राजपथ, पटना-800004 (दूरभाष : 2683407) * हॉल सं-1, दूसरा तल, केंद्रीय भवन, सेक्टर-H, अलीगंज, लखनऊ-226024 (दूरभाष : 2225455) * अंबिका कॉम्प्लेक्स, फर्स्ट फ्लोर, पालडी, अहमदाबाद-380007 (दूरभाष : 26588669) * के.के.बी. रोड, नयी कॉलोनी, मकान संख्या-7, चेनीकुटी, गुवाहाटी-781003 (दूरभाष : 2665090)

चंदे की दरें : वार्षिक : ₹ 100 द्विवार्षिक : ₹ 180; त्रैवार्षिक : ₹ 250; विदेशों में वार्षिक दरें : पड़ोसी देशः ₹ 530; यूरोपीय एवं अन्य देश : ₹ 730। ***योजना*** **में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। ज़रूरी नहीं कि ये लेखक भारत सरकार के जिन मंत्रालयों, विभागों अथवा संगठनों से संबद्ध हैं, उनका भी यही दृष्टिकोण हो। पत्रिका में प्रकाशित विज्ञापनों की विषयवस्तु के लिए योजना उत्तरदायी नहीं है।**

आपकी राय

मौलिकता का क्षय

योजना के सभी लेख बेहद उपयोगी होते हैं। इसकी वजह से हम अपने राष्ट्र के विकास को देख पाते हैं।

इन सबके बावजूद मुझे *योजना* के संपादक मंडल से यह शिकायत है कि *योजना* हिंदी पत्रिका में *योजना* अंग्रेजी पत्रिका के अनुवादित लेख छपने के कारण,लेखों की मौलिकता का क्षय होता है एवं वे बहुत क्लिष्ट हो जाते हैं, जिससे हिंदी के अच्छे जानकारों के लिए भी इसका आशय समझना मुश्किल हो जाता है।

यह निवेदन करना चाहूंगा कि लेखों की मौलिकता की रक्षा करें या इसके अनुवाद में सुधार करते हुए इसे सरलीकृत करने का प्रयास करें।

सुजीत अवस्थी
मुखर्जी नगर, नयी दिल्ली

शिक्षकों को अन्य कार्यों में न लगाया जाए

योजना का सितंबर 2013 अंक जोकि शिक्षा पर केंद्रित है पढ़ने को मिला। वैसे तो *योजना* का प्रत्येक अंक सारगर्भित रहता है लेकिन इस अंक में शिक्षा पर आधारित सभी लेख काफी ज्ञानवर्द्धक हैं। 'शिक्षा का अधिकार कानून 2009 : अवसर और चुनौतियां' लेख काफी अच्छा लगा। वैसे शिक्षा का अधिकार कानून तो लागू कर दिया गया पर अब तक समाज, राजनीतिक संगठन व हमारी सरकार इसको अमली जामा पहनाने में उभरकर सामने नहीं आ सकी हैं। सरकार ने इस कानून को तो लागू कर दिया पर आज भी सरकारी विद्यालयों में संसाधनों की कमी को दूर नहीं किया जा सका है। आज भी बच्चे स्कूलों में केवल मध्याह्न भोजन के लिए ही जाते हैं न कि पढ़ाई के लिए। वैसे पढ़ाई भी कैसे पूरी हो क्योंकि जिन शिक्षकों के हाथों में नौनिहालों का भविष्य है उन्हें शिक्षा से इतर अन्य कार्यों में लगाकर शिक्षा को सबसे निचले पायदान पर खड़ा कर दिया है। प्राय: यह देखने को मिलता है कि शिक्षक को पठन-पाठन के अलावा जनगणना कार्य, एपीएल, बीपीएल सर्वे एवं ग्रामीण स्तर पर विभिन्न तरह के सर्वे रिपोर्ट ही तैयार करते के कार्यों में लगा दिया जाता है। ऐसे में सरकारी स्कूलों में शिक्षा का सही रूप कैसे दिखाई देगा।

ग्रामीण स्तर पर जो भी सर्वे कार्य कराए जा रहे हैं उनमें सरकार को शिक्षित बेरोज़गार युवको को लगाना चाहिए। इससे एक तो शिक्षित बेरोज़गारों को रोज़गार मिल जाएगा वहीं दूसरी तरफ सरकार का कार्य भी पूरा हो जाएगा।

डॉ. सत्य प्रकाश
बरवां, मीरगंज, गोपालगंज, बिहार

शिक्षित भारत का संकल्प

योजना का सितंबर 2013 अंक पढ़ा जो 'सबके लिए शिक्षा' विषय पर केंद्रित है। इस अंक की समूची सामग्री अत्यंत ज्ञानवर्द्धक और उपयोगी है। यह अंक सही मायने में अद्भुत और अनूठा है। अंक में छपे सभी लेखकों के लेख विश्लेषणात्मक व सारगर्भित तथा जानकारियों से भरपूर हैं। सुमा चिटनिस, तेजस्विनी निरंजना, सुनीता सांधी एवं कुंतल सेनसरमा, चैतन्य प्रकाश, महेश पुनेठा और ऋतु सारस्वत तथा अन्य लेखकों के लेखों से काफी ज्ञानोपयोगी जानकारियां मिलीं।

सर्वविदित सत्य है कि शिक्षा किसी भी व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के विकास की धुरी है। शिक्षा का संबंध सिर्फ़ साक्षरता से नहीं बल्कि शिक्षा चेतना और उत्तरदायित्व की भावना को जाग्रत करने वाला औजार भी है। शिक्षा को एक मापक या पैमाने के तौर पर देखा जाता है जिसके आधार पर व्यक्ति, राज्य या देश का मूल्यांकन किया जाता है और यदि इस मूल्यांकन से हम भारत में साक्षरता की स्थिति को देखें तो वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार देश में साक्षरता दर 74.04 प्रतिशत है। पुरुषों की साक्षरता दर 82.14 प्रतिशत है एवं महिलाओं की 65.46 प्रतिशत। अंतर्राष्ट्रीय समुदाय ने वर्ष 2000 में तय किया था कि

शिक्षा मानवाधिकार है, हर व्यक्ति को जीवन के विकास में समान अवसर मिलना चाहिए। उनके साथ सामाजिक पृष्ठभूमि, लिंग, धर्म या उम्र के आधार पर भेदभाव नहीं होना चाहिए। परंतु क्या वाकई ऐसा होता है? क्यों हर व्यक्ति के लिए शिक्षा ज़रूरी है? यूनेस्को की एक रिपोर्ट के मुताबिक 'विश्व के विकास की कार्यसूची में सभी विषयों जैसे–निर्धनता उन्मूलन, स्वास्थ्य संरक्षण, तकनीकी जानकारी का आदान-प्रदान, पर्यावरण का संरक्षण, लिंगभेद समापन, प्रजातांत्रिक प्रणाली को सुदृढ़ करना तथा शासन-प्रशासन में सुधार, सबके लिए न्याय सुलभता, शिक्षा के माध्यम से इन विषयों को एकात्मक भाव से देखा जाना चाहिए।' स्पष्ट है कि शिक्षित व्यक्ति ही स्वयं को और देश को सकारात्मक दिशा दे सकता है।

आज विश्व के कई देश ऐसे हैं जो सौ प्रतिशत शिक्षा पाकर विकसित देश की श्रेणी में हैं। जबकि कुछ ऐसे देश भी हैं जहां शिक्षा 50 प्रतिशत से भी कम है, वे देश अल्पविकसित श्रेणी में हैं। शिक्षा सबको मिले और वह गुणवत्तापूर्ण हो तभी देश का विकास हो सकता है, केवल कागज़ की डिग्री से नहीं। आइए! हम सब शिक्षित भारत के निर्माण का संकल्प लें।

शशि शेखर श्रीवास्तव

डेवढ़ी, मरहौरा, छपरा, बिहार

विकास की बुनियादः शिक्षा

योजना का सितंबर अंक प्राप्त हुआ। शिक्षा पर आधारित यह अंक बहुत अच्छा लगा। शिक्षा वह सीढ़ी है जिसके सहारे इंसान फर्श से अर्श तक पहुंचता है। शिक्षा से ही मनुष्य का सर्वांगीण विकास संभव है। एक जमाना था कि दूर-दूर तक शिक्षण संस्थान नहीं थे। इल्म के प्यासे सैकड़ों मील का सफ़र तय करके योग्य गुरु के पास पहुंचते थे। पैगम्बरे आजम फर्माते हैं कि 'इल्म हासिल करो अगरचे चीन में भी हो।'

सुमा चिटनिस का आलेख 'भारत भविष्य की महाशक्ति' पढ़ा। बेशक भारत भविष्य की शिक्षा महाशक्ति बन सकता है बशर्ते ईमानदारीपूर्वक प्रयास किए जाएं तो। प्रतिभाएं कल भी भारत में थीं और आज भी हैं किंतु उपयुक्त वातावरण न मिलने के कारण ये समय से पहले मुरझा जाती हैं या पलायन कर जाती हैं। आंकड़ों के हिसाब से हमारी साक्षरता 74 फीसदी है किंतु हक़ीक़त कुछ और है। शर्म की बात तो यह है कि विश्व के शीर्ष 200 विश्वविद्यालयों में हमारा कोई भी विश्वविद्यालय स्थान नहीं बना पाता है। यह वही भारत है जहां इल्म के प्यासे अपनी प्यास बुझाने के लिए आते थे। नालन्दा, तक्षशीला, विक्रमशीला, वल्लभी, बीदर, बदायूं व अजमेर शरीफ शिक्षा के प्रमुख केंद्र थे।

जी.एन. देवी का विशेष आलेख 'देशज भाषाओं की संकटपूर्ण स्थिति' बहुत अच्छा लगा। हमारे देश में आज देशज भाषाएं दम तोड़ रही हैं। क्षेत्रीय भाषाओं की तो बात अलग है किंतु हिंदुस्तान की पहचान हिंदी भी अपनी अस्मिता बचाये रखने के लिए जद्दोजहद कर रही है, यह बड़ी विकट स्थिति है भारतीय भाषाओं के सामने। विश्व के विकसित देशों में सारे कामकाज अपनी राष्ट्रभाषा में होते हैं किंतु हमारे यहां उल्टा है। मात्र 2 फीसदी लोगों द्वारा बोली जाने वाली अंग्रेज़ी का सरकारी कामकाज में दबदबा है।

आखिर में, ऋतु सारस्वत का आलेख 'शिक्षित भारत का स्वप्न और सामाजिक असमानताएं' में कई स्वप्न व असमानताएं देखने को मिलीं। आज हमें ज़रूरत इस बात की है हमारी शिक्षा गुणवत्ता से भरपूर हो। शिक्षण संस्थानों में भ्रष्टाचार रूपी दीमक को खत्म करना जरूरी है, परंतु यह काम इतना आसान नहीं है। मेरे या दो-चार के वश की बात नहीं है यह। पूरे हिंदुस्तान को इसके लिए आगे आना होगा।

दिलावर हुसैन कादिरी

मेहराबाद, जैसलमेर, राजस्थान

बेमिसाल प्रस्तुति

अभिनव और जनोपयोगी अंकों की शृंखला का एक और अंक 'सबके लिए शिक्षा' पढ़ने का सुअवसर मिला। आज के समय में जहां हर जगह टीवी, नेट, मोबाइलों, स्मार्ट फोनों का बोलबाला है वहां पढ़ने का समय बहुत कम ही मिलता है फिर भी आपकी पत्रिका में प्रकाशित संपादकीय विचार और अग्रलेख बरबस ही पढ़ने के लिए विवश कर देते हैं। ऋतु सारस्वत का आलेख 'शिक्षित भारत का स्वप्न और सामाजिक असमानताए' सारगर्भित और तर्क़ पूर्ण लगा। ऐसी अभिनव और बेमिसाल प्रस्तुति के लिए धन्यवाद!

छैल बिहारी शर्मा 'इन्द्र'

छाता, उत्तर प्रदेश

जानकारियों से भरपूर अंक

सितंबर अंक पढ़ा, पसंद आया। अंक में शिक्षा से संबंधित सभी लेख काफी अच्छे व जानकारियों से पूर्ण हैं। 'भारत भविष्य की शिक्षा महाशक्ति', 'नई सदी की शिक्षा', 'शिक्षा के अधिकार का कानून 2009 : अवसर और चुनौतियां', 'क्या है पढ़ना?, 'अपनी भाषा में शिक्षा का सवाल', 'सरकारी शिक्षा से ही पूरा हो सकता है समान और सबको शिक्षा का सपना ये सभी लेख काफी महत्वपूर्ण और जानकारियों से भरपूर हैं।

'हिमालय की नजाकत', 'देशज भाषाओं की संकटपूर्ण स्थिति' आदि लेख भी काफी अच्छे व जानकारियों से भरे हैं।

सरकार सबके लिए शिक्षा उपलब्ध कराने के लिए कई प्रयास कर रही है। सर्व शिक्षा अभियान, मिड डे मील योजना, कन्या विद्यालय योजना, बालिका शिक्षा योजना, विद्यालयों में मुफ्त पुस्तकें, लैपटॉप व टेबलेट बंटवाना, छात्राओं को सरकारी बसों में मुफ़्त सफ़र की सुविधा जैसे न जाने कितने ऐसे क़दम विभिन्न राज्य सरकारों ने और केंद्र की सरकार ने चला रखें हैं बावजूद इसके कई सारे बच्चे शिक्षा पाने से वंचित रह जाते हैं। ऐसी क्या वजह से जिसके कारण आज भी कई सारे बच्चे शिक्षा के अधिकार से वंचित हैं। सरकार द्वारा ग़रीब बच्चों के लिए निजी स्कूलों में 25 प्रतिशत सीटें आरक्षित कर दी गई हैं। परंतु निजी स्कूल गरीब बच्चों को दाखिला देने में आनाकानी कर रहे हैं।

उत्तराखंड में पहले से ही दूरदराज के विद्यालयों का बुरा हाल था। आपदा के बाद तो स्थिति और भी ख़राब हो गई है। इस आपदा में कई स्कूलों को भी नुक़सान हुआ है। कई रास्ते बंद हो गए है। छात्रों को विद्यालय जाने में भी दिक्क़तें हो रही है। कुछ विद्यालय तो दूसरी जगह स्थानान्तरित करने पड़े हैं जिसके चलते छात्रों की पढ़ाई बाधित हो रही है। वैसे भी पहाड़ी क्षेत्रों में छात्र-छात्राओं को कई किमी पैदल चलकर विद्यालय जाना पड़ता है। इस आपदा ने तो और भी मुश्किलें खड़ी कर दी हैं। उत्तराखंड में पिछली सरकार ने विद्यालयों में जब अचानक निरीक्षण करवाया था तो कई शिक्षक विद्यालय से गायब मिले थे। सरकार की कार्यवाही के बाद कई शिक्षक निलंबित किए गए। पहाड़ों पर ऐसे ही छापे आए दिन स्कूलों में पड़ने चाहिए, ताकि देरी से आने वाले शिक्षकों पर नकेल कसी जा सके।

महेंद्र प्रताप सिंह

मेहरागांव, अल्मोड़ा, उत्तराखंड

AN ISO 9001:2008 CERTIFIED INSTITUTE

लोक प्रशासन By Atul Lohiya

(हिन्दी माध्यम)

"Public Administration"

Now The KING SUBJECT Of Civil Services Examination

1750 अंकों की मुख्य परीक्षा में 1250 से ज्यादा अंक सीधे लोक प्रशासन विषय से

नया बैच : 21 नवम्बर एवं 05 दिसम्बर

सामान्य अध्ययन एवं सीसैट अतुल लोहिया

(हिन्दी माध्यम) एवं विशेषज्ञ समूह

हमारी विशेषज्ञ टीम — तुलना करें, फिर एडमीशन लें

अतुल लोहिया — सामाजिक मुद्दे (Paper-I), शासन व्यवस्था एवं संविधान (Paper-II), आंतरिक सुरक्षा, (Paper-III), प्रशासनिक मुद्दे (Paper-IV)

मनोज कुमार सिंह — भारतीय इतिहास एवं संस्कृति, साक्षात्कार

संजीव शर्मा — भारत एवं विश्व भूगोल, पर्यावरण तथा पारिस्थितिकी

राजू सिंह — भारतीय अर्थव्यवस्था

रीतेश जायसवाल — विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी, सामान्य विज्ञान

संजीव कुमार — मनोवैज्ञानिक मुद्दे (Paper-IV)

डॉ. अतुल मिश्रा — दार्शनिक मुद्दे (Paper-IV), राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय मुद्दे

Paper-wise मॉड्यूल सुविधा भी उपलब्ध

ध्रुव सिंह — CSAT विशेषज्ञ

जैन सर — विश्व का इतिहास, निबंध एवं साक्षात्कार

Subject-wise मॉड्यूल सुविधा भी उपलब्ध

न्यूनतम फीस में उच्चतम गुणवत्ता

मुख्य परीक्षा - 12,500/-, प्रारंभिक परीक्षा - 7,500/-, CSAT - 7,500/-

प्रारंभिक 200 नामांकन के लिए, नामांकन जारी : 10 नवम्बर

नया बैच : 17 नवम्बर एवं 01 दिसम्बर

लोक प्रशासन — सिविल सेवा परीक्षा का पर्याय

★सर्वोत्कृष्ट संस्थान ★सर्वोत्कृष्ट नोट्स ★सर्वोच्च रैंक ★सर्वोच्च अंक...

'अतुल लोहिया' — शिक्षक; मार्गदर्शक और मित्र भी

"PRABHA"
INSTITUTE OF CIVIL SERVICES (PICS)
HEAD OFFICE : 105, VIRAT BHAWAN (MTNL BLDG.), NEAR BATRA CINEMA, MUKHERJEE NAGAR, DELHI-110009.
Phone : 27653498, 27655134. Cell.: 9810651005, 8010282492
Website : www.prabha.co.in, Like us on Prabha Institute of Civil Services

YH-188/2013

संपादकीय

जल, जंगल, ज़मीन ..... और वायुतरंगें

यह कहानी महाभारत से है। वनवास के 13 वर्ष बाद पांडव अपना राज्य वापस चाहते थे। उन्होंने शांतिपूर्वक अपनी ज़मीन वापस लेने के लिए कृष्ण को अपना दूत बनाकर हस्तिनापुर भेजा। परंतु दुर्योधन ज़मीन वापस करना ही नहीं चाहता था। जब कृष्ण ने कहा कि पांडवों को रहने के लिए केवल पांच गांव ही दे दो, तो दुर्योधन ने कहा, ''सूच्यग्राम न दस्यामि, बिना युद्धेन, केशव'' अर्थात ''मैं बिना युद्ध के सुई की नोंक बराबर ज़मीन भी नहीं दूंगा।'' इससे शांति की कोई आशा ही नहीं बची और फिर जो महाभारत हुआ उससे समस्त मानवता को भारी विनाश और विध्वंस का सामना करना पड़ा।

वास्तव में, इतिहास में जितने भी युद्ध हुए हैं उन सबके पीछे ज़मीन और प्राकृतिक संसाधनों पर मानव की नियंत्रण की लालसा ही मूल कारण रही है। कहा जाता है कि अगला विश्व युद्ध, यदि कभी हुआ तो वह जल के मुद्दे पर लड़ा जाएगा। इसी प्रकार, आज की वैश्विक भू-सामरिक राजनीति में तेल एक महत्वपूर्ण कारक बनकर उभरा है। सचमुच, बांध के निर्माण, अल्युमिनियम, कोयला और अन्य खनिजों के खनन, वनोपज पर नियंत्रण और प्रबंधन, उद्योगों और अन्य सार्वजनिक उद्देश्यों के लिए भूमि अधिग्रहण और इसी प्रकार के अन्य मुद्दों के विरुद्ध छेड़े गए विभिन्न आंदोलनों में भी कुछ इसी प्रकार के असंतोष के स्वर सुनाई देते हैं। स्पष्ट है कि भूमि और प्राकृतिक संसाधनों से संबंधित समस्या एक विकराल, बहुआयामी और जटिल समस्या है। इसके लिए बौद्धिक के साथ-साथ नीति और प्रशासन, दोनों ही स्तरों पर शिद्दत से काम करने की आवश्यकता है।

प्राकृतिक संसाधनों को ऐसे कच्चे माल के रूप में देखना मूर्खता होगी जो केवल राष्ट्र के विकास में काम आते हैं। निस्संदेह, किसी भी देश के लिए उसका विकास अनिवार्य है, परंतु प्राकृतिक संसाधनों का दोहन और उपयोग मूलतः आजीविका प्राप्त करने की जद्दोजहद और समाज की पारिस्थितिकीय संरचना को भी प्रभावित करती है। ये संसाधन वैसे तो जड़ और प्रकृति प्रदत्त दिखाई देती हैं, परंतु मानवमात्र की नियति को आकार देने में वे उसी प्रकार की सहज सक्रियता दिखाती हैं, जैसी मानवीय हस्तक्षेप के प्रति अपने पारस्परिक व्यवहार में। प्राकृतिक संसाधन और मानव मात्र के अस्तित्व का प्रश्न इस प्रकार से परस्पर गुत्थम-गुत्थ हैं कि उनके लिए नीतिगत ढांचा तैयार करने और उन पर क्रियान्वयन करने में गहरी संवेदनशीलता की आवश्यकता है।

नीतिगत स्तर पर इस विषय से संबंधित कई कानून बनाए गए हैं। हाल ही में संसद में 'भूमि अधिग्रहण, पुनर्वास एवं पुनर्स्थापन में उचित क्षतिपूर्ति एवं पारदर्शिता का अधिकार अधिनियम 2013' पारित हुआ है। इस कानून से भूमि अधिग्रहण के मुआवज़े में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। जिस व्यक्ति की ज़मीन ली जानी है, उसकी सहमति, पुनर्वास और उसको राहत देना, किसी भी प्रकार के अधिग्रहण का अनिवार्य एवं अभिन्न अंग बना दिया गया है। प्रभावित व्यक्तियों की आजीविका के संरक्षण के लिए कानून में अनेक सुरक्षा के उपाय किए गए हैं, जिसमें ज़मीन के बदले ज़मीन, अधिग्रहीत भूमि के विक्रय से होने वाले लाभ में हिस्सेदारी और अन्य प्रकार के प्रक्रियात्मक सुरक्षा के उपाय शामिल हैं। इसकी सराहना एक ऐसे महत्वपूर्ण विधेयक के रूप में की गई है जिसका उद्देश्य देश के औद्योगिक विकास की मांग और प्रभावित लोगों की आजीविका के संरक्षण की आवश्यकता के बीच संतुलन कायम करना है।

प्राकृतिक संसाधनों के लाभों के समान वितरण का प्रश्न केवल व्यक्तियों तक ही सीमित नहीं है। इसमें संसाधनों के संघीयकरण का प्रश्न भी शामिल है। एक संघीय देश होने के नाते भारत के राज्यों का भी प्राकृति संसाधनों पर अधिकार है। केंद्र और राज्यों के बीच संसाधनों और संसाधन विकास के अधिकारों और कार्यों के विभाजन का क्या सिद्धांत होना चाहिए? यहां यह रेखांकित करना महत्वपूर्ण है कि जहां तक सामाजिक भलाई की बात है, प्राकृतिक संसाधनों के मामलों में, चाहे वह भूमि हो, खनिज हो, जल हो या वायुतरंगे, केवल अधिकतम लाभ कमाने का आर्थिक तर्क ही सर्वश्रेष्ठ विकल्प नहीं हो सकता। आर्थिक लाभ और समाज पर पड़ने वाला बोझ, दोनों ही लिहाज़ से अनेक ऐसे कारण हैं कि केवल आर्थिक तर्क से इस प्रश्न का निर्णय नहीं हो सकता। अंततः यही कहा जा सकता है कि मानव समाज को प्रकृति के साथ अपने संबंधों को बड़ी विनम्रता और सहजता से आकार देना होगा। ये संबंध इसी समझ पर आधारित होंगे कि किसी भी राष्ट्र की समृद्धि तभी स्थाई रूप ले सकती है जब आर्थिक सोपान के अंतिम पायदान पर खड़ा व्यक्ति भी इसमें योगदान करने में प्रसन्नता का अनुभव करे। ❑

कैरियर लॉन्चर समाचार www.careerlauncher.com/civils

CL

सिविल सेवा अभ्यर्थी

सिविल सेवा सूचना पत्र संख्या 00/2013-14 नवम्बर 2013

अपनी सफलता की संभावना को 6 गुना बढ़ायें*

CSAT की तैयारी CL के साथ

पूरे भारत में कुल 3,17,962 अभ्यर्थियों में से 14,989 ने सिविल सेवा प्रारंभिक परीक्षा '13 उत्तीर्ण की है। यह सफलता दर लगभग 4.7% है, जबकि CL में यह दर 30.07% है - जो अप्रत्याशित रूप से देश की औसत सफलता दर से 6 गुना से भी अधिक है।

200 घंटों से भी अधिक का पाठ्यक्रम

124+	60+	22+
घंटों का कक्षा प्रशिक्षण	घंटों की प्रिलिम्स टेस्ट सीरीज़ और विश्लेषण	मॉड्यूल टेस्ट और रीविज़न

CL के 742 छात्र प्रधान परीक्षा 2013 में सम्मिलित होंगे

CL | Civil Services Test Prep

www.careerlauncher.com/civils

*CL के पास उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार

संपर्क करें - /CLRocks @careerlauncher

मुखर्जी नगरः 204/216, द्वितीय तल, विराट भवन/एमटीएनएल बिल्डिंग, पोस्ट ऑफिस के सामने, फोन- 011 41415241/46
ओल्ड राजेन्द्र नगरः 18/1, प्रथम तल, अग्रवाल स्वीट कॉर्नर के सामने, फोन- 011 42375128/29
बेर सरायः 61बी, ओल्ड जे. एन. यू. कैम्पस के सामने, जवाहर बुक डिपो के पीछे, फोन- 011 26566616/17
इलाहाबादः (0)9956130010, पटनाः 0612 - 2521800, लखनऊः 0522 - 4108009, इन्दौरः 0731 - 4244300, भोपालः 0755 - 4093447
जयपुरः 0141 - 4054623, नागपुरः 0712 - 6464666, वाराणसीः 0542 - 2222915, गोरखपुरः 0551 - 2342251

YH-172/2013

12वीं पंचवर्षीय योजना में जल क्षेत्र में नयी शुरुआत

● मिहिर शाह

21वीं सदी में प्रवेश के साथ भारत को एक बड़े जल संकट का सामना करना पड़ रहा है। इस संकट की वजह से हमारे नागरिकों के पीने के पानी के बुनियादी अधिकार संकट में पड़ गए हैं; इससे लाखों लोगों की आजीविका भी जोखिम में पड़ गई है। अर्थव्यवस्था के तीव्र औद्योगीकरण की मांग और समाज में शहरीकरण की प्रवृत्ति ऐसे समय उत्पन्न हुई है, जब जलापूर्ति बढ़ाने की क्षमता सीमित है, जलस्तर गिर रहे हैं और जल की गुणवत्ता के मुद्दे तेज़ी से उभर रहे हैं।

बड़े बांधों की सीमाएं

विशेषज्ञों के ताज़ा आकलन के अनुसार व्यवहार्य अतिरिक्त जल भंडारण की व्यवस्था करने में नयी बड़ी बांध परियोजनाओं की भूमिका परिमित हो गई है (अकरमैन, 2011)। नदियों को आपस में जोड़ने के महत्वाकांक्षी कार्यक्रम ने भी बड़ी समस्याएं खड़ी कर दी हैं। हिमालयी नदियों को प्रायद्वीपीय नदियों के साथ जोड़ने की व्यापक प्रस्तावित परियोजना पर 2001 में 5,60,000 करोड़ रुपये की लागत का अनुमान लगाया गया था। भूमि जलप्लावन और अनुसंधान एवं गवेषणा (आर एंड आर) पैकेज़ों की लागत इसमें शामिल नहीं थी। परियोजना की सतत लागत के बारे में कोई ठोस अनुमान उपलब्ध नहीं है, जैसे पानी को ऊंचाई तक ले जाने के लिए अपेक्षित बिजली की लागत के बारे में कोई अनुमान नहीं लगाया गया। मानसून पर हमारी निर्भरता को देखते हुए एक समस्या यह भी है कि सभी प्रायद्वीप में नदियों में 'अतिरिक्त जल' सामान्यत: एक ही समय आता है। नदी घाटियों के बीच परस्पर जल-अंतरण योजना में एक बड़ी समस्या यह है कि थाले में आने वाले राज्यों की उचित आवश्यकता का हिसाब कैसे लगाया जाएगा, जो समय के साथ-साथ बढ़ती जाएगी। इसके अलावा भारत की स्थलाकृति और प्रस्तावित नदियों को जोड़ने के मार्गों की दूरी को देखते हुए मध्यवर्ती और पश्चिमी भारत के शुष्क क्षेत्र इनके दायरे में नहीं आते हैं, जो एमएसएल से ऊपर 300 मीटर से अधिक की ऊंचाइयों पर स्थित हैं। यह आशंका भी है कि नदियों के जोड़ने से अनुप्रवाही क्षेत्रों में बाढ़ के ज़रिये होने वाली पोषक तत्वों की प्राकृतिक आपूर्ति पर भी विपरीत प्रभाव पड़ेगा। भारत के पूर्वी तट के साथ, सभी प्रमुख प्रायद्वीपीय नदियों के विस्तृत डेल्टा क्षेत्र हैं। संपर्क के लिए नदियों पर बांध बनाने से तलछट की आपूर्ति कम हो जाएगी और तटीय और डेल्टा क्षेत्रों का क्षरण होगा, जिससे कमज़ोर तटीय पारिस्थितिकी प्रणालियां नष्ट हो जाएंगी।

इस बात की ओर भी ध्यान दिलाया गया है कि इस कार्यक्रम से मानसून प्रणाली पर भी महत्वपूर्ण असर पड़ेगा (राजमणि और अन्य, 2006)। बंगाल की खाड़ी में समुद्री सतह का तापमान उच्च (28 डिग्री सेंटीग्रेड से अधिक) बनाए रखने में कम लवणता और कम घनत्व वाली जल परत की भूमिका है, जिससे कम दबाव वाले क्षेत्रों का निर्माण होता है और मानसून की गतिविधियां सघन होती हैं। प्रायद्वीप के ज़्यादातर हिस्सों में वर्षा को कम लवणता वाली यही जल-परत नियंत्रित करती है। इस परत को क्षति पहुंचने से प्रायद्वीप

में जलवायु और वर्षा की स्थिति पर गंभीर दीर्घावधि प्रभाव पड़ सकते हैं, जिससे बड़ी आबादी की जीविका ख़तरे में पड़ सकती है।

भूमिगत जल का संकट

सापेक्षिक सहजता और सुगमता के साथ विकेंद्रीकृत पहुंच होने के कारण भूमिगत जल भारत में कृषि और पेयजल सुरक्षा का आधार है। भूमिगत जल साझा-पूल संसाधन है, जिसका इस्तेमाल देशभर में करोड़ों किसानों द्वारा किया जाता है। पिछले 4 दशकों में सिंचाई क्षेत्र के अंतर्गत शामिल किए गए कुल क्षेत्र का 84 प्रतिशत हिस्सा भूमिगत जल पर निर्भर है। भारत, विश्व में भूमिगत जल का सबसे बड़ा उपभोक्ता है और उसकी तत्संबंधी मांग सर्वाधिक तेज़ी से बढ़ रही है। किंतु, भूमिगत जल का दोहन टिकाऊ स्तरों से अधिक किया जा रहा है। अनुमान है कि भारत में तीन करोड़ भूमिगत जल संरचनाएं कार्यरत हैं। अत्यधिक निकासी होने से भारत में भूमिगत जल की मात्रा और गुणवत्ता के ह्रास का गंभीर संकट उत्पन्न हो सकता है।

भारत में सभी जिलों में करीब 60 प्रतिशत क्षेत्रों में भूमिगत जल की मात्रा या गुणवत्ता या दोनों से संबंधित समस्याएं हैं। केंद्रीय भूमिगत जलबोर्ड के ताज़ा मूल्यांकन (सीजीडब्ल्यूबी, 2009) के अनुसार अखिल भारतीय स्तर पर भूमिगत जल के विकास का स्तर 61 प्रतिशत है। पंजाब, हरियाणा, राजस्थान और दिल्ली में यह स्तर शत-प्रतिशत को पार कर गया है। इसके बाद तमिलनाडु (80 प्रतिशत) और उत्तर प्रदेश (71 प्रतिशत) का स्थान है।

महत्वपूर्ण बदलाव की आवश्यकता

देश के व्यापक हिस्सों में जल संसाधनों के विकास की स्पष्ट सीमाओं को देखते हुए 12वीं पंचवर्षीय योजना में इस चुनौती का सामना करना पड़ रहा है कि इस दिशा में कैसे आगे बढ़ा जाए। एक बात साफ है कि परंपरागत दृष्टि से काम नहीं चलेगा। नयी युक्तियां तत्काल अपनाने की आवश्यकता है, जिनके लिए श्रेष्ठ विद्वानों और विशेषज्ञों को मिल कर काम करना होगा। इसे ध्यान में रखते हुए योजना प्रारूपण का नया ढंग अपनाया गया। योजना आयोग के इतिहास में पहली बार 12वीं योजना में जल क्षेत्र संबंधी सभी कार्यदलों की अध्यक्षता सरकार के बाहर से जाने-माने विशेषज्ञों को सौंपी गई। 2011-12 में कई महीने के विचार-विमर्श के बाद एक नया मार्ग खोजा गया, जिससे भारत में जल संसाधन प्रबंधन में 10 गुणा प्रतिमानी बदलाव आया। इस आलेख में इस बदलाव की प्रमुख विशेषताओं को स्पष्ट किया गया है।

प्रतिमानी बदलाव के 10 तत्व

1. व्यापक सिंचाई सुधार : बड़े और मध्यम सिंचाई (एमएमआई) क्षेत्र में और विकास की संभावनाएं सीमित होने को देखते हुए 12वीं पंचवर्षीय योजना में संकीर्ण इंजीनियरी-निर्माण-केंद्रित दृष्टिकोण के स्थान पर अधिक विविधतापूर्ण, हिस्सेदारीपूर्ण प्रबंधन संदर्श अपनाया गया, जिसमें कमान क्षेत्र विकास पर ध्यान केंद्रित किया गया और जल के क़िफ़ायती इस्तेमाल में सुधार के स्थिर प्रयासों की आवश्यकता उजागर की गई, जो निरंतर निचले स्तर पर बनी हुई थी। इस तथ्य को देखते हुए कि हमारे जल संसाधनों का करीब 80 प्रतिशत सिंचाई के काम आता है, 12वीं पंचवर्षीय योजना में सिंचाई परियोजनाओं की जल उपयोग सक्षमता में 20 प्रतिशत वृद्धि का लक्ष्य रखा गया। इससे न केवल कृषि के लिए बल्कि अर्थव्यवस्था के अन्य क्षेत्रों के लिए भी पानी की समग्र उपलब्धता पर व्यापक प्रभाव पड़ेगा।

अभी तक प्रमुख रुकावट यह रही है कि कई राज्यों में गुणवत्तापूर्ण सेवाएं प्रदान करने की सिंचाई विभागों की क्षमताएं बढ़ते एमएमआई निवेश के साथ तालमेल बिठाए रखने में विफल रही हैं। राज्य नयी एमएमआई परियोजनाओं में पूंजी निवेश की होड़ में लगे हैं, लेकिन वे उनके प्रभावकारी प्रबंधन पर ध्यान नहीं देते हैं। यह बात इस तथ्य से संबद्ध है कि अनेक राज्यों में किसानों से वसूल की जाने वाली सिंचाई सेवा फीस (आईएसएफ) समाप्त कर दी गई है अथवा बहुत कम यानी देय राशि का 2-8 प्रतिशत तक रखी गई है। इस तरह किसानों और सिंचाई विभागों के बीच जवाबदेही का संबंध टूट जाता है। जहां आईएसएफ नियमित रूप से वसूल किया जाता है, वहां सिंचाई कर्मचारी किसानों के प्रति अधिक जवाबदेही और दायित्व के साथ काम करते हैं। दोनों के बीच गहरा संबंध है। जल वितरण की व्यापक अनदेखी होती है और किसान यह उम्मीद करते हैं कि अगर उनसे आईएसएफ की मांग की जाती है तो उन्हें कम से कम बुनियादी सेवा तो प्रदान की जानी चाहिए।

अपेक्षित प्रमुख बदलाव को अंजाम देने के लिए राज्यों को प्रोत्साहन हेतु एक महत्वपूर्ण राष्ट्रीय सिंचाई प्रबंधन कोष (एनआईएमएफ) बनाया जा रहा है। एनआईएमएफ अपव्ययगत (नॉन-लेप्सेबल) कोष, जो राज्य सिंचाई विभागों को किसानों से की गई आईएसएफ वसूली के समान अंशदान की भरपाई 1:1 के अनुपात से करेगा। अंतर-कमान क्षेत्रों में एमएमआई स्टाफ के बीच प्रतिस्पर्धा पैदा करने के लिए राज्य एमएमआई प्रणालियों में केंद्रीय अनुदान अपने संबद्ध आईएसएफ वसूली के अनुपात में करेंगे। भागीदारीपूर्ण सिंचाई प्रबंधन (पीआईएन) को प्रोत्साहित करने के लिए एनआईएमएफ प्रत्येक राज्य की आईएसएफ वसूली के उस भाग पर बोनस प्रदान करेगा, जो जल इस्तेमालकर्ता संगठनों (डब्ल्यूयूएज़) के ज़रिये वसूल की गई हो और इसमें यह शर्त होगी कि डब्ल्यूयूएज़ और उनके परिसंघों को आईएसएफ का एक निश्चित हिस्सा रखने की अनुमति दी जाएगी, जिससे वे न केवल वितरण प्रणालियों के मरम्मत और अनुरक्षण कराने में सक्षम होंगे बल्कि जल प्रबंधन में उनकी हिस्सेदारी भी बढ़ेगी। इसी प्रकार मात्रात्मक जल वितरण को प्रोत्साहित करने के लिए एनआईएमएफ किसी राज्य की आईएसएफ वसूली के उस हिस्से पर बोनस प्रदान करेगा जो आउटलेट स्तर पर जल इस्तेमालकर्ता संगठनों (डब्ल्यूयूएज़) को की गई मात्रात्मक जलापूर्ति के ज़रिये एकत्र की गई हो। इसका स्पष्ट संकेत यह है कि जल इस्तेमालकर्ता संगठनों का सशक्तीकरण जल के मूल्यन और आईएसएफ वसूली को अधिक पारदर्शिता एवं भागीदारीपूर्ण ढंग से करने की प्रक्रिया का आधार है। ये प्रस्ताव पिछले कुछ वर्षों में आंध्र प्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र और कर्नाटक में ज़मीनी स्तर पर प्राप्त अनुभवों पर आधारित हैं।

सिंचाई में भारी निवेश के परिणाम वांछित नतीजों से बहुत कम रहे हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि कमान क्षेत्र विकास की निरंतर अनदेखी की गई है और सिंचाई क्षमताओं के निर्माण से उसे अलग रखा गया है। 12वीं पंचवर्षीय योजना में कहा गया है कि इससे आगे सभी सिंचाई प्रस्तावों (बड़े, मध्यम और छोटे) में कमान क्षेत्र विकास कार्यों को

प्रारंभ से ही परियोजना के अभिन्न अंग के रूप में शामिल किया जाएगा।

2. जलवाही स्तर का भागीदारीपूर्ण प्रबंधन : भारत की सिंचाई व्यवस्था में करीब दो तिहाई योगदान भूमिगत जल का है, और घरेलू जल की 80 प्रतिशत आवश्यकताएं चूंकि भूमिगत जल से पूरी होती हैं, अत: 12वीं पंचवर्षीय योजना में भूमिगत जल के स्थाई प्रबंधन के लिए जलवाही स्तर मानचित्रण के आधार पर भागीदारीपूर्ण दृष्टिकोण अपनाने पर बल दिया गया है, जिसमें साझा-पूल संसाधन (सीपीआर) किस्म के भूमिगत जल को आधार बनाया जाएगा।

यह ऐसी सोच है जो 12वीं पंचवर्षीय योजना में शुरू किए गए भारत के जलवाही स्तरों के मानचित्रण के लिए व्यापक कार्यक्रम को नया आधार प्रदान करती है। यह सोच निम्नांकित पहलुओं पर आधारित है :

- सतही जल वैज्ञानिक इकाइयों (जलसंभर और नदी बेसिन) और भू-जल वैज्ञानिक इकाइयों, अर्थात् जलवाही स्तरों के बीच संबंध;
- जलवाही स्तर का निर्माण करने वाली व्यापक प्रस्तर-वैज्ञानिक (लिथोलॉजिकल) संरचना की ज्यामिति के बारे में कुछ विचार-जैसे विस्तार और मोटाई;
- भूमिगत जल पुनर्भरण क्षेत्रों की पहचान, जो संरक्षण और संवर्धन कार्यनीतियों का नतीजा है;
- गांव या जलसंभर के पैमाने पर भूमिगत जल संतुलन और फ़सल जल बजटिंग;
- जलवाही स्तर भंडार क्षमता सहित भूमिगत जल भंडार और पारेषण विशेषताओं के संदर्भ में प्रत्येक जलवाही स्तर पर अलग अलग भूमिगत जल मूल्यांकन;
- खुदाई, गहराई (या ट्यूबवेल अथवा बोरवेल खोदे जाने हैं या नहीं) सहित सामुदायिक स्तर पर नियामक विकल्प, कुओं के बीच दूरी (विशेषकर पेयजल स्रोतों के बारे में), फ़सल पद्धति, जो न केवल स्रोत (कुआं/ट्यूबवेल) की बल्कि संसाधन (जलवाही स्तर) की स्थिरता सुनिश्चित करती है और इस बात को ध्यान में रखते हुए कि सभी संबद्ध पक्षों में भूमिगत जल का वितरण समानता के सिद्धांत पर किया जाए, जलवाही स्तर की समझ के आधार पर भूमिगत जल के भागीदारीपूर्ण प्रबंधन के लिए व्यापक योजना।

12वीं पंचवर्षीय योजना में शुरू किए जा रहे राष्ट्रीय जलवाही स्तर प्रबंधन कार्यक्रम में इनमें से प्रत्येक पर ध्यान केंद्रित किया जाएगा।

3. भूमिगत जल-ऊर्जा गठजोड़ को तोड़ना : देश के अधिकतर भागों में जल स्तरों की स्थिति बिगाड़ने में कृषि के लिए बिजली सब्सिडी की वर्तमान व्यवस्था की मुख्य भूमिका रही है। इन्हीं बिजली सब्सिडियों के कारण हरित क्रांति आई थी लेकिन भूमिगत जल पर बढ़ते दबावों को देखते हुए, एक रचनात्मक मार्ग ढूंढने की आवश्यकता है, जो किसानों के हितों को नुक़सान पहुंचाए बिना भूमिगत जल-ऊर्जा गठजोड़ को समाप्त कर सके। राज्यों द्वारा तलाश किया गया सर्वाधिक कारगर और एकमात्र समाधान यह रहा है कि अनवरत दिन-रात की सुविधा के साथ ग्रामीण बस्तियों और गैर-कृषक उपभोक्ताओं को बिजली आपूर्ति करने वाले पावर फीडरों को भौतिक दृष्टि से पृथक कर दिया जाए और खेती के लिए 3-फेज पूर्वानुमेय आपूर्ति देने वाले पृथक फीडर लगाए जाएं, जो एम समान शुल्क दर के साथ कुल समय के संदर्भ में नियंत्रित हों। इस व्यवस्था से स्कूलों, अस्पतालों और गैर-कृषि अर्थव्यवस्था के लिए अपेक्षित बिजली उपलब्ध हो सकेगी और जबकि खेती के लिए नियंत्रित आपूर्ति की जा सकेगी, और जो व्यस्त घंटों से इतर की जा सकेगी। उदाहरण के लिए गुजरात सरकार ने 2003-06 के दौरान 8 लाख ट्यूबवेलों को अन्य ग्रामीण कनेक्शनों से पृथक करने के लिए 125 करोड़ अमरीकी डॉलर का निवेश किया और 8 घंटे/प्रतिदिन की नियंत्रित लेकिन उच्च गुणवत्तापूर्ण और पूर्ण वोल्टेज के साथ बिजली आपूर्ति व्यवस्था लागू की। इसके साथ ही भूमिगत जल के पुनर्भरण के लिए व्यापक जलसंभर विकास कार्यक्रम शुरू किया गया। इसके विशुद्ध परिणाम इस प्रकार रहे :

(क) विद्युत सब्सिडी आधी हो गई; (ख) भूमिगत जल का स्तर स्थिरीकरण हुआ; और (ग) ग्रामीण अर्थव्यवस्था में बिजली आपूर्ति में सुधार आया। अन्य उपायों जैसे विशेष रूप से डिजाइन किए गए ट्रांसफार्मरों के ज़रिये उच्च वोल्टेज वितरण प्रणाली अपनाना और ऊर्जा-सक्षम पम्पसेटों की संस्थापना, के साथ मिला कर देखें तो यह बिजली सब्सिडी वितरित करने का बेहतर तरीका है और इससे ऊर्जा की हानि रोकने और साथ ही जल-स्तर को स्थिर बनाने में मदद मिलती है। 12वीं पंचवर्षीय योजना में प्रमुख निवेश इसी दिशा में करने का प्रस्ताव है।

4. जलसंभर बहाली और भूमिगत जल पुनर्भरण : हमारी सिंचाई प्रणालियों की कार्यक्षमता और स्थिरता में सुधार की आवश्यकता पर बल देते हुए भी, 12वीं पंचवर्षीय योजना में इस तथ्य पर पूरा ध्यान दिया गया है कि राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा की मांग इस बात की आवश्यकता को अनिवार्य बनाती है कि हमारे वर्षा आधारित क्षेत्रों की उत्पादकता में महत्वपूर्ण बढ़ोतरी की जाए।[1] इसके लिए प्राथमिक आवश्यकता है जल संभरों के जीर्णोद्धार और भूमिगत जल के पुनर्भरण के लिए व्यापक कार्यक्रम चलाया जाए। 12वीं पंचवर्षीय योजना में मनरेगा को देश के सबसे बड़े जलसंभर कार्यक्रम में रूपांतरित करने का प्रस्ताव है जिससे सुविचारित समेकित जलसंभर प्रबंधन कार्यक्रम (आईडब्ल्यूएमपी), जो 11वीं पंचवर्षीय योजना में शुरू किया गया था, को नया बल मिलेगा। 12वीं योजना के अंतर्गत जल निकायों की मरम्मत, अनुरक्षण और जीर्णोद्धार नाम का एक नया कार्यक्रम शुरू करने का भी प्रस्ताव है।

5. ग्रामीण पेयजल और स्वच्छता के प्रति नया दृष्टिकोण : इस तथ्य को देखते हुए कि एक ही जलवाही स्तर का इस्तेमाल सिंचाई और पेयजल दोनों के लिए किया जा रहा है और ऐसा करते समय संसाधन के समन्वित प्रबंधन की कोई व्यवस्था नहीं है, पेयजल की उपलब्धता पर विपरीत असर पड़ा है। वास्तव में हम एक 'अपरिमित दुष्चक्र' (विटगेंस्टेन, 1953 सेक. 239) परिदृश्य में फंसने के करीब पहुंच गए हैं, जहां एक समस्या दूर करने के प्रयास में प्रस्तावित समाधान वैसी ही अन्य समस्या पैदा करता है। ऐसे में अगर आप उसी पर अमल करते रहे, तो प्रारंभिक समस्या में अपरिमित वृद्धि हो जाएगी और उसका समाधान कभी नहीं होगा। यह उल्टी चाल एक ''हाइड्रोसिजोफ्रेनिया''

1. पहली बार यह तर्क सी शाह और अन्य (1998) द्वारा दिया गया, बाद में इसे गोल (2006) में अद्यतन किया गया।

(यानी जल के प्रति खंडित मानसिकता) का स्वाभाविक परिणाम लगती है (लल्मास और मार्टिनेज-सेंटोज़, 2005; जार्विस और अन्य, 2005), जिसमें जल जैसे आविभाज्य संसाधन के प्रति एक मनोभाजित दृष्टिकोण अपनाया जाता है और यह दृष्टि जल वैज्ञानिक चक्र की एकता और अखंडता को पहचानने में विफल रहती है। इस तरह सिंचाई के लिए खोदे जा रहे ट्यूबवेल ज़्यादा से ज़्यादा जलवाही स्तरों को सुखा रहे हैं, जिनका इस्तेमाल पेयजल के लिए किया जा रहा है।

दूसरी तरफ, स्वच्छता के साथ समाभिरूपता के अभाव के कारण जल की गुणवत्ता से समझौता करना पड़ता है, यहां तक कि परिष्कृत स्वच्छता सुविधाओं का प्रावधान करना भी कठिन हो जाता है। भूमिजन्य निक्षालन (आर्सेनिक और लुराइड) के कारण भी जल की गुणवत्ता पर रासायनिक दुष्प्रभाव पड़ता है।

पेयजल कार्यक्रम में इन दोषों की समझ एक नया दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रेरित करती है, जो आनुषंगिकता के सिद्धांत पर आधारित है, जिसमें इन समस्याओं का यथासंभव यथार्थ समाधान निकालने का प्रयास किया जाता है। जलापूर्ति कार्यक्रमों के बारे में स्थान, कार्यान्वयन, स्थिरता, प्रचालन एवं रख-रखाव और प्रबंधन संबंधी निर्णय स्थानीय जलापूर्ति और स्वच्छता समितियों को सौंपे जाते हैं जो प्रभावकारी कार्यान्वयन के लिए ग्राम पंचायतों की देखरेख में काम करती हैं। एक प्रबंधन हस्तांतरण सूचकांक (एमडीआई) के ज़रिये ग्राम पंचायतों के पदाधिकारियों को किए जाने वाले कार्यों और धन का अधिक महत्वपूर्ण हस्तांतरण किया जा सकता है और उन्हें प्रेरित किया जा सकता है। अपरिमित वापसी के दुष्चक्र की समस्या का समाधान जलवाही स्रोतों के स्थाई एवं भागीदारीपूर्ण प्रबंधन का दृष्टिकोण अपना कर ही किया जा सकता है। यह दृष्टिकोण अपनाने से पेयजल के बाएं हाथ को यह जानकारी रहेगी कि सिंचाई का दायां हाथ क्या कर रहा है।

पेयजल आपूर्ति और स्वच्छता कार्यक्रम के बीच समाभिरूपता को सुदृढ़ करने के लिए कवर किए जाने वाले गांवों में पाइप के ज़रिये जलापूर्ति शुरू की जानी चाहिए ताकि प्राथमिकता के अनुसार खुले में शौच जाने की प्रवृत्ति से मुक्ति दिलाई जा सके। उत्सर्जित जल का उपचार और रिसाइकलिंग प्रत्येक जलापूर्ति योजना या परियोजना का अभिन्न अंग होगा। तरल और ठोस क़चरे के प्रबंधन को एक साथ बढ़ावा देना होगा, जिसमें उपचारित उत्सर्जित जल का पुन: इस्तेमाल खेती और भूमिगत जल पुनर्भरण एवं प्रदूषण नियंत्रण के लिए किया साथ किया जाएगा। यह कार्य निर्मल ग्राम पुरस्कार (एनजीपी) विजेता गांव में प्राथमिकता के आधार पर किया जाएगा।

संपूर्ण स्वच्छता अभियान 1999 में एक मांग आधारित, समुदाय-संचालित कार्यक्रम के रूप में शुरू किया गया था लेकिन इस कार्यक्रम की सफलता संतोषजनक नहीं रही। आज भी करीब 60 करोड़ लोगों का खुले में शौच जाना हमारे लिए सबसे बड़ा राष्ट्रीय कलंक है। जनगणना के ताज़ा आंकड़ों से पता चलता है कि ग्रामीण भारत में 2011 में टेलीविजन और टेलीफोन रखने वाले परिवारों का प्रतिशत शौचालय सुविधाएं और पाइप जलापूर्ति सुविधा रखने वाले परिवारों के प्रतिशत से अधिक था। संपूर्ण स्वच्छता कार्यक्रम के अंतर्गत गरीबी की रेखा से ऊपर (एपीएल)-गरीबी की रेखा से नीचे (बीपीएल) के भेदभाव और प्रोत्साहन राशि बहुत कम होने जैसे कारणों से यह कार्यक्रम सफल नहीं हो पाया।

इस प्रकार 12वीं पंचवर्षीय योजना में प्रमुख कार्यनीतिक बदलाव प्रस्तावित किए गए हैं। इसके अंतर्गत एपीएल-बीपीएल भेदभाव और अलग-अलग शौचालयों पर ध्यान केंद्रित करने के स्थान पर आबादी परिपूर्णता दृष्टिकोण अपनाया गया है। इसके पीछे विचार यह है कि लक्ष्य हासिल करने की अंधी दौड़ में गुणवत्ता और नतीजों की स्थिरता का त्याग न करना पड़े, भले ही सबके लिए सुविधाएं पहुंचाने की गति धीमी हो। मनरेगा के साथ समाभिरूपता के ज़रिये पृथक पारिवारिक शौचालयों के लिए यूनिट लागत सहायता बढ़ा कर 10,000 रुपये कर दी गई है। स्थानीय सामाजिक और पारिस्थितिकीय मानदंडों के अनुसार शौचालयों का डिज़ाइन बेहतर बनाया जाएगा। स्थिर परिणामों पर अधिक ध्यान केंद्रित करने के लिए कार्यक्रम को चरणबद्ध तरीक़े से लागू किया जाएगा, जिसमें स्वच्छता और जलापूर्ति के प्रति संयुक्त दृष्टिकोण के परिभाषित मानदंड के आधार पर ग्राम पंचायतों की पहचान की जाएगी ताकि निर्मल ग्राम पुरस्कार का दर्ज़ा हासिल किया जा सके। कार्यक्रम की परिणति निर्मल ब्लॉकों, निर्मल जिलों और अंतत: निर्मल राज्यों तक पहुंचाने का लक्ष्य रखा गया है।

6. शहरी भारत में पेयजल और उत्सर्जित जल का संयुक्त प्रबंधन : सुरक्षित पेयजल और उत्सर्जित जल का प्रबंधन संभवत: शहरी भारत में सबसे बड़ी चुनौतियां हैं। यदि हम शहरी जलापूर्ति और कचरा प्रबंधन के स्थाई समाधान की दिशा में आगे बढ़ना चाहते हैं तो 12वीं पंचवर्षीय योजना के दौरान तत्संबंधी कार्यनीति में महत्वपूर्ण बदलाव अनिवार्य है। इस बारे में निम्नांकित बातें विचारणीय हैं :

1. जलापूर्ति में निवेशों के अंतर्गत मांग प्रबंधन, शहर के भीतर असमानता कम करना, और आपूर्ति किए गए जल की गुणवत्ता जैसे मुद्दों पर अवश्य ध्यान केंद्रित किया जाना चाहिए। इसके लिए शहरों को ऐसी योजना तैयार करनी होगी जिसमें बल्क वाटर मीटरों के ज़रिये वितरण में होने वाली क्षति रोकी जा सके। पानी के सदुपयोग के प्रति जागरुकता पैदा करने के लिए सक्षमता अभियान चलाने की भी आवश्यकता है। प्रचालन और अनुरक्षण लागत में निरंतर वृद्धि को देखते हुए जल उपयोग प्रभार तय किए जाने चाहिए। नि:शुल्क जल की मात्रा की सीमा निर्धारित की जानी चाहिए और उससे अधिक पानी का इस्तेमाल करने वालों से अधिक शुल्क वसूल किया जाना चाहिए।

2. प्रत्येक शहर को जलापूर्ति के प्रथम स्रोत के रूप में अपने स्थानीय जल निकायों पर विचार करना चाहिए। अत: शहरों को जल परियोजनाओं के लिए धन तभी दिया जाना चाहिए, जब वे स्थानीय जल निकायों से जलापूर्ति की जिम्मेदारी लें और स्थानीय जल निकायों और उनके जल ग्रहण क्षेत्रों को संरक्षित करें। यह पूर्व शर्त जल संरक्षण को बढ़ावा देगी और इससे एक ऐसे ढांचे का निर्माण होगा जो स्थानीय आधार पर जलापूर्ति करेगा और मल-जल का भी स्थानीय रूप में प्रबंधन करेगा। इसके अंतर्गत जलापूर्ति और उत्सर्जित जल की वापसी के लिए अलग अलग पाइप लाइनों की व्यवस्था करनी होगी।

3. मल-जल घटक की व्यवस्था से रहित कोई जलापूर्ति कार्यक्रम मंजूर नहीं किया जाना चाहिए। 'पूर्ण कवरेज और लागत' की योजना बनाने के लिए शहरों को उत्सर्जित जल के उपचार के लिए गैर-परंपरागत

पद्धतियां अपनानी होंगी। उदाहरण के लिए शहर मल-जल का उपचार खुली नालियों में करने पर विचार कर सकते हैं और उत्सर्जित जल के उपचार के लिए वैकल्पिक जैविक पद्धतियों का इस्तेमाल कर सकते हैं। इसमें यह सिद्धांत अपनाना होगा कि मल-जल प्रणाली के निर्माण की लागत में कमी आए, मल-जल नेटवर्क की लंबाई कम हो और उत्सर्जित जल का उपचार एक संसाधन के रूप में किया जाए, जिसमें मल-जल को सिंचाई या उद्योग में पुनः इस्तेमाल के योग्य बनाया जा सके। भारतीय शहरों के पास मल के प्रबंधन के ऐसे नये तौर-तरीके अपनाने के अवसर हैं, जो सस्ते और टिकाऊ हों क्योंकि उन्होंने अभी इसके लिए ढांचे का निर्माण नहीं किया है।

शहरों को अपनी जल और उत्सर्जित जल योजना के शुरू में ही गंदे पानी के पुनः इस्तेमाल और री-साइकलिंग की योजना अवश्य बनानी चाहिए और इसके लिए बाद में सोचने का विकल्प नहीं होना चाहिए। पुनः इस्तेमाल के विविध विकल्प अवश्य होने चाहिए जैसे खेती में इस्तेमाल, जल निकायों के पुनर्भरण के लिए इस्तेमाल, उद्यानों की सिंचाई और औद्योगिक एवं घरेलू इस्तेमाल।

7. औद्योगिक जल : जैसे-जैसे अर्थव्यवस्था का उद्योगीकरण हो रहा है, यह अत्यंत महत्वपूर्ण है कि उद्योग अपनी जल इस्तेमाल सक्षमता में सुधार के लिए सर्वोत्कृष्ट अंतर्राष्ट्रीय पद्धतियां अपनाए। इसमें मुख्य रूप से दो तरीक़े अपनाए जा सकते हैं :

- वैकल्पिक जल सक्षम प्रौद्योगिकियों अथवा विभिन्न विनिर्माण गतिविधियों में प्रक्रियाओं के ज़रिये ताज़ा जल की खपत में कमी लाना;
- जल सघन गतिविधियों से उत्सर्जित जल का पुनः इस्तेमाल और री-साइकलिंग और पुनः प्राप्त किए गए जल को उद्योग के भीतर या बाहर गौण गतिविधियों के लिए इस्तेमाल हेतु उपलब्ध कराना।

यह प्रस्ताव किया गया है कि कंपनियों के लिए यह अनिवार्य बनाया जाए कि वे हर वर्ष अपनी वार्षिक रिपोर्ट में वर्ष के लिए जल फुटप्रिंट का ब्यौरा शामिल करें। इसमें निम्नांकित बातें शामिल होंगी :

- उनके द्वारा विभिन्न उत्पादन गतिविधियों में प्रयुक्त (गतिविधिवार) ताज़े जल की मात्रा (स्रोतवार)।
- उनके द्वारा प्रयुक्त उस जल की मात्रा जो पुनः इस्तेमाल किया गया हो या री-साइकिल किया गया हो (गतिविधिवार)।
- इस बात की समयबद्ध प्रतिबधता कि कंपनी अपने जल फुटप्रिंट में एक निर्धारित अवधि (निर्दिष्ट की जाए) के भीतर निश्चित मात्रा (निर्दिष्ट की जाए) में कमी लाएगी।

8. बाढ़ प्रबंधन के लिए गैर-संरचनागत व्यवस्थाओं पर फिर से ध्यान केंद्रित करना

बाढ़ की समस्या के समाधान के लिए पिछले वर्षों में इंजीनियरी/संरचनागत समाधानों पर अधिक ध्यान केंद्रित किया जाता रहा है। बड़े बांधों के निर्माण में व्यापक निवेश के अलावा भारत 35,000 किमी तटबंधों का निर्माण कर चुका है लेकिन, उनकी सीमा तेज़ी से समाप्त होती जा रही है। उदाहरण के लिए हाल में किए गए अध्ययनों से पता चलता है कि ''ज़्यादातर प्रायद्वीपीय नदियों में डिज़ाइन किया गया वर्तमान भंडारण ढांचा 10 वर्षों में लगभग 9 वर्ष के लिए दक्षिण-पश्चिम मानसून के सुचारू प्रवाह को अंजाम दे पाता है। इस प्रकार 10 वर्ष में 1 वर्ष बाढ़ आ सकती है, लेकिन उसके लिए व्यापक अतिरिक्त ढांचा बनाने में निवेश करने का कोई आर्थिक औचित्य नहीं है। इसकी बजाय मौसम और बाढ़ के बारे में पूर्वानुमान प्रणाली को बेहतर बनाने की आवश्यकता है। साथ ही, बाढ़ बीमा और संभव हो तो बाढ़ वाले क्षेत्रों का निर्धारण किया जा सकता है, जहां किसानों से अस्थाई (मुआवजे की व्यवस्था के साथ) तटबंध बनाने को कहा जा सकता है ताकि बाढ़ के प्रवाह को समेटा जा सके।

कुछ राज्य सरकारों (जैसे बिहार) ने बाढ़ से निपटने के लिए अपनी रणनीति को व्यापक बनाने का फ़ैसला किया है। इसके अंतर्गत परंपरागत, प्राकृतिक निकासी प्रणालियों के पुनर्वास पर अधिक ध्यान दिया जा रहा है और इसके लिए मनरेगा के अंतर्गत उपलब्ध धन (समाज प्रगति सहयोग और मेघ-पीएं अभियान, 2012) का इस्तेमाल किया जा रहा है। इसमें सामाजिक एकजुटता और सामाजिक इंजीनियरी की जटिल प्रक्रिया को देखते हुए सिविल संगठनों को राज्य सरकार के साथ मिल कर काम करना होता है। 12वीं पंचवर्षीय योजना की कार्यनीति बाढ़ प्रबंधन में ऐसे नये दृष्टिकोण अपनाने की अनुमति देती है, जो अधिक से अधिक तटबंध बनाने से परे हों और ''नदी के लिए स्थान''[2] देने की नीति पर आधारित हो।

9. नया संस्थागत फ्रेमवर्क

राज्यस्तरीय विनियामक

12वीं पंचवर्षीय योजना में एक ऐसे संस्थागत फ्रेमवर्क विकसित करने की आवश्यकता पर बल दिया गया है जो कानूनी व्यवस्था से समर्थित हो, और जिसके अंतर्गत ऐसे नियामक बनाने की सुविधा हो, जो जल विवादों का समाधान करने में सक्षम हो।

नियामक द्वारा जल की गुणवत्ता, पर्यावरण और स्वास्थ्य के लिए तय किए गए मानकों को शुल्क के साथ जोड़ा जाएगा। शुल्क का अंतिम निर्धारण निश्चित रूप से राजनीतिक होगा, लेकिन नियामक शुल्क के निर्धारण के लिए उद्देश्य के आधार पर सरकार को सलाह देने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करेंगे (ऐसे ही जैसे सीएसीपी कृषि मूल्यों के बारे में सलाह देता है)। इसमें पेयजल की बुनियादी आवश्यकता और पर्यावरण की ज़रूरतों को निर्धारित करने और पारदर्शितापूर्ण ढंग से सुनिश्चित करने के लिए एक 'रिजर्व' (जैसा कि उदाहरण के लिए इसे दक्षिण अफ्रीका में कहा जाता है)[3] की आवश्यकता होती है। इस स्तर के निर्धारण के लिए एक स्वतंत्र नियामक की आवश्यकता पड़ती है, जो पारदर्शिता, जवाबदेही और भागीदारीपूर्ण तरीक़े से अपेक्षित प्रक्रियाओं और क्रियाविधियों को संचालित करता है।

10. नया कानूनी फ्रेमवर्क

नया भूमिगत जल कानून

जलवाही स्तर प्रबंधन पर आधारित भूमिगत जल के स्थाई और समानतापूर्ण प्रबंधन के लिए एक नये कानूनी फ्रेमवर्क की आवश्यकता है, जो इस दिशा में प्रयासों

2. रूम फार द रीवर, बाढ़ प्रबंधन हॉलैंड की नयी नीति है, जो बांध को मज़बूत करने की बजाय नदी राहत पर निर्भर है (नीदरलैंड सरकार, 2007, क्लाइमेट वाइर, 2012)

3. दक्षिण अफ्रीका में 'रिजर्व' एक ऐसा प्रयास है, जिसके अंतर्गत देश की नदियों में न्यूनतम प्रवाह की मात्रा निर्धारित करने का प्रयास किया जाता है और बुनियादी पारिस्थितिकी कार्यों (जैसे मछली और पौधों के परिवास के लिए) के रख रखाव के लिए कुर्की की व्यवस्था है। इस उपाय का लक्ष्य यह सुनिश्चित करना है कि दक्षिण अफ्रीका की आबादी को घरेलू उद्देश्यों के लिए हर रोज प्रति व्यक्ति 25 लीटर पानी मिल सके। रिजर्व यह तय करने का एक प्रयास है कि नुकसान का कितना स्तर स्वीकार्य है न कि यह तय करना कि 'पर्यावरण' की कितनी आवश्यकता है।

का समर्थन कर सके। 12वीं पंचवर्षीय योजना में भूमिगत जल के संरक्षण, संवर्धन, प्रबंधन और विनियमन के लिए नया मॉडल विधेयक प्रस्तावित किया गया है। यह इस विचार पर आधारित है कि भूमिगत जल का संरक्षण इस संसाधन के दीर्घावधि प्रबंधन के स्थायित्व की कुंजी है, अतः इसे एक फ्रेमवर्क में रख कर देखा जाना चाहिए, जिसमें जीविकाओं और पेयजल की बुनियादी आवश्यकताओं को प्रमुख महत्व दिया जाए।

राष्ट्रीय जल फ्रेमवर्क कानून

राष्ट्रीय जल फ्रेमवर्क कानून का मसौदा तैयार करने वाले 12वीं पंचवर्षीय योजना के उप समूह ने कहा है कि भारतीय संविधान के अंतर्गत जल मुख्य रूप से राज्य का विषय है, लेकिन निम्नांकित संदर्भ में इसका राष्ट्रीय सरोकार बढ़ता जा रहा है :

(क) पानी का अधिकार जीवन के मौलिक अधिकार का हिस्सा है;

(ख) जल संकट के उभरने को देखते हुए;

(ग) पानी के अंतर-राज्य इस्तेमाल और उससे उत्पन्न अंतर-राज्य संघर्षों को देखते हुए, और जल-हिस्सेदारी सिद्धांतों के बारे में एक राष्ट्रीय सहमति की आवश्यकता और संघर्षों को कम करने और उनके शीघ्र समाधान के लिए व्यवस्थाओं को देखते हुए;

(घ) जल के विभिन्न इस्तेमालों से व्यापक उत्सर्जित जल और गंभीर प्रदूषण एवं उससे उत्पन्न विषाक्तता के ख़तरे को देखते हुए;

(ङ) मानव उपयोग के लिए जल की उपलब्धता बढ़ाने के प्रयासों की दीर्घावधि पर्यावरण, पारिस्थितिकी विषयक और सामाजिक जटिलताओं को देखते हुए;

(च) इस्तेमालों, इस्तेमालकर्ताओं, क्षेत्रों, राज्यों, देशों और पीढ़ियों के बीच जल के वितरण, उपयोग और नियंत्रण की समानता संबंधी जटिलताएं;

(छ) कुछ भारतीय नदियों के अंतर्राष्ट्रीय आयामों को देखते हुए; और

(ज) जल पर जलवायु परिवर्तन के प्रभाव के बारे में उभरती चिंताओं और स्थानीय, राष्ट्रीय, क्षेत्रीय और वैश्विक स्तरों पर उनके समाधान के लिए समुचित कार्रवाई की आवश्यकता को देखते हुए।

पर्यावरण, वन, वन्य जीव, जैव विविधता जैसे विषयों पर यदि राष्ट्रीय कानून अनिवार्य समझा जाता है तो जल के बारे में राष्ट्रीय कानून बनाना और भी अनिवार्य है। जल उन विषयों के समान ही (अगर अधिक नहीं तो) बुनियादी मुद्दा है। अंततः राष्ट्रीय जल कानून का विचार कोई असामान्य या अभूतपूर्व नहीं है। विश्व के अनेक देशों में राष्ट्रीय जल कानून या संहिताएं हैं, और उनमें से कुछ (जैसे दक्षिण अफ्रीकी राष्ट्रीय जल अधिनियम, 1998) कानूनों को व्यापक रूप से सुविचारित समझा गया है। इसी प्रकार यूरोपीयन वाटर फ्रेमवर्क डायरेक्टिव, 2000 भी एक जल विधान है।

इस तरह राष्ट्रीय जल फ्रेमवर्क कानून का प्रारूप तैयार करने के लिए इस कानून के स्वरूप और क्षेत्र को स्पष्ट करना अत्यंत महत्वपूर्ण है :

- जो कुछ प्रस्तावित किया जा रहा है वह केंद्रीय जल प्रबंधन कानून या कोई कमान एवं नियंत्रण संबंधी कानून नहीं है, बल्कि एक फ्रेमवर्क कानून है यानी केंद्र, राज्यों और स्थानीय स्वशासी संस्थानों द्वारा इस्तेमाल किए जाने वाले विधायी और/या कार्यकारी (या हस्तांतरित) अधिकारों को शासित करने वाले सामान्य सिद्धांतों का एक समूह है।
- कानून इस अर्थ में युक्तिसंगत होना चाहिए कि केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा पारित कानून और प्रशासनिक कार्रवाइयां तथा पंचायती राज संस्थानों को हस्तांतरित कार्य सामान्य सिद्धांतों और फ्रेमवर्क कानून में निर्धारित की गई प्राथमिकताओं के अनुरूप होने चाहिए। इसमें यदि कोई विचलन हो तो उसे अदालत में चुनौती देने की व्यवस्था होनी चाहिए।
- ऐसे कानून में जल को सार्वजनिक न्यास सिद्धांत के रूप में स्वीकार करते हुए उच्चतम न्यायालय द्वारा की गई सभी प्रमुख वैधानिक घोषणाओं को शामिल किया जाना चाहिए और उसमें जल को बुनियादी अधिकार के रूप में स्वीकार किया गया हो और साथ ही पूरकता के सिद्धांत का अनुपालन हो, जैसा कि 73वें और 74वें संविधान संशोधन में स्पष्ट किया गया है। इसमें निवारक और ऐहतियाती सिद्धांतों, जिन्हें हाल ही में नेशनल हरित ट्राइब्यूनल अधिनियम, 2010 में कानूनी रूप में मान्यता दी गई, और सूचना अधिकार अधिनिमय, 2005 के पारदर्शिता सिद्धांतों को भी शामिल किया जाना चाहिए।

केंद्र और राज्यों के बीच विधायी अधिकारों के विभाजन की वर्तमान संवैधानिक व्यवस्था के अनुसार राष्ट्रीय जल फ्रेमवर्क कानून केवल संविधान के अनुच्छेद 252 (1) में निर्धारित प्रक्रिया का अनुपालन करके ही बनाया जा सकता है। अर्थात् यदि दो या अधिक राज्य विधानसभाएं संसद द्वारा ऐसा कानून अधिनियमित करने के समर्थन में प्रस्ताव पारित करें तो संसद तदनुसार कानून बना सकती है।

निष्कर्ष :

12वीं पंचवर्षीय योजना में इस बहुआयामी बदलाव को मूर्त रूप देने में व्यापक प्रारंभिक चुनौतियां हैं। कई मायनों में इस बदलाव की मांग लंबे समय से की जा रही थी।

इस नये दृष्टिकोण को कार्यरूप देना और भी कठिन है लेकिन इस तथ्य से उम्मीद बंधती है कि परिवर्तन के बारे में समझौते की प्रक्रिया गहन रूप में समावेशी है और इसका प्रस्ताव महत्वपूर्ण संयोजकों, विशेष कर राज्य सरकारों की ओर से किया गया है। इस परिवर्तन को अमल में लाना केंद्रीय योजना का हिस्सा है और इस आलेख में व्यक्त किए गए सर्वाधिक नवीन विचार राज्यों से मिले बेहतर शासन के उदाहरणों पर आधारित हैं।

यह भी एक तथ्य है कि उभरते जल संकट निचले स्तर से परिवर्तन की गति पर दबाव डाल रहे हैं। अनेक संबद्ध पक्ष परंपरागत तरीक़े से कार्य जारी रखने के इच्छुक नहीं हैं। फिर भी आगे का रास्ता लंबा और कठिन है, जिसमें निहित स्वार्थों और हठ धर्मिता रखने वाले तत्वों से भी संघर्ष करना होगा। इसके लिए सिविल सोसायटी, शिक्षाविदों और सरकार को मिलकर काम करना होगा ताकि 12वीं पंचवर्षीय योजना के एजेंडे को रूपांतरित किया जा सके। यदि इस कार्य में सफलता प्राप्त करनी है तो इसके कार्यान्वयन में स्थानीय समुदायों की घनिष्ठ भागीदारी अनिवार्य होगी। ❑

(लेखक योजना आयोग में सदस्य हैं और जल-संसाधन, ग्रामीण विकास तथा विकेंद्रित शासन विभागों से संबद्ध हैं एवं राष्ट्रीय सलाहकार परिषद के भी सदस्य हैं।

ई-मेल : mihir.shah@nic.in)

भारत की भू-नीति में सुधार

● मैत्रीश घटक
परीक्षित घोष
दिलीप मुखर्जी

भारत जिस तरह पिछले एक दशक से उच्च वृद्धि दर पाने के लिए आर्थिक मंदी से बचने में संघर्षरत है उससे यह स्पष्ट होता है कि इससे हमारे आर्थिक भविष्य का एक महत्वपूर्ण आधार भूमि संबंधित समस्याओं से निपटने का रवैया होगा। ऐसा होने के दो बड़े कारण हैं।

प्रथमत: संसाधनों का कृषि से निर्माण और सेवाओं में स्थानांतरित होना विकास के लिए अनिवार्य शर्त है। यह संरचनात्मक परिवर्तन कारखानों को चलाने के लिए कामगारों को पर्याप्त अधिशेष देने के लिए कृषि की उत्पादकता में तेज़ी से सुधार के बिना हासिल नहीं किया जा सकता।

कम पैदावार वाली भारतीय कृषि में भूमि बाज़ारों की खामियों जैसे- असमानता, विखंडन, अच्छे भूमि आंकड़ों की कमी, असुरक्षित तथा ग़लत रूप से परिभाषित संपत्ति अधिकार, किरायेदारी का हतोत्साहन, और जमानत के रूप में भूमि का गौण उपयोग करने में असमर्थता के लिए नेतृत्व की कमी, आदि के साथ अभी बहुत से क्षेत्रों में समाधान ढूंढ़ने का प्रयास करना होगा। उत्पादकता बढ़ाने के लिए जब तक कोई कदम उठाया जाता है भोजन की आपूर्ति एक गंभीर अड़चन बन सकती है।

इसका दूसरा और मुख्य कारण है, हमारी बड़ी जनसंख्या भूमि पर निर्भर है और इसकी एकाग्रता उपजाऊ क्षेत्रों में है। भारत में, गैर-कृषि उत्पादन को खेत की कीमत में बड़े पैमाने पर स्थान मिलना चाहिए। 'नर्मदा बचाओ आंदोलन' से 'सिंगुर' तक भूमि अधिग्रहण के लिए कड़ा प्रतिरोध पिछले एक दशक से अब तक देश भर में फैला है। यह परिपक्व होते लोकतंत्र की निशानी है कि विकास के नाम पर अब गरीबों को बेदखल करना आसान नहीं रहा।

इसका मतलब यह नहीं है कि समस्याओं की पहचान नहीं हुई या विधायी प्रयास नहीं किए गए। सरकार द्वारा पारित किए गए दो महत्वपूवर्ण कानूनों, खाद्य सुरक्षा और भूमि अधिग्रहण के साथ भूमि सुधार पर एक नया कानून पारित किया जाना है वो है 'भूमि अधिग्रहण अधिनियम' जो अभी प्रक्रिया में है।

भूमि अधिग्रहण विधेयक

भारत में अब तक सन् 1894 के भूमि अधिग्रहण अधिनियम के ढांचे को ही मुख्यत: स्वीकार किया गया है। यह कानून, सर्कल दरों और हाल में दर्ज बिक्री के दस्तावेजों के आधार पर भूमि के लिए स्थानीय बाज़ार मूल्य के बराबर आवश्यक मुआवज़ा देने की बात करता है। नया कानून तीन महत्वपूर्ण बदलाव लाता है।

पहला, मुआवज़े को बहुत बढ़ाया जाना है—शहरी क्षेत्रों में बाज़ार मूल्य का दोगुना और ग्रमीण क्षेत्रों में चार गुना तक। दूसरा, ज़मीन मालिकों के साथ ही 'आजीविका गवांने वाले- (विशेष रूप से बटाईदार और ज़मीन से आजीविका चलाने वाले मज़दूर) अब राहत और पुनर्वास पैकेज के हकदार है।

तीसरा, प्रक्रियात्मक बाधाओं को उठाया गया है-निजी कंपनियों के मामले में अधिग्रहण को अब ज़्यादा समितियों से और अधिक मंजूरी की ज़रूरत है और इससे प्रभावित होने वाली आबादी की कम से कम 70 फीसदी की सहमति आवश्यक है।

नये कानून का मूल्यांकन करने के लिए, सबसे पहले यह समझना आवश्यक है कि पुराने में क्या कमी थी। सीधे शब्दों में कहें, बाज़ार भाव पर मुआवजा एक गहरा त्रुटिपूर्ण सिद्धांत है। भूमि के बाज़ार भाव और स्वामी को भूमि से मिल रहे मूल्य के बीच भ्रमित नहीं होना चाहिए। दूसरा मूल्य फसल उत्पादन, परिवार श्रम, खाद्य सुरक्षा, गौण स्तर पर प्रयोग, मुद्रास्फीति और सामाजिक स्थिति के खिलाफ संरक्षण सहित कई कारकों से निकला है। भूमि का मूल्य (जिस कीमत पर मालिक स्वयं देना चाहते हैं) विशिष्ट है और जो मालिकों के अनुसार काफी भिन्न होता है। यहां तक कि अच्छी तरह से काम करने वाले भूमि बाज़ार के साथ, कई मालिक भूमि की कीमत बाज़ार भाव से अधिक रखना बंद कर देंगे। यह ठीक है क्योंकि उन्होंने पहले ही इसे नहीं बेचा।

मुआवजे के लिए एक प्रतीक के रूप में पिछले लेन-देन की कीमतों पर आधारित बाज़ार मूल्य के निर्धारण के दो अतिरिक्त कारण हैं। बड़ी मात्रा में खेत का अधिग्रहण स्थानीय कृषि अर्थव्यवस्था के लिए एक आपूर्ति झटका है जो मांग और आपूर्ति के सामान्य नियमों द्वारा ज़मीन की कीमतें और किराए बढ़ा देगा। यदि ज़मीन की कीमतें काफी तेज़ी से बढ़ रहीं हैं तो पुरानी कीमतें पर्याप्त नहीं हैं क्योंकि विस्थापित मालिक कृषि भूमि के शेष राशि के बराबर कृषि क्षेत्र वापिस खरीदने में सक्षम नहीं हैं। परियोजना स्वयं अपनी आर्थिक गिरावट के माध्यम से भूमि मूल्य वृद्धि पैदा कर देती है और क्षेत्र में खासकर सहायक उद्योगों को आकर्षित करती है। हाल में, लेन-देन की दर्ज की गई कीमतों पर भरोसा नहीं करने का एक अतिरिक्त कारण यह है कि भारत में अक्सर वास्तविक लेन-देन की कीमतों पर स्टांप शुल्क से बचने के लिए उन्हें दर्ज नहीं कराया जाता।

इस चर्चा के आलोक में, यह स्पष्ट किया जाना चाहिए कि मुआवजा हमेशा बाज़ार मूल्य के तहत है। इसमें कितना यह वृद्धि की जानी चाहिए यह मामले के आधार पर और स्थानीय स्तर की भिन्नताओं पर निर्भर होना चाहिए। भूमि बाज़ार की स्थिति का दोष, भूमि का लिया जा रहा अंश, इस परियोजना की प्रकृति अधिग्रहीत भूमि पर आ जाएगी, ज़मीन

खोने वाले किसानों की विशेषताएं निर्धारित करेंगी कि क्या इज़ाफा स्वीकार्य है। इस संबंध में विविधता को काफी सबूत मिलते हैं। सिंगूर में जिनकी भूमि का अधिग्रहण कर लिया गया था, उन पर किया गया हालिया सर्वेक्षण मालिकों और इस भूमि अधिग्रहण के विरोध में निभाई गई महत्वपूर्ण भूमिका के सबूत उपलब्ध कराता है। (घटक ईटी एएल. 2012)मालिकों की ओर से बताया गया कि पश्चिम बंगाल सरकार द्वारा की गई मुआवजे की पेशकश बाज़ार मूल्यों के औसत के बराबर थी। इन मालिकों के एक-तिहाई लोग मुआवजा से इनकार कर भूमि अधिग्रहण का विरोध करते हैं। आंशिक रूप से मुआवज़े की अक्षमता साथ ही व्यक्तिगत भूखंडों के बाज़ार मूल्यों के लिए प्रासंगिक जानकारी शामिल करने जैसे कि सिंचाई या बहु-फसली स्थिति, या सार्वजनिक परिवहन सुविधाओं के लिए निकटता के रूप में की पेशकश द्वारा स्पष्ट किया गया है। वे परिवार जिनके लिए कृषि आय के स्त्रोत के रूप में एक बडी भूमिका निभाती है या वे जिनके वयस्क सदस्यों का एक बड़ा अंश काम करता था, कम थे जिनकी पेशकश को स्वीकार करने की संभावना थी।

यह आय सुरक्षा की भूमिका के एक महत्वपूर्ण विचार के रूप में और खेती के अहस्तांतरणीय कौशल के साथ पूरक की भूमिका को इंगित करता है। वे लोग जो आर्थिक रूप से मजबूत थे, (जैसे कि वे लोग जिन्हें ज़मीन खरीदने के बजाय साजिश या अनुपस्थित जमींदारों की विरासत में मिली थी) उन लोगों की भी पेशकश को स्वीकार करने की संभावना कम थी।

नए कानून में पेश निश्चित मूल्य (केवल एक ग्रामीण और शहरी अंतर के साथ) देश भर में अपना उद्देश्य पूरा करने के लिए दृढ़ भी है। समस्या यह है कि इस सही अनुपात को पाना महत्वपूर्ण है। यदि इसे ऊंचा तय किया जाता है तो भूमि अधिग्रहण की लागत बेहद बड़ी हो जाएगी और औद्योगीकरण भी बहुत धीमी हो जाएगा। किसानों को लाभदायक भूमि रूपांतरण के अप्रत्याशित लाभ से वंचित करके उनके के हितों के साथ समझौता हो सकता है। यदि इसे कम तय किया जाता है तो सिंगूर में देखी गई समस्याएं फिर उभर सकती हैं। इसके अतिरिक्त, हम किसी स्पष्टीकरण पर नहीं आए हैं कि क्यों गुणन कारक दो या चार गुणा ही चुना गया था। यहां तक कि एक औसत समायोजन के रूप में, यह रहस्यमय बना हुआ है।

वैकल्पिक तंत्र : भूमि नीलामी

घटक और घोष (2011) के अनुसार नीलामी आधारित मूल्य निर्धारण तंत्र 2013 के भूमि अधिग्रहण कानून द्वारा निर्धारित और कठोर प्रणाली से ज़्यादा बेहतर काम करता। यहां हम विचार का सार पेश करेंगे। किसी भी परियोजना के लिए ज़मीन अधिग्रहण की दिशा में पहले कदम के रूप में सरकार को परियोजना स्थल के आकार के बराबर ज़मीन नीलामी के माध्यम से पड़ोस में खरीदनी चाहिए। अगला, परियोजना स्थल के भीतर आने वाले बिना बिके भूखंडों के मालिकों को उनके स्थान के बाहर बराबर क्षेत्र की कृषि योग्य भूमि देकर, भूमि के लिए भूमि का मुआवजा दिया जा सकता है। यह अधिग्रहीत भूमि से संलग्न भूमि को परियोजना स्थल पर जोड़कर अधिग्रहीत भूमि को मजबूत करेगा।

इस तंत्र के दो बड़े फायदे हैं। पहला, यह भ्रष्ट अधिकारियों के हाथों से लेकर स्वयं मूल्य निर्धारण करता है जो एक पारदर्शी तरीका है। यह किसानों की ओर से खुद प्रतिस्पर्धी बोली के माध्यम तय किया गया मूल्य होता है। यह विकास के विरूद्ध राजनीतिक प्रतिरोध के आक्रामक तत्व कम कर उसे शांत करेगा। साथ ही यह मौजूदा से पूर्व बाज़ार कीमतों के मालिकों को भूमि का असली मुआवजा तय करेगा न कि कृत्रिम मानकों के आधार पर। दूसरा, यह उन किसानों की भूमि की शेष भूमि का पुर्ननिर्धारण करेगा जिनके पास उच्च कीमत की भूमि है। उम्मीद की जा सकती है कि इन किसानों से उच्चतम कीमत पूछकर बोली लगाने के लिए और भूमि के बदले नकद में मुआवजा दिया जाना ख़त्म हो जाएगा। निश्चित रूप से नीलामी खोए हुए भूमि बाजार को नयी गति प्रदान करेगा।

नीलामी आधारित दृष्टिकोण विभिन्न दिशाओं में लागू किया जा सकता है। एक कारखाने के स्थान का चुनाव भी एक बहुचरणीय प्रक्रिया के लिए नीलामी का विस्तार करके किया जा सकता है। पहले चरण में, सरकार उद्योग के लिए एक आरक्षित मूल्य और आवश्यक भूमि की न्यूनतम मात्रा में तैयार कर सकती है। अगला, विभिन्न समुदायों को उनके संबंधित क्षेत्रों में लगाए जाने वाले कारखाने के लिए बोली लगाने के लिए कहा जा सकता है। इन बोलियों में वे अपने क्षेत्रों के भीतर ज़मीन मालिकों (जैसे एक स्थानीय नीलामी द्वारा प्राप्त) से भूमि की आवश्यक मात्रा की खरीद कर सकते हैं, जिसे कम से कम कीमत के बराबर रखा जा सकता है।

इन नीलामियों के संचालन में उनके क्षेत्राधिकार के भीतर स्थानीय पंचायत निकायों को विकेंद्रीकृत जिम्मेदारी दी गई हैं जिनमें ऊपर से नीचे तक के राज्य या राष्ट्रीय सरकारों द्वारा स्थानीय समुदायों पर थोपी जा रही अधिग्रहण की नीतियों को कम करने में मदद मिलेगी। उस मामले में पंचायत के नेताओं को इस तरह की नीलामी का संचालन करने वाले नौकरशाहों को प्रशिक्षित करना होगा लेकिन यह अपने संबंधित क्षेत्रों में व्यापार के विकास में एक और अधिक सक्रिय भूमिका निभाने के लिए पंचायतों को आवश्यक कौशल प्राप्त करने में मदद के लिए किया जाएगा।

द हिंदू के एक लेख में केंद्रीय ग्रामीण विकास मंत्री जयराम रमेश और उनके सहयोगी मोहम्मद खान ने इस संबंध में लिखा ''भारत में भूमि बाज़ार अपरिपक्व हैं इसलिए यहां राज्यों को अधिग्रहण में एक भूमिका रखनी चाहिए क्योंकि यहां ज़मीन के खरीदारों और विक्रेताओं के बीच शक्ति और जानकारी संबंधी विशाल विषमताएं हैं। यदि बाज़ार का अभाव है तो तंत्र के लिए जरूरी हो जाता है कि (क) कीमत की खोज की जाए परियोजना तथा इसके आर्थिक प्रभाव सभी को उपलब्ध हो और बारे में सूचना यह तब प्रभावी होगा जब यदि यह बाज़ार सुचारू रूप से प्रबल होता। (ख) भौतिक व्यापार वाले किसानों को अधिग्रहण के बाद के बाजार में अपनी भूमिका निभा पाते हमारा प्रस्तावित नया कानून, ठीक यही करता है। दूसरी ओर, नया कानून, ''नन सिक्विटर'' (यह पालन नहीं करता है) से प्रभावित है। यह बाज़ार के किसी भी दोष को स्थान नहीं देता। यह पूर्ण अटकलबाजी के आधार पर मामले को सुधारने की कोशिश करता है।''

ग्रामीण भूमि बाज़ारों का पुनर्जीवन

राज्य के ग्रामीण भूमि बाज़ारों को बेकार बनाने में कई कारक जिम्मेदार देते हैं-भूमि का खराब लेखा-जोखा जो आधिकारिक तौर पर स्वामित्व हस्तांतरण करने में परेशानी पैदा करते

हैं, किरायेदारी और भूमि हदबंदी कानूनों की उपस्थिति स्वामित्व की गुप्तता को बढ़ावा देते हैं तथा बिक्री के रास्ते में बाधाएं, संभावित खरीददारों की सीमित गतिशीलता, दलाली, सेवाओं और अवसरों को खरीदने और बेचने के बारे में जानकारी के सीमित प्रवाह की कमी भी उल्लेखनीय है। औपचारिक बैंकिंग क्षेत्र की सीमित पहुंच को देखते हुए इसका एक और पहलू भूमि खरीद के वित्तपोषण की कठिनाई है।

दूसरा पहलू, एक ऐसी दुनिया में जहां बीमा, साख और बचत के अवसरों के औपचारिक सूत्रों का बहुत कम उपयोग होता है, भूमि केवल एक आय भुनाने की परिसंपत्ति ही नहीं बल्कि एक बीमा पॉलिसी व जमानत व पेंशन योजना के रूप में है। इसलिए भूमि बाज़ारों का संचालन ठीक से हो तो भी गरीब किसान को कृषि से प्राप्त अपेक्षाकृत कुछ सरल लाभ को भूमि बेचने पर निश्चित रूप से वरीयता देंगे।

भूमि आसान व्यापार के योग्य परिसंपत्ति नहीं है, मालिक अक्सर ऋण प्राप्त करने के लिए जमानत के रूप में इसका उपयोग करने में असमर्थ होते हैं और ऋण बाज़ार की खामियों को बढ़ावा देते हैं। दूसरी ओर, वित्त पोषण प्राप्त करने की कठिनाई, भूमि बाज़ार में ज्यादा समस्याएं पैदा करता है और किसानों को कम उत्पादक से अधिक उत्पादक बनने से रोकता है इसके अलावा, ऋण बाज़ार में खामियों के कारण किसानों द्वारा भूमि में अपर्याप्त निवेश करने बढ़ावा पुनरीक्षित और नयी कृषि तकनीकों जैसे एचवाईवी बीज, खाद और पानी की तरह महंगे पूरक आदि को अपनाने में बाधा पैदा होती है।

यह सब न केवल सामाजिक न्याय और समानता की दृष्टि से, बल्कि पैदावार बढ़ाने और विनिर्माण और सेवाओं में संसाधनों की पारी को सक्षम करने के प्रयोजन के लिए, भूमि सुधार के महत्व को रेखांकित करता है। भूमि पर बेहतर परिभाषित संपदा अधिकार संपत्ति तक पहुँचने के लिए न केवल रास्ता देते हैं बल्कि इससे ऋण बाज़ार को मजबूत बनाने और गुणक प्रभाव के लिए परोक्ष रूप से उत्पादकता में वृद्धि होती है।

यह सरकार द्वारा अधिग्रहीत की जा रही भूमि के लिए सही मुआवजा प्राप्त करने के लिए भी महत्वपूर्ण है। सिंगुर के अनुभव से पता चला है कि एक तिहाई मालिकों के प्रतिरोध का कारण अधिग्रहण लिए पुराने भूमि अभिलेख प्रणाली की मौजूदगी थी। (घटक ईटी एएल. 2012)। बंगाल में पिछला भूकर भूमि सर्वेक्षण 1940 के दशक में औपनिवेशिक ब्रिटिश प्रशासन द्वारा कराया गया था। जटिल और भ्रष्टाचार में डूबे भूमि पंजीकरण कार्यालयों का निर्देशित करने के ज़मीन मालिकों के प्रयासों के आधार पर ही ये अद्यतन हो सकें हैं।

इन अभिलेखों के आधार पर ही संपत्ति करों में वृद्धि हो रही थी। इस प्रकार, कई भूखंडों की स्थिति के बारे में मुआवजे के पिछले अभिलेखों का गलत वर्गीकरण उपलब्ध था जिसके परिणामस्वरूप इसे भुगतान की तारीख के बाद से बदल दिया गया था। जिन मालिकों ने सिंचाई सुविधाओं में निवेश किया था उन्हें असिंचित भूमि के मूल्यांकन की दर पर मुआवजा दिया गया जो बहुत कम था। जिन मालिकों के भूखंडों को सही ढंग से दर्ज किया गया था उनके मुआवज़े की पेशकश स्वीकार करने संभावना थी। यहां कहने को मुआवजा दरें कोई समस्या नहीं थी। बल्कि यह किसी प्रकार की साजिश था। इसलिए सही बाज़ार मूल्य की गणना तैयार रखने में सही भूमि रिकार्ड की आवश्यकता है।

नवीन भूमि सुधार बिल इसलिए विशेष महत्व रखता है क्योंकि यह भूमि अभिलेखों को पूरा करने और कंप्यूटरीकृत डेटाबेस बनाने के लिए प्रशासनिक संचालक के रूप में त्वरित कार्य कर सकता है।

एक तरह से भूमि पुनरीक्षित अभिलेख बनाने के लिए सरकारी अभिलेखों में भूमि मालिकों को स्वयंसेवी सूचना और उनकी स्थिति के औपचारीकरण मुहैया कराने की ज़रूरत है। मुख्य समस्या यह है कि हदबंदी कानून की तरह पुनर्वितरण उपाय बेनामी संपत्ति के व्यापक चलन को प्रोत्साहित करते हैं। दूसरी ओर, सार्वजनिक उद्देश्य के लिए अधिग्रहण का सामना करने की आशंका वाले मालिक अपने रिकार्ड दुरूस्त करा सकते हैं।

भूमि सुधार और भूमि अधिग्रहण की प्रक्रिया के बीच, जहां पूर्व में सुधार की सुविधा होगी वैसे ही भूमि अधिग्रहण की संभावना भूमि हदबंदी के कार्यान्वयन को आसान करेगा। अन्य प्रतिफलों पर भी विचार किया जा सकता है, जैसे विभिन्न सरकारी सेवाओं और लाभ, सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों से ऋण के रूप में, इस तरह की अन्य सेवाएं जैसे नरेगा या सार्वजनिक वितरण प्रणाली, सब्सिडी आदानों, भोजन के अधिकारों आदि के माध्यम से हकों को बढ़ाया जा सकता है।

इसके अलावा, अर्धशताब्दी से ज़्यादा समय के लिए अधिकतर राज्यों में भूमि सुधार कानूनों को लागू करने के लिए हमारी विफलता के परिप्रेक्ष्य में हदबंदी अधिकारियों को कार्यान्वयन पर एक बेहतर कोशिश करने के लिए शायद वक्त दिया जाना चाहिए। साक्ष्य के आलोक में विशेष रूप से यह कुल मिलाकर सभी राज्यों के लिए सत्य है, भूमि सुधार कानून का कृषि उत्पादकता पर एक नकारात्मक प्रभाव पड़ा है और इस नकारात्मक प्रभाव का संवाहक मुख्य रूप से हदबंदी कानून को माना जा सकता है। (घटक और रॉय, 2007 देखें) यहां तक कि प्रोत्साहन उपायों के प्रकटीकरण और कुल भूमि अभिलेख को प्रोत्साहित करने पर विचार किया जा सकता है।

कृषि या आदिवासियों की ज़मीन की बिक्री पर नियमों और प्रतिबंधों का कोई वास्तविक उद्देश्य नहीं है और अक्सर वे मदद की अपेक्षा करते हैं। वे अधिक कुशल भूमि के उपयोग में अनुसूचित जाति / अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या से सामाजिक गतिशीलता का एक महत्वपूर्ण उपकरण हटा देते हैं। वे इसे जनजातीय आबादी के सदस्यों को कृषि से अलग करने को मुश्किल बनाते हैं और आदिवासी क्षेत्रों में निवेश और औद्योगीकरण को हतोत्साहित करने के उद्देश्य से 'शोषण' को रोकने का दिखावा भी करते हैं।

आमतौर पर कहते हैं कि भूमि पर मौजूदा नीतिगत पहलों की सबसे महत्वपूर्ण विफलता औद्योगीकरण या वन क्षेत्र के संरक्षण जैसी कुदरती चिंताओं और समग्र लक्ष्यों को संतुलित करने के लिए व्यावहारिकता के साथ आदर्शवाद के तालमेल में असमर्थता है। सामाजिक न्याय के लिए हमारी भूमि निधि का समान रूप से बंटवारा करना महत्वपूर्ण है, लेकिन यहां भूमि बाज़ार को सुचारू रूप से काम करने देने के लिए और भूमि के सदुपयोग के साथ असल में कोई विवाद नहीं है। ❑

(मैत्रीश घटक लंदन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स में प्रोफेसर हैं। परीक्षित घोष इसी संस्थान में एसोसिएट प्रोफेसर हैं जबकि दिलीप मुखर्जी बोस्टन विश्वविद्यालय में अर्थशास्त्र के प्रोफेसर हैं।

ई-मेल : mghatak@isc.ac.uk, pghosh@econdse.org, dilipm@bu.edu.)

सभी प्रतियोगी परीक्षाओं के लिए संशोधित एवं अद्यतन पुस्तक

प्रमुख आकर्षण

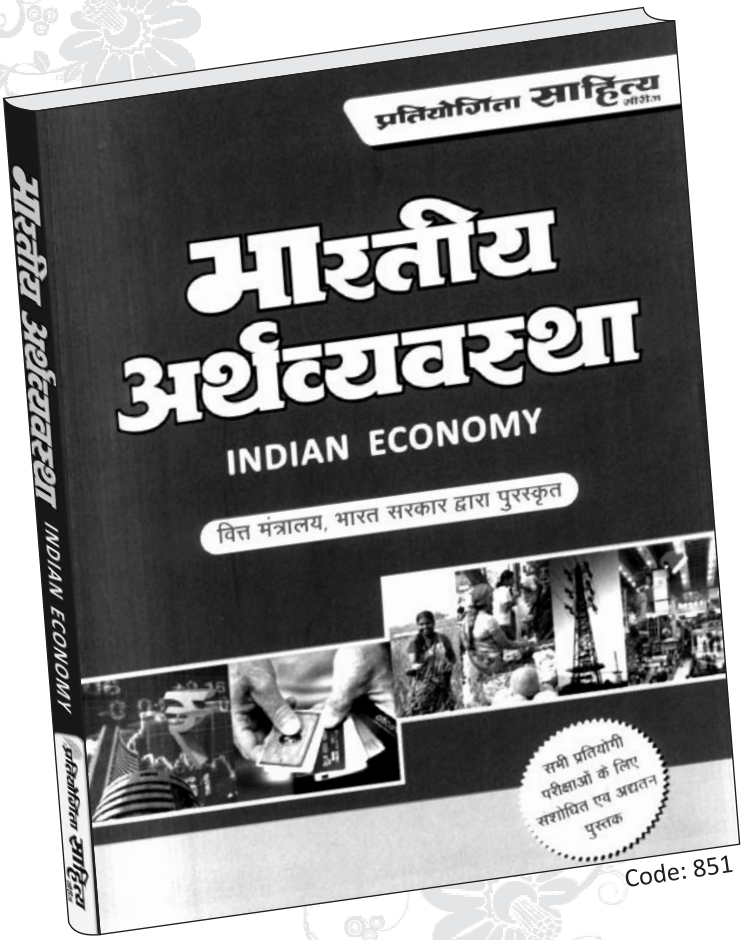

- विश्व विकास रिपोर्ट 2012
- विश्व विकास संकेतांक 2012
- मानव विकास रिपोर्ट–संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम 2013
- भारत 2013 के आधार पर समंक एवं विषय सामग्री
- भारतीय मानव विकास रिपोर्ट 2011
- बारहवीं (2012-2017) पंचवर्षीय योजना
- केन्द्रीय बजट 2013-14
- रेलवे बजट 2013-14
- आर्थिक समीक्षा 2012-13
- राष्ट्रीय विनिर्माण नीति 2011
- भारतीय कृषि की स्थिति 2011-12 रिपोर्ट के समंक
- विभिन्न केन्द्रीय मन्त्रालयों की 2011-12 रिपोर्ट के आधार पर समंक
- जनगणना 2011 के विस्तृत समंक
- विदेशी व्यापार एवं विदेशी ऋण के 2011-12 तक के समंक
- पंचवर्षीय विदेश व्यापार नीति 2009-2014
- मौद्रिक नीति 2012-13
- भारतीय वन स्थिति रिपोर्ट 2011
- भारतीय कृषि में क्षेत्र एवं उत्पादन के 2011-12 तक के समंक
- अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व बैंक, विश्व व्यापार संगठन, यूरोपियन संघ, आसियान, सार्क इत्यादि अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों में 2011-12 तक के समंकों एवं सूचनाओं का समावेश
- वाणिज्यिक बैंकों के मार्च 2012 तक के समंक
- तेरहवें वित्त आयोग की रिपोर्ट और 14वें वित्त आयोग का गठन
- प्रामाणिक स्रोतों के आधार पर पूर्णतः अद्यतन वस्तुनिष्ठ (बहुविकल्पीय) प्रश्न (हल सहित)

आपके निकटतम पुस्तक विक्रेता पर उपलब्ध।

साहित्य भवन | 0562-3293040 | 08958500222 | info@psagra.in | www.psagra.in

YH-174/2013

ऊर्जा सुरक्षा के संदर्भ में तेल की अर्थव्यवस्था

● एस.सी. त्रिपाठी

औद्योगिक क्रांति के बाद से ऊर्जा वृद्धि विकास की कुंजी बन गई है। आधुनिक जीवन ऊर्जा की खपत और इसके इस्तेमाल पर इस हद तक निर्भर है कि किसी देश की प्रतिव्यक्ति ऊर्जा खपत का प्रत्यक्ष अनुपात प्रतिव्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) के साथ जोड़ा जाता है। भारत में प्रतिव्यक्ति प्राथमिक ऊर्जा खपत विश्व की प्रतिव्यक्ति प्राथमिक वाणिज्यिक ऊर्जा खपत का क़रीब एक तिहाई है। भारत की प्रतिव्यक्ति प्राथमिक ऊर्जा खपत अमरीका की प्रतिव्यक्ति ऊर्जा खपत का 20वां भाग, यूरोप की प्रतिव्यक्ति ऊर्जा खपत का 10वां भाग और चीन की प्रतिव्यक्ति ऊर्जा खपत का क़रीब एक चौथाई है। भारत में वृद्धि और विकास संबंधी किसी भी नीति एवं कार्यक्रम की कामयाबी के लिए ऊर्जा संसाधनों तक पहुंच और आबादी के लाभ के लिए संसाधनों के दोहन के मुद्दों का समाधान करना होगा।

विभिन्न ऊर्जा स्रोतों के बीच विभाजित विश्व की प्रतिव्यक्ति प्राथमिक ऊर्जा खपत में जीवाश्म ईंधन की हिस्सेदारी क़रीब 86 प्रतिशत है जबकि भारत के ऊर्जा संसाधनों में जीवाश्म ईंधन की हिस्सेदारी 94 प्रतिशत के क़रीब है। विश्व के ऊर्जा संसाधनों में कुल मिला कर कोयले की हिस्सेदारी 30.3 प्रतिशत, तेल की 33 प्रतिशत और गैस की हिस्सेदारी 24 प्रतिशत है। गैर जीवाश्म ईंधन के अंतर्गत परमाणु ऊर्जा की हिस्सेदारी 4.7 प्रतिशत, जलीय ऊर्जा की हिस्सेदारी 6.4 प्रतिशत और नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों की हिस्सेदारी 1.5 प्रतिशत है। इसी प्रकार भारत में ऊर्जा अनुपात को देखें तो जीवाश्म ईंधन के अंतर्गत कोयले की हिस्सेदारी 54 प्रतिशत, तेल की 31 प्रतिशत और गैस की हिस्सेदारी 9 प्रतिशत है, जबकि गैर-जीवाश्म ईंधन में जलीय ऊर्जा की हिस्सेदारी 4 प्रतिशत, परमाणु ऊर्जा 1 प्रतिशत और नवीकरणीय ऊर्जा की हिस्सेदारी भी 1 प्रतिशत है। भारत में वाणिज्यिक ऊर्जा के अलावा गैर-वाणिज्यिक स्रोतों, जैसे बायोमास, ईंधन की लकड़ी, उपले आदि का भी इस्तेमाल बड़े पैमाने पर किया जाता है और कुल खपत में उनकी प्रतिशत हिस्सेदारी निरंतर घट रही है। किंतु, 2030-31 तक उसके 10 प्रतिशत से नीचे जाने की संभावना नहीं है।

किसी देश में ऊर्जा की क्षेत्रगत मांग उसके आर्थिक ढांचे को व्यक्त करती है और भारत में ऊर्जा की मांग के पीछे बिजली क्षेत्र एक प्रमुख ताक़त है। ऊर्जा की खपत में परिवहन क्षेत्र की हिस्सेदारी भी बढ़ रही है और इस क्षेत्र की ऊर्जा खपत में तेल की 90 प्रतिशत हिस्सेदारी रहने की संभावना है। ऊर्जा की खपत वाले अन्य क्षेत्रों में मुख्य रूप से उद्योग और वाणिज्यिक प्रतिष्ठान एवं भवन शामिल हैं। इनमें से उद्योग हीटिंग (गर्म करने), विद्युत और अन्य मैकेनिकल प्रयोजनों के लिए ऊर्जा का इस्तेमाल करते हैं, जबकि प्रतिष्ठानों और भवनों में प्रकाश व्यवस्था, वातानुकूलन आदि प्रयोजनों के लिए ऊर्जा इस्तेमाल की जाती है। भारत में ऊर्जा की मांग में वृद्धि जारी रहेगी और वर्तमान में देश की ऊर्जा मांग का स्तर 70 करोड़ टन तेल समकक्ष से कम है, जिसके 2030-31 तक बढ़ कर 150 करोड़ टन तेल समकक्ष हो जाने की संभावना है। अनुमान है कि इसमें 3.1 प्रतिशत वार्षिक चक्रवृद्धि दर से वृद्धि होने का अनुमान है, जो विश्व की ऊर्जा खपत के लिए अनुमानित 1.3 प्रतिशत वार्षिक चक्रवृद्धि दर से दुगुनी से भी अधिक है।

विश्व ऊर्जा मांग में भारत की हिस्सेदारी वर्तमान में 5.5 प्रतिशत से भी कम है, जिसके 2030-31 तक बढ़ कर 8.6 प्रतिशत तक पहुंच जाने का अनुमान है। यह वृद्धि सभी प्रकार के ईंधनों में होगी। कोयले और तेल की मांग 3.1 प्रतिशत की वार्षिक चक्रवृद्धि दर से बढ़ने का अनुमान है जबकि प्राकृतिक गैस, नवीकरणीय ऊर्जा और परमाणु ऊर्जा की मांग अधिक उच्च दर से बढ़ने की उम्मीद है। जीवाश्म ईंधन की खपत कार्बन डाई-ऑक्साइड (सीओ-2) का प्रमुख स्रोत है, इसलिए भारत सीओ-2 उत्सर्जित करने वाला विश्व का तीसरा सबसे बड़ा देश बन गया है। इसमें पहला स्थान चीन और दूसरा अमरीका का है। भारत पर इस बात के लिए अंतर्राष्ट्रीय दबाव पड़ेगा कि वह या तो खपत में कमी करे अथवा प्रदूषण नियंत्रण के ख़र्चीले उपाय अपनाए। इस परिप्रेक्ष्य में कम प्रदूषण वाले ऊर्जा स्रोत जैसे प्राकृतिक गैस और परमाणु ईंधन का पक्ष लिया जाना चाहिए, लेकिन इन संसाधनों की उपलब्धता को लेकर सवालिया निशान लगा हुआ है। विकास नीति में इन महत्वपूर्ण प्रश्नों का हल ढूंढना होगा। अपनी ऊर्जा नीति में भारत तीन प्रमुख उद्देश्यों पर ध्यान केंद्रित करता है। ये हैं : संसाधनों तक पहुंच, ऊर्जा सुरक्षा और जलवायु परिवर्तन। ऊर्जा से संबंधित पक्षों और अधिसंख्य हितों की परस्पर अन्योन्याश्रयी गतिशीलता को समझना अनिवार्य है।

ऊर्जा की मांग में बढ़ोतरी घरेलू उत्पादन से कहीं अधिक है, इसे देखते हुए आयातित ऊर्जा स्रोतों पर निर्भरता बढ़ गई है। भारत क़रीब 35 प्रतिशत ऊर्जा आयात पर निर्भर है, जिसमें 80 प्रतिशत खनिज तेल और क़रीब 20 प्रतिशत प्राकृतिक गैस की हिस्सेदारी है। कोयले के उत्पादन में कमी को देखते हुए, कोयले की मांग का क़रीब 20 प्रतिशत आयात किया जाता है। भारत का घरेलू हाइड्रोकार्बन उत्पादन अपेक्षाकृत बहुत कम है, जिससे इसकी मांग पूरी करने के लिए आयात पर बहुत अधिक

भारत में हाइड्रोकार्बन संसाधन समूची दुनिया के संसाधनों का क़रीब 1 प्रतिशत मात्र है, लेकिन भारत संभवतः कोयला संसाधन की दृष्टि से विश्व में तीसरे स्थान पर है।

निर्भरता है। भारत में हाइड्रोकार्बन संसाधन समूची दुनिया के संसाधनों का क़रीब 1 प्रतिशत मात्र है, लेकिन भारत संभवतः कोयला संसाधन की दृष्टि से विश्व में तीसरे स्थान पर है। स्थानीय कोयला संसाधनों की उपलब्धता व्यापक होने के अनुमान के बावजूद कुछ कोयला संसाधनों तक वास्तविक पहुंच और प्रमाणित कोयला संसाधन पैदा करने की कोल इंडिया लिमिटेड, जो एकमात्र विकासक है, की तकनीकी क्षमता को लेकर संदेह बना रहा है। जहां तक हाइड्रोकार्बन का प्रश्न है, अप-स्ट्रीम सेक्टर के उदारीकरण और नतीजतन डाउन-स्ट्रीम सेक्टर को खोले जाने के कारण तेल और गैस क्षेत्र अधिक मुक्त और प्रतिस्पर्धा सक्षम हैं। ये क्षेत्र शत-प्रतिशत विदेशी निवेश के लिए खुले हैं। किंतु, असंगत नीतियों और यहां तक कि पूर्ववर्ती उदार व्यवस्था को वापस लेने की सरकार की प्रवृत्ति और अप-स्ट्रीम तथा डाउन-स्ट्रीम दोनों क्षेत्रों में नियंत्रण लागू किए जाने के कारण मूल्य व्यवस्था को क्षति पहुंची है, संसाधनों का पूर्ण इस्तेमाल नहीं हो पाया है और प्रमुख अंतर्राष्ट्रीय कंपनियों से निवेश का अभाव है।

पर्याप्त ऊर्जा आपूर्ति सुनिश्चित करने के लिए अपनाई जाने वाली नीतियां उपलब्ध हैं ताकि राष्ट्रीय स्तर पर ऊर्जा की बढ़ती मांग पूरी की जा सके और ऐसी नीतियां भी हैं, जिनका लक्ष्य व्यक्तिगत स्तर पर आधुनिक ऊर्जा सेवाओं तक पहुंच बढ़ाना है। लगता है ये नीतियां विपरीत प्रयोजनों के लिए काम कर रही हैं। ऊर्जा आपूर्ति नीति के लिए प्रतिस्पर्धात्मक बाज़ार आधारित ढांचे की आवश्यकता है, जबकि ऊर्जा सेवा पहुंच बढ़ाने की नीति के लिए बाज़ार ढांचे में हस्तक्षेप आवश्यक है ताकि अंतर्निहित कमियों को दुरुस्त किया जा सके। भारत की ऊर्जा सुरक्षा प्रतिस्पर्धात्मक ज़रूरतों के बीच सही संतुलन कायम करने पर निर्भर करेगी, बल्कि अधिक महत्वपूर्ण यह है कि प्रतिस्पर्धात्मक नीतिगत दृष्टिकोणों के बीच संतुलन कायम करने पर निर्भर करेगी ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि किसी एक को अन्य की लागत पर हासिल न किया जाए।

वर्ष 2012-13 में भारत ने 18.5 करोड़ टन कच्चे तेल और 1.6 करोड़ टन पेट्रोलियम उत्पादों का आयात किया, जिसकी क़ीमत ₹ 8,53,949 करोड़ थी। अतिरिक्त शोधक क्षमता और विश्व स्तरीय तेल शोधक कंपनियों की मौजूदगी के कारण, 6.3 करोड़ टन उत्पादों का निर्यात संभव हो सका, जिससे ₹ 3,20,042 करोड़ प्राप्त हो सके। इस तरह निवल बहिर्प्रवाह ₹ 5,33.907 करोड़ का रहा। यह हमारे संसाधनों का भारी बहिर्गमन है, जो चालू खाता घाटे और रुपये के कमज़ोर होने के प्रति आंशिक रूप से जिम्मेदार है। डीज़ल, केरोसिन और एलपीजी पर सब्सिडी देने की सरकार की नीतियों के कारण ₹ 1,61,029 करोड़ की कम वसूली की भरपाई करदाताओं के धन से यानी केंद्र सरकार के बजट संसाधनों से करनी पड़ी। इसके लिए ओएनजीसी, ओआईएल और गेल जैसी अप-स्ट्रीम कंपनियों का स्वत्वहरण किया गया और शेष रिफाइनरी एवं विपणन कंपनियों द्वारा भरपाई करने के लिए छोड़ दिया गया।

वर्ष 2012-13 में भारत ने 18.5 करोड़ टन कच्चे तेल और 1.6 करोड़ टन पेट्रोलियम उत्पादों का आयात किया, जिसकी क़ीमत ₹ 8,53,949 करोड़ थी।

इससे केंद्र सरकार के बजट में राजकोषीय असंतुलन पैदा हुआ, अप-स्ट्रीम कंपनियां घरेलू और विदेशी तेल क्षेत्रों में अधिक खोज और उत्पादन के लिए निवेश करने में अक्षम हो गई तथा रिफाइनरी और विपणन कंपनियों के तुलन-पत्रकों पर प्रतिकूल असर पड़ा, जिनका सकल कारोबार 8 लाख करोड़ रुपये से अधिक का है और वे आधुनिकीकरण एवं विस्तार करने में अक्षम हो गई। दूसरी तरफ, केंद्र और राज्य सरकारों ने संयुक्त रूप से करों, शुल्कों, रायल्टी आदि के रूप में हाइड्रोकार्बन क्षेत्र से ₹ 2,45,000 करोड़ एकत्र किए। राज्य सरकारों के संसाधन काफी हद तक वैट पर निर्भर हैं जबकि केंद्र सरकार भी उत्पाद, सीमा शुल्क और अन्य करों एवं लाभांश आदि के जरिये इतनी ही राशि वसूल करती हैं। जब तक सरकारें और केंद्र सरकार अपने कर समूह में विविधता नहीं लाएंगी, और पेट्रोलियम उत्पादों पर निर्भरता कम नहीं करेंगी, तब तक तेल के ऊंचे दामों और कमज़ोर रुपये के माहौल में इन उत्पादों के दाम ऊंचे बने रहेंगे।

ऊर्जा के सक्षम और टिकाऊ उपयोग सुनिश्चित करते हुए बहु-आयामी ऊर्जा समस्याओं का समाधान किया जा रहा है। लेकिन, दीर्घावधि की चुनौतियों और लक्ष्यों को एकीकृत और व्यापक ढंग से पूरा करना होगा। भारत को ऐसी प्रौद्योगिकियां अवश्य इस्तेमाल में लानी होंगी जो ऊर्जा सक्षमता में अधिकतम वृद्धि कर सकें और मांग, पार्श्ववर्ती प्रबंधन और संरक्षण के मुद्दों का समाधान कर सकें। समेकित ऊर्जा नीति समिति (आईईपीसी) ने एक दीर्घावधि की संदर्श योजना प्रदान की है जो अभी वैध है। ऊर्जा सुरक्षा की कुंजी अधिक खोज, उत्पादन और घरेलू संसाधनों के उपयोग में निहित है, जिसका अर्थ है कि भारत के विकास और सुरक्षा के लिए कोयले और थोरियम पर आधारित परमाणु ऊर्जा महत्वपूर्ण है। किंतु, तत्संबंधी नीति का कार्यान्वयन भी जरूरी है। समेकित ऊर्जा नीति को असंबद्ध मंत्रालयों द्वारा कारगर ढंग से लागू नहीं किया जा सकता। प्रथम स्तर पर उन मंत्रालयों के बीच एकीकरण करना होगा, जो कार्बन और हाइड्रोकार्बन के इस्तेमाल से संबद्ध हैं। कार्बन के हाइड्रो कार्बन बनने अथवा इसके विपरीत होने की स्थिति को मंत्रालयों के समूह द्वारा नियंत्रित नहीं किया जा सकता।

यह विसंगति है कि हम ऐसी स्थिति में सर्वाधिक आधुनिक प्रौद्योगिकियों और संसाधनों वाली उत्कृष्ट कंपनियों को हाइड्रोकार्बन क्षेत्र में आमंत्रित करें जबकि हमारा संसाधन आधार कमज़ोर है, लेकिन कोयला क्षेत्र में संसाधन की दृष्टि से समृद्ध सरकारी कंपनियों को भी पहुंच प्रदान न करें, जहां हमारा संसाधन आधार अपेक्षाकृत बेहतर है। कोयला क्षेत्र मीथेन, भूमिगत कोयला गैसीकरण और सतह कोयला गैसीकरण जैसी सभी प्रौद्योगिकियां मौजूद हैं, जिनसे प्राकृतिक गैस के उत्पादन के लिए कोयले का इस्तेमाल किया जा सकता है और ये चीन जैसे कोयला समृद्ध देशों में

ऊर्जा सुरक्षा की कुंजी अधिक खोज, उत्पादन और घरेलू संसाधनों के उपयोग में निहित है, यानी भारत के विकास और सुरक्षा के लिए कोयले और थोरियम पर आधारित परमाणु ऊर्जा महत्वपूर्ण है।

लागू की जा रही हैं। यदि कोयले, तेल और गैस की खोज और उत्पादन के लिए हमारा एक साझा मंत्रालय और साझा कानून हो, तो इन परियोजनाओं को वास्तविक रूप में लागू किया जा सकता है और सफलता प्राप्त की जा सकती है। हमें ऐसे क्षेत्रों में तेल और गैस के इस्तेमाल का संरक्षण करने की आवश्यकता है जहां कोयले से काम चलाया जा सकता हो। कोयला और गैस के घरेलू खोज और उत्पादन पर जोर देते हुए हमें अप-स्ट्रीम कंपनियों के संसाधनों को सुरक्षा और संरक्षण प्रदान करने की आवश्यकता है ताकि वे विदेशों में हाइड्रो कार्बन परिसंपत्तियां हासिल कर सकें, जहां हमारी तुलना में कई गुना अधिक संसाधन हैं। हम विकृत मूल्य व्यवस्था पर भी निर्भर नहीं रह सकते जहां पेट्रोल, डीजल और केरोसिन, जो तेल शोधन प्रक्रिया से संयुक्त रूप से प्राप्त होते हैं और उन पर समान लागत आती है, इसलिए उन्हें घरेलू रूप में 7.5: 5:1.2 के अनुपात में बेचा जाना चाहिए। तकनीकी आर्थिक वास्तविकता का कुशल प्रयोग और मूल्यन अल्पावधि के लिए संभव है लेकिन, उसे दीर्घावधि तक बनाए नहीं रखा जा सकता। एलपीजी का उत्पादन द्वितीयक और तृतीयक रिफाइनरी प्रक्रिया के जरिये होता है और इस दृष्टि से यह अधिक महंगा ईंधन है। इसमें लागत के 50 प्रतिशत के स्तर तक सब्सिडी और वह भी कई करोड़ ग्राहकों को अनिश्चित काल तक नहीं दी जा सकती।

मूल्यन और वितरण की व्यवस्था पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस नियामक बोर्ड (पीएनजीआरबी) पर छोड़ देनी चाहिए और अग्रणी रूप में यह तय करना चाहिए कि बजट से कितनी सब्सिडी दी जानी है ताकि तेल उत्पादों के मूल्यों में अधिक सक्षमता और पारदर्शिता लाने के बारे में सरकारी और निजी क्षेत्र के तेल शोधक कारखानों और विपणन कंपनियों के बीच प्रतिस्पर्धा पैदा की जा सके।

एलपीजी का उत्पादन द्वितीयक और तृतीयक रिफाइनरी प्रक्रिया के जरिये होता है। इसलिए यह अधिक महंगी है। इसमें लागत के 50 प्रतिशत तक सब्सिडी और वह भी कई करोड़ ग्राहकों को अनिश्चित काल तक नहीं दी जा सकती।

हमें प्राकृतिक गैस और कोयला आधारित मीथेन का अधिक उत्पादन करना होगा ताकि घरेलू ईंधन के रूप में एलपीजी का विकल्प तलाश किया जा सके। विस्तृत ग्रामीण क्षेत्रों को सामाजिक वानिकी, बायोमास और कोयला गैस से ईंधन पर निर्भरता जारी रखनी होगी। इसके साथ प्रदूषण नियंत्रण के आवश्यक उपाय करने होंगे। वर्तमान स्थिति में ऐसे गैसीफायर्स को बढ़ावा देने की आवश्यकता है।

नवीकरणीय ऊर्जा कार्यक्रम को आगे बढ़ाने के हर संभव प्रयास करने की आवश्यकता है, लेकिन यह असंभव लगता है कि किसी बड़ी प्रौद्योगिकी विषयक उपलब्धि के अभाव में 2030-31 तक भारत के ऊर्जा संसाधनों में इस क्षेत्र का योगदान 5 प्रतिशत से अधिक हो पाएगा। परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम को लागू करना होगा ताकि इस क्षेत्र की हिस्सेदारी इस अवधि में 4-5 प्रतिशत तक बढ़ाई जा सके। परमाणु सिविल सहयोग समझौतों का इस्तेमाल आपूर्ति में सुधार के लिए करना होगा और 3 स्तरीय थोरियम आधारित परमाणु संयंत्रों में हमें अपने घरेलू प्रयास तेज़ करने होंगे। तेल की अर्थव्यवस्था यह मांग करती है कि हम ऊर्जा क्षेत्र में समेकित दृष्टिकोण अपनाएं और अपने नीति कार्यक्रमों और कार्यान्वयन व्यवस्था को उसी के अनुरूप बनाएं। ❑

(लेखक राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान, कर्नाटक के संचालन परिषद के अध्यक्ष हैं और केंद्र तथा राज्य सरकारों में कई उच्च पदों पर रह चुके हैं।

ई-मेल : sctripathi@yahoo.com)

NEW AADHAAR IAS

Dare to think beyond the big names & see the difference.....

English Medium | शीतकालीन सत्र | हिन्दी माध्यम

भूगोल

द्वारा कुमार ज्ञानेश

(Scored - 365/351)

बैच प्रारंभ 18 NOV. 5PM

बैच प्रात:कालीन एवं सांयकालीन

SUPER – 60

Free Classes

प्रारंभिक परीक्षा विशेष बैच G.S+CSAT

SCREENING TEST FOR SUPER - 60 24 NOVEMBER

बैच प्रारंभ 2 Dec

नामांकन Fee 100/- Only

G.S FOUNDATION

Batch - 2014-15

(PT CUM MAINS)

द्वारा

कुमार ज्ञानेश एवं टीम

2 FREE WORKSHOP 19 NOV. 5PM

HEAD OFFICE : - A-4, 1st Floor, Hemkunt Building, Street Chawla Restaurant, Dr. Mukherjee Nagar, Delhi-9

BRANCH OFFICE : - Om Bhawan (Sood Building) Lower Chakker (Ghoda Chowki) Shimla-5

Coming Soon New Branch In Bilaspur (chhattisgarh)

Ph: 08860564908,09999275907

YH-177/2013

प्रमाणिकता का पर्याय

धर्मेन्द्र कुमार
PATANJALI IAS
नीतिशास्त्र
सत्यनिष्ठा ⊥ अभिरूचि

आलोक रंजन
DIGMANI EDUCATION
भूगोल
पर्यावरण ⊥ आपदा प्रबंधन

GS ACADEMY

रजनीश राज
SIHANTA IAS
इतिहास एंव संस्कृति

राजेश मिश्रा
SARASWATI IAS
राज व्यवस्था,
अंतर्राष्ट्रीय संबंध

उपेन्द्र अनमोल
विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी

प्रवीण पाण्डेय
भारतीय समाज

एस. के. झा
भारतीय अर्थव्यवस्था

21 कक्षा प्रारम्भ October 5.30 P.M.

FOUNDATION COURSE
(मुख्य परीक्षा एवं प्रारंभिक परीक्षा)

B-17, 1st Floor Dr. Mukherjee Nagar
8376963001, 8376845001, 9990107573, 9810172345, 9311958009
Email-gsacademy.edu@gmail.com www.gsacademyedu.in

YH-175/2013

भूक्षरण रोकथाम की आवश्यकता

● एम.ए. हक

भारत के लिए कृषि का क्या महत्व है इसे बहुत आसानी से समझा जा सकता है। विश्व का केवल 2.4 प्रतिशत भारत के नाम से जाना जाता है और भारत के पास विश्व के कुल जल स्रोत का केवल 4 प्रतिशत है। यह सब इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि विश्व की कुल जनसंख्या का 17 प्रतिशत से अधिक इसी भारत में बसता है और पृथ्वी पर उपस्थित कुल पशुधन का 15 प्रतिशत से अधिक भी भारत में है। स्पष्ट है कि पूरी जनसंख्या और कुल पशुधन को आवश्यक आहार देने की जिम्मेवारी लगभग पूरी तरह कृषि पर ही है। इसका एक अतिरिक्त कारण भी है। वह यह कि भारत के पास पूरे विश्व के चारागाह के केवल 0.5 प्रतिशत क्षेत्र हैं। इतने कम क्षेत्र के द्वारा पूरे पशुधन को पोषण उपलब्ध कराना संभव ही नहीं है और पशु आहार भी कृषि के माध्यम से ही उपलब्ध होता है। चूंकि भारत की अर्थव्यवस्था बहुत अच्छी हालत में नहीं है इस कारण निर्यात को बहुत अधिक प्राथमिकता दी जाती है। यही कारण है कृषि पर निर्यात का भी बहुत बोझ है। देश से कुल निर्यात का लगभग 11 प्रतिशत कृषि क्षेत्र से होता है। अगर कुल घरेलू उत्पाद अर्थात जीडीपी की बात की जाए तो देश की कुल जीडीपी का लगभग 14 प्रतिशत कृषि के ऊपर ही निर्भर है।

कुल मिलाकर भारतवासियों के लिए कृषि बहुत अधिक महत्वपूर्ण है और हम यह जानते हैं कि कृषि का आधार भूमि है। इसमें संदेह नहीं है कि कुछ कृषि उत्पाद जलकृषि से प्राप्त होते हैं परंतु उनकी मात्रा एवं अनुपात बहुत कम है। यही कारण है कि भूमि के कटाव को बहुत घातक माना जाता है। भूमि के निम्नीकरण का अर्थ है कृषि उत्पाद में कमी और हम किसी भी तरह कृषि उत्पाद में कमी को बर्दाश्त करने की स्थिति में नहीं हैं। वर्तमान में भी देश में कुपोषण और पर्याप्त खाद्य सामग्री की उपलब्धता एक बड़ी समस्या है। ऐसी स्थिति में अगर किसी कारण से कृषि उत्पादन में कमी होगी तो समस्या अधिक गंभीर हो जाएगी। इसलिए भूमि के निम्नीकरण को हमें बहुत गंभीरता से लेना चाहिए और हर संभव प्रयास होना चाहिए कि भूमि का निम्नीकरण न हो। भूमि निम्नीकरण का सीधा प्रभाव खाद्य सुरक्षा पर पड़ेगा। पहले ही स्थिति बहुत अच्छी नहीं है। वह और बिगड़ सकती है।

यह सब हम जानते हैं। फिर भी देश में भूमि का निम्नीकरण बढ़ता जा रहा है। वर्ष 2010 के लिए जो आंकड़े उपलब्ध हैं उन से ज्ञात होता है कि कुल उपलब्ध भूमि अर्थात् 3287.3 लाख हेक्टेयर में से 1204 लाख हेक्टेयर किसी न किसी प्रकार के निम्नीकरण का शिकार है। इस कारण प्रतिवर्ष 5.3 अरब टन उपजाऊ मिट्टी का अपरदन होता है। इसमें से लगभग 29 प्रतिशत समुद्र में चला जाता है और हमेशा के लिए खो जाता है। 10 प्रतिशत जलाशयों में पहुंच जाता है। उस कारण जलाशयों की जल संग्रह क्षमता कम हो जाती है। एक ओर वर्षा उपरांत जल उपलब्धता पर प्रभाव पड़ता है तो दूसरी ओर वर्षा ऋतु में बाढ़ की संभावना बढ़ जाती है। बाकी 61 प्रतिशत मिट्टी एक स्थान से हटकर दूसरे स्थान तक पहुंच जाती है। उससे भी भूमि के उत्पादन पर प्रभाव पड़ता है। कारण है कि मिट्टी की परत बहुत मोटी नहीं होती है और अगर मिट्टी की परत एक सीमा से कम हो जाती है तो उस पर पेड़ पौधे, फ़सल इत्यादि नहीं उग पाते हैं। पहाड़ी ढलानों पर ऐसा दृश्य प्राय: देखने को मिलता है। मिट्टी के कटाव के कारण चट्टान अनावृत हो जाते हैं। फिर उस जगह पेड़-पौधों का उगना संभव नहीं होता है। हमें इस तथ्य का ध्यान रखना चाहिए कि एक सेमी मोटी मिट्टी की परत के बनने में 100 से 400 वर्ष तक लगते हैं और किसी जगह पर पर्याप्त मिट्टी के बनने में जिस पर कृषि संभव हो या पेड़-पौधे सफलतापूर्वक उग सकें 3,000 से 12,000 वर्ष का समय लगता है। यही कारण है कि मिट्टी को उस श्रेणी में नहीं रखा जाता है जिसका नवीकरण हो सकता है। एक बार अगर किसी जगह से मिट्टी हट जाती है तो फिर से उसका बनना असंभव हो जाता है। एक और भी महत्वपूर्ण मुद्दा यह है कि उपजाऊ मिट्टी में केवल खनिज पदार्थ नहीं होते हैं। वह तो चट्टानों के टूटने से जमा हो सकते हैं। परंतु मिट्टी का अर्थ है कि उसमें कार्बनिक तत्व भी हों और जीव भी हों, सूक्ष्म जीव के रूप में, कीड़े-मकोड़ों के रूप में तथा फफूंद इत्यादि के रूप में। तब जाकर मिट्टी अपने सही रूप को प्राप्त करती हैं खनिज पदार्थ के जमा होने के बाद भी इन सबके जमा होने में बहुत अधिक समय लग सकता है। उसके लिए अनुक्रमण की प्रक्रिया की आवश्यकता होगी जो बहुत लंबे समय में ही पूरी हो सकती है।

वैसे तो भूमि के निम्नीकरण के दूसरे भी कारण है और उन सबका प्रभाव उत्पादकता पर पड़ता है। परंतु भूमि या मिट्टी का कटाव बहुत अधिक महत्वपूर्ण है। कारण है कि अन्य प्रकार के निम्नीकरण में मिट्टी अपनी जगह पर रहती हैं उसके गुण में परिवर्तन अवश्य होता है। जिसका परिणाम होता है कि भूमि की उत्पादकता कम हो जाती है। मिट्टी के अपनी जगह बने रहने के कारण उसका गुण वापस

पूर्व अवस्था में आ सकता है या हम हस्तक्षेप कर उसे वापस स्वस्थ अवस्था में पहुंचा सकते हैं। परंतु एक बार मिट्टी अपनी जगह से हट जाए तो ऐसा संभव नहीं है। पहले ही चर्चा हो चुकी है कि मिट्टी के बनने की प्रक्रिया बहुत धीमी होती है और जटिल भी। वर्तमान में अनुमान है कि भूमि निम्नीकरण के कारण देश को प्रतिवर्ष 28,500 करोड़ रुपये का घाटा हो रहा है और उसका बहुत बड़ा भाग भूमि या मिट्टी के कटाव के कारण है। उदाहरणार्थ लवणता से प्रभावित भूमि का क्षेत्रफल देखें तो वह केवल 43.6 लाख हेक्टेयर है।

अगर हम भूमि या मिट्टी के कटाव की प्रक्रिया पर ध्यान दें तो वह मुख्यत: तीन कारणों से होता है या तीन प्रकार से होता है। पहला, पानी के कारण कटाव, दूसरा हवा के कारण कटाव और तीसरा गुरुत्व के कारण। जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है पहले प्रकार के कटाव में पानी अपनी भूमिका निभाती हैं एक ओर जब वर्षा होती है तो पानी की बूंदे वेग के साथ नीचे आती है। अगर उन्हें किसी प्रकार की रुकावट का सामना नहीं करना पड़ता है तो उनका सारा वेग और पूरी ऊर्जा भूमि अर्थात मिट्टी पर पड़ती है। मिट्टी के कण अपनी जगह से विस्थापित हो जाते हैं। उसके बाद जब भूमि पर पानी बहता है तो उस पानी के लिए मिट्टी के कणों को अपने साथ ले जाना आसान हो जाता है। वैसे अगर वर्षा की बूंदों का योगदान नहीं हो तो भी बहता हुआ पानी अपने साथ मिट्टी के कणों को ले जा सकता है परंतु उसको उतनी सफलता नहीं मिलेगी जितनी कि उस स्थिति में जब मिट्टी के कण पहले से ही विस्थापित हों। यही कारण है कि खाली भूमि से मिट्टी का कटाव तेज़ी में होता है अपेक्षाकृत उस भूमि के जिस पर पेड़ पौधे काफी हों। पेड़-पौधों की उपस्थिति के कारण वर्षा की बूंदे सीधे भूमि पर मार नहीं करती हैं। वह पहले पेड़ पौधों से टकराती हैं फिर वहां से नीचे भूमि पर गिरती हैं। परिणाम यह होता है कि भूमि अर्थात मिट्टी को बहुत कम आघात सहना पड़ता है। दूसरी बात यह होती है कि जब पानी सतह पर बहता है तो उसका वेग और उसकी शक्ति कम हो जाती है क्योंकि उसे पेड़-पौधों के बीच से बहना पड़ता है। यही कारण है कि वन क्षेत्र से जो वर्षा का जल बहकर निकलता है वह बहुत साफ होता है। वहीं जल अगर किसी परती भूमि पर से गुज़रता है तो वह मटियाला होता है। कई बार हम देखते हैं कि वर्षा ऋतु में नदी, तालाब, झील इत्यादि का पानी मटियाला हो जाता है। कारण वही है कि वर्षा जल के साथ मिट्टी के कण बड़ी मात्रा में पानी में आते हैं। बाढ़ग्रस्त क्षेत्रों में ऐसा प्राय: होता है। पानी में जो गाद दिखाई देता है वह असल में मिट्टी के कण होते हैं जो वर्षा जल के साथ बह जाते हैं। पहले भी चर्चा हो चुकी है कि वह गाद या मिट्टी के कण झील, तालाब तथा दूसरे जलाशयों में एकत्रित होकर उनकी क्षमता को कम कर देते हैं। इस प्रकार दोहरा नुक़सान होता है। नदियों की पानी ले जाने की क्षमता भी कम हो जाती है और नदियों के आस-पास बाढ़ की संभावना बढ़ जाती है। एक और समस्या भी उत्पन्न होती है कटी हुई मिट्टी के साथ पोषक तत्वों के कारण। वह पोषक तत्व पानी में पहुंचते हैं और पानी में पोषक तत्वों की मात्रा आवश्यकता से अधिक हो जाती है। परिणाम यह होता है कि पानी में अपतृण तेज़ी से बढ़ते हैं। कई बार तो तालाब, झील इत्यादि पूरी तरह अपतृणों से ढंक जाते हैं। उनकी उपस्थिति के कारण पानी का सही प्रकार से उपयोग कठिन हो जाता है। उस प्रकार के तालाब, झील, नदी इत्यादि में मछली तथा अन्य जलीय जीव जो साधारणत: होते हैं वह गायब हो जाते हैं। कारण होता है कि रात के समय पानी में आक्सीजन की कमी हो जाती है। अपतृण सारा ऑक्सीजन सोख लेते हैं और पानी ऑक्सीजन रहित हो जाता है। ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में या बहुत कमी के कारण मछली तथा अन्य जीव समाप्त हो जाते हैं। वैज्ञानिक इस स्थिति को यूट्रोफीकेशन का नाम देते हैं।

हवा के कारण भी मिट्टी का कटाव उसी तरह होता है जिस प्रकार पानी के कारण। जब हवा चलती है तो उसमें काफी शक्ति होती है। हवा की शक्ति या ऊर्जा का उपयोग ऐतिहासिक तौर पर होता रहा है, जहाज़ को चलाने के लिए, पवनचक्की चलाने के लिए, अनाज साफ़ करने के लिए तथा अन्य कार्य के लिए हवा की वही शक्ति जो भी सामने आता है उसे अपने साथ ले जाने की कोशिश करती है। मिट्टी भी उसी समूह में आता है। अगर मिट्टी के कण आपस में अच्छी तरह जुड़े हुए नहीं हो तो आसानी से हवा के साथ जा सकते हैं। यही कारण है कि सूखी मिट्टी और विशेषकर वैसी मिट्टी जिसमें कार्बनिक पदार्थ कम हो वह बहुत आसानी से हवा के दबाव में आ जाती है और उसके कण हवा के साथ बिखरने लगते हैं और उड़ने लगते हैं। मिट्टी के कणों के बिखरने तथा उड़ने की गति हवा के वेग पर निर्भर करेगी। अगर तेज़ आंधी हो तो मिट्टी के कण बहुत तेज़ी से उड़ते हैं और हवा के साथ-साथ आगे बढ़ते हैं। जब हवा का वेग कम होता है तब वह गुरुत्व के कारण नीचे बैठने लगते हैं। स्पष्ट है कि भारी कण पहले बैठेंगे फिर हल्के। हवा के कारण भी जो मिट्टी का कटाव होता है उससे सुरक्षा प्रदान करने में पेड़-पौधों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। एक ओर पेड़-पौधे हवा के वेग और उसकी शक्ति को कम कर सकते हैं तो दूसरी ओर जहां भी पेड़-पौधे पर्याप्त रूप में होंगे वहां की मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ भी पर्याप्त मात्रा में होगा और हमें मालूम है कि ह्यूम मिट्टी के कणों को एक-दूसरे से चिपकाने में सहायक होता है। यही कारण है कि जंगल की या उपजाऊ खेत की मिट्टी कभी भी भुरभुरी नहीं होती है जबकि परती भूमि की मिट्टी भुरभुरी होती है। स्पष्ट है कि भुरभुरी मिट्टी का कटाव बहुत आसानी से संभव है वैसी मिट्टी की अपेक्षा जो ढेलों के रूप में हो या पानी की उपस्थिति के कारण पंकिल हो।

तीसरे प्रकार का मिट्टी या भूमि का कटाव गुरुत्व के कारण होता है। स्पष्ट है कि इस प्रकार का कटाव समतल भूमि में संभव नहीं है। ऐसा केवल ढलान वाली जगह में ही संभव है। यही कारण है कि इस प्रकार का कटाव केवल पहाड़ी क्षेत्र में होता है या किसी ऐसी जगह पर जहां ढलान का निर्माण किया जाता है किसी विशेष कारण से। ढलान जितना ही अधिक होगा कटाव की संभावना उतनी ही अधिक होगी। यही कारण है कि जहां कहीं ढलान अधिक होता है वहां ऊपर से ढलान वाली सामग्री नीचे की तरफ खिसकती है और अपने साथ रास्ते की सामग्री को भी नीचे की ओर ले जाती है। यह सब उस सामग्री के अपने वजन के कारण होता है। वर्षा के समय खिसकने की प्रक्रिया तीव्र हो जाती है। क्योंकि पानी भी नीचे बहता है

और उस कारण भी मिट्टी तथा अन्य सामग्री नीचे खिसकती है। दूसरा कारण यह होता है कि ढलान पर उपस्थित सामग्री पानी को सोख लेती है और उसका वजन बढ़ जाता है। जब वह नीचे खिसकती है तो उसका प्रभाव अधिक तीव्र होता है।

अगर हम भूमि या मिट्टी के कटाव के कारणों पर विचार करें तो उसके पीछे अनेक कारण दिखाई देते हैं। पहला कारण है भूमि का गलत तरीक़े से उपयोग। स्पष्ट है कि इस प्रक्रिया में हमारी अपनी भूमिका बहुत महत्वपूर्ण होती है। जब हम भूमि का उपयोग गलत तरीक़े से करते हैं तो कटाव की संभावना बढ़ जाती है। उदाहरण के लिए जब किसी क्षेत्र से वन को समाप्त कर दिया जाता है तो उसके साथ वहां उगने वाले अन्य प्रकार के पेड़-पौधे भी गायब हो जाते हैं या बहुत कम हो जाते हैं। परिणाम होता है कि भूमि नंगी हो जाती है। उसके बाद मिट्टी से ह्यूम भी धीरे-धीरे गायब हो जाता है। वैसी स्थिति में अगर तेज़ हवा चलती है या वर्षा होती है तो मिट्टी के कटाव में किसी प्रकार की रुकावट नहीं होती है और वह हवा तथा पानी के साथ कटती जाती है। जिस क्षेत्र में मवेशी या पशुधन अधिक होते हैं वहां भी भूमि के कटाव की संभावना बढ़ जाती है। कारण है कि चराई के कारण घास, शाकीय पौधे एवं पौध इत्यादि समाप्त होते चले जाते हैं। भूमि नंगी अवस्था में या उसके निकट पहुंच जाती है। एक दूसरी बात यह होती है कि पशुओं के चलने-फिरने के कारण भूमि सख्त हो जाती हैं वर्षा जल को भूमि के नीचे जाने का अवसर नहीं मिलता है। वह सतह पर ही बहता है। कुल मिलाकर हवा तथा पानी के कारण कटाव तेज़ी से होने लगता है। गलत तरीक़े से खेती के कारण भी मिट्टी तथा भूमि का कटाव तीव्र हो जाता है। उदाहरण के लिए जब भूमि को एक वर्ष में कई बार जोता जाता है। वार्षिक फ़सल उगाने के लिए। अगर जोतने के समय गहरे हल का उपयोग किया जाता है तो उससे कटाव की संभावना अधिक हो जाती है। भूमि पर अगर जल्दी-जल्दी नई फ़सल उगाई जाती है तो भी कटाव की संभावना बढ़ जाती है। उसके विपरीत अगर ऐसी फ़सल लगाई जाती है जो लंबी अवधि तक खड़ी रहती है तो मिट्टी को सुरक्षा मिलती है। उसी प्रकार अगर एक ही फ़सल को बार-बार उगाया जाता है तब भी भूमि के कटाव की संभावना बढ़ जाती है। एक अन्य कारण है कि अगर भूमि पर समोच्य के साथ-साथ पौधों को नहीं रोपा जाता है बल्कि ऊपर से नीचे की ओर रोपा जाता है तो भूमि या मिट्टी का कटाव तेज़ हो जाता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि भूमि या मिट्टी के कटाव के लिए मुख्यरूप से हम ही जिम्मेवार हैं। वैसे तो वर्षा अधिक होने पर तेज़ हवा के चलने के कारण, ढलान अधिक होने के कारण, कटाव की संभावना होती है। मिट्टी की बनावट एवं संरचना तथा उसमें उपस्थित अवयवों का भी योगदान होता है कटाव को बढ़ाने या घटाने में। परंतु कोई भी भूमि इन सब से केवल एक सीमा तक ही प्रभावित होती है। जब मानवीय हस्तक्षेप अधिक होता है तो इन सबका प्रभाव भी बढ़ जाता है। इसका एक सरल उदाहरण हम अपने शहरी तथा औद्योगिक क्षेत्रों में देख सकते हैं। वहां विकास के नाम पर भवन, उद्योग, सड़क, पार्किंग इत्यादि बनते जाते हैं। कहीं भी मुश्किल से ही जगह छोड़ा जाता है कि भूमि खाली रहे और उस पर पेड़-पौधे उगे। परिणाम यह होता है कि वर्षा के समय पूरा पानी सतह पर ही रहता है और बहता है। उसे नीचे रिसने का अवसर ही नहीं मिलता है। स्पष्ट है कि वह पानी कहीं न कहीं से बहने के लिए रास्ता ढूंढता है या फिर बाढ़ जैसी स्थिति पैदा करता है। जब वह बहता है तो उसकी मात्रा बहुत अधिक होती है और उसकी शक्ति भी अधिक होती है। स्पष्ट है कि जहां भी उसे अवसर मिलता है वह मिट्टी तथा भूमि को काटता जाता है। पहाड़ों की ढलानों पर भी लोग शहर बसा रहे हैं। पक्की सड़के बना रहे हैं, उद्योग लगा रहे हैं। ऐसा करने के लिए जंगल को काटा जाता है और हरियाली को नष्ट किया जाता है। जब उस क्षेत्र में वर्षा होती है या तेज़ हवा चलती है तो मिट्टी तथा भूमि का कटाव होना स्वाभाविक है। भूस्खलन उसी का एक रूप है।

आवश्यक है कि हम इन तथ्यों पर विचार करें तथा प्रकृति के साथ आवश्यकता से अधिक छेड़छाड़ न करें। अन्यथा हमें बहुत ही गंभीर परिणाम को भुगतने के लिए तैयार रहना चाहिए। हमें यह याद रखना चाहिए कि कृषि के बिना हम जी नहीं सकते हैं और कृषि का आधार उपजाऊ भूमि तथा मिट्टी है।

(लेखक वन एवं पर्यावरण मंत्रालय में निदेशक रह चुके हैं।
ई-मेल : arrarulhoque@hotmail.com)

योजना
आगामी अंक

दिसंबर 2013 (विशेषांक)
खाद्य सुरक्षा का अधिकार

जनवरी 2014
जनजाति एवं वंचित वर्ग

भूमि सुधार एजेंडा से गरीबी उन्मूलन

● पी.वी. राजगोपाल

भूमि सुधार की अनुशंसाओं की पृष्ठभूमि में जो तथ्य मैं रखने जा रहा हूं, उस संदर्भ में मैं स्पष्ट करना चाहता हूं कि यह लगातार एक साल तक भारत के 24 राज्यों के 350 जिलों की 80 हज़ार किमी की यात्रा के इर्द-गिर्द रखी गई हैं। इस दौरान हज़ारों लोगों से मेरी मुलाक़ात हुई। इनमें से कई यात्राएं लोक सुनवाइयों के दौरान हुईं, जो समुदायों पर प्रभाव डालती हैं और बौद्धिकों और मध्यवर्गीय लोग भी इसमें शामिल होते हैं।

अपनी यात्राओं के दौरान मैंने देखा कि बड़े पैमाने पर हाशिये के लोगों में भूमिहीनता की स्थिति है। कई समर्पित लोग, स्वयंसेवी संस्थाएं, समुदाय आधारित सामाजिक आंदोलन में लगे लोग इस समस्या को सुलझाने में लगे हैं और उन्हें काफी विरोधों का सामना भी करना पड़ता है। मुझे बताया गया कि लगभग 29 हज़ार दलित गांव ऐसे हैं, जिन्हें मृत शरीर के अंतिम संस्कार करने या दफ़नाने के लिए ज़मीनें नहीं मिलतीं। कई गांवों में लोगों के घरों में न शौचालय हैं और न ही खुली जगह, जहां वे नित्य क्रिया कर सकें। पाठकों को इन तथ्यों से वंचित लोगों की भूमिहीनता और देश के विभिन्न हिस्सों में अब भी मौजूद उनकी दयनीय स्थिति का अंदाजा सहज मिल सकता है।

इस प्रकार ज़मीनी स्तर पर स्थिति का आकलन करने पर संविधान में वर्णित जीने के अधिकार की प्रभावहीनता का अंदाजा लगाया जा सकता है। बड़ी संख्या में लोग अब भी जीने के लिए संघर्ष कर रहे हैं और उन्हें जीने के संसाधनों जैसे– जल, जंगल और ज़मीन आदि उपलब्ध ही नहीं हैं।

कई द्रष्टव्य कारकों में से कुछ कारक इस प्रकार हैं, जो भूमि पर दबाव को इंगित करते हैं:

- दक्ष कारीगरों जैसे बढ़ई, लोहार, बुनकर आदि को वापस कृषि मजदूर के रूप में काम करना पड़ता है, क्योंकि उनके पास काम के अवसर नहीं हैं।
- ज़मीन मालिक अपनी ज़मीन का और विस्तार चाहते हैं, ताकि कृषि योग्य भूमि उनके पास ज्यादा हों।
- उद्योगों और आधारभूत संरचनाओं के लिए ज़मीन की मांग लगातार बढ़ रही है।
- जिनके पास धन है, वे ज़मीन में निवेश करते हैं, ताकि अपने मनोरंजन के लिए फॉर्म हाउस बनवा सकें और उनकी ज़मीन की क़ीमत में इज़ाफ़ा हो।
- रियल एस्टेट बाज़ार का हिस्सा ज़मीन ही बन गई है, इसलिए कृषि से रियल एस्टेट की तरफ झुकाव बढ़ा है।

अगर हम व्यक्ति के परिप्रेक्ष्य में ज़मीन की बात करें, खासकर भूमिहीनों के संदर्भ में तो हम दो तरह की भूमि की बात करते हैं :

- **सिर पर छत के लिए ज़मीन**– 4.4 करोड़ लोगों के सिर पर छत नहीं है।
- **कृषि भूमि**– 30 करोड़ लोगों को कृषि के लिए ज़मीन चाहिए।

जब हम भूमिहीन गरीबों की बात करते हैं, तो लगभग 38.2 फीसदी आबादी को निम्न समुदायों में वर्गीकृत किया जा सकता है :

दलित– 18 प्रतिशत

आदिवासी– 8 प्रतिशत

घुमक्कड़– 11 प्रतिशत (बी.आर. रेंके की रिपोर्ट)

मछुआरे– 1.2 प्रतिशत

कुल– 38.2 प्रतिशत

इनमें भूमिहीन गरीबों के अन्य जाति समूह शामिल नहीं हैं।

आखिर किस किस्म के नीति विचलन की अनुशंसा हम कर रहे हैं? पहला, जिनके सिर पर छत नहीं है, वह सबसे गंभीर समस्या है, क्योंकि वे अपनी पहचान और सम्मान के बिना जीने को विवश हैं। सिर्फ़ आवास योजना से यह समस्या हल नहीं होगी, बल्कि उनकी भूमिहीनता और आवासहीनता को एक समयबद्ध अभियान चला कर हल करना होगा। दूसरा, लोगों को आवास के लिए दी जाने वाली ज़मीन को आवास योजना के साथ संबद्ध नहीं करना होगा (घर बनाने के लिए पैसा देना), क्योंकि गरीब लोगों के पास यदि ज़मीन होगी, तो वे सुरक्षित तरीक़े से अपना आवास तैयार कर ही लेते हैं। तीसरा, ज़मीन का एक टुकड़ा (ग्रामीण इलाक़ों में 10 छटांक) और शहरी इलाक़ों में ढंग के आवास के लिए समुचित स्थान मुहैया करा देने से भारत के लाखों लोगों को हम पहचान और आत्मसम्मान दे पाएंगे। चौथा, ऐसी छत जो ढह न जाए, जल्दी टूटे नहीं, आगजनी का शिकार न हो और लंबे समय के लिए वे उसमें रह पाएं, ऐसा करने से सड़क के किनारे या रेल की पटरियों के किनारे रहने वाले लोगों के जीवन में बड़ा बदलाव आ सकता है। इससे लोगों के जीवन में स्थायित्व आएगा और वे अपने बच्चों का भविष्य और स्वास्थ्य सुनिश्चित कर पाएंगे।

इस समस्या के अंदर झांकते हुए अगर उन लोगों के जीवन को देखकर समझा जाए, तो फिलहाल एक ज़मीन के टुकड़े पर घर बना कर रहते हैं और उनके बीच मतभेद नहीं हुआ करते। अगर ये ज़मीनें उनके नाम कर दी जाएं, तो वे खुद को सुरक्षित महसूस करेंगे और बेहतरी के लिए बैंक और दूसरी वित्त संस्थाओं से मदद के लिए उनका रुख करेंगे। जिन जगहों पर ज़मीन को लेकर मतभेद हैं, वहां की स्थानीय सरकारों को हाशिये पर रहने वालों के हित में क़दम उठा कर मामले को सुलझाने की कोशिश करनी होगी। उद्योग, खनन, डैम आदि के विस्थापित समुदायों के मामले में नये एलएआरआर अधिनियम के तहत समयबद्ध तरीक़े से मामले को सुलझाया जा सकता है। सामान्य या सामुदायिक जमीनें, जिन पर शक्तिशाली लोगों ने कब्ज़ा कर रखा है, उन्हें छुड़ा कर ग़रीबों को छत दी जा

सकती है। जिन जगहों पर उपरोक्त तरीक़े से समस्या नहीं सुलझायी जा सकती, वहां सरकारें ज़मीन खरीद कर ग्रामीण और भूमिहीन लोगों को स्थापित कर सकती है।

लोग और उनकी स्थिति

निम्न सूचीबद्ध लोगों में से कई की स्थिति काफी दयनीय है और वे भूमिहीनता की स्थिति में हैं। ये लोग हैं:

- उद्योगों, खनन, डैम और अन्य लोक आधारभूत विकास परियोजनाओं द्वारा विस्थापित आदिवासी।
- घुमंतू जातियां जैसे–संपेरे, जिप्सी, राणा प्रताप राजघराने के छोटे सर्कस के कलाकार, जो हमेशा से कहीं बसना चाहते हैं, क्योंकि वे अपना पारंपरिक पेशा जारी नहीं रख पाते।
- देश के विभिन्न भागों के वे लोग जो बाढ़ जैसी आपदा में अपना सबकुछ खो चुके हों।
- वैसे लोग जो आंतरिक हिंसा के शिकार हैं, उनका कोई स्थायी बसेरा नहीं रह जाता।
- वे लोग काम की तलाश में प्रवास करते हैं और अस्थायी निवास में रहते हैं।
- घरेलू नौकर और अनौपचारिक क्षेत्र के कामगार, जो इतना कमा नहीं पाते कि भाड़े पर मकान भी ले सकें।
- मछुआरे, जो सूनामी या पर्यटन परियोजनाओं के कारण समुद्र छोड़ने पर मजबूर हो गए हैं।
- चाय बागानों के आदिवासी, एचआईवी संक्रमित लोग, मुक्त कराए गए बंधुआ मजदूर, कुष्ठ रोगी, ट्रांसजेंडर लोग, बीड़ी मजदूर, अकेली औरत और अन्य कई समूह, जो बिना आवास के रहते हैं।

उनकी आधारभूत जरूरतें क्या हैं?

विभिन्न समुदायों की कुछ आधारभूत जरूरतें इस प्रकार हैं :

- कई लोग सालों से ज़मीन के एक टुकड़े पर खेती करते हैं। अगर कोई झंझट न हो, तो वह ज़मीन उनके नाम कर दिया जाना चाहिए।
- कई के पास उनकी ज़मीनों के पर्याप्त कागज़ात हैं, लेकिन जमीन पर उनका कब्ज़ा नहीं है। स्थानीय प्रशासन को इन समस्याओं को लेकर जिम्मेवारी उठानी चाहिए।
- कई लोगों की ज़मीनें अपने ही समुदाय के ताक़तवर लोगों द्वारा बलपूर्वक छीन ली गई हैं। यह कानून-व्यवस्था की समस्या है और स्थानीय प्रशासन को समयबद्ध तरीक़े से उन्हें उनकी ज़मीनों पर कब्ज़ा दिलाना चाहिए।
- कई लोगों की ज़मीनें बेनामी ख़रीद-फ़रोख्त के चलते ले ली गई हैं या बैंक द्वारा नीलाम कर दी गयी हैं। प्रशासन को ऐसी ज़मीनों को चिह्नित करके उनके असल मालिक को कब्ज़ा दिलवाना चाहिए।
- कई प्रगतिशील कानून जैसे सीलिंग, टेनेंसी, पेसा, एफआरए आदि सही तरीक़े से क्रियान्वित नहीं की गई हैं। इनका कानूनी क्रियान्वयन कई लोगों की ज़िंदगियां बदल सकता है।
- ग़रीबों और हाशिये के लोगों के लिए आरक्षित भूमि जैसे तमिलनाडु में पंचनामी भूमि, महाराष्ट्र में गैरान भूमि और आंध्र प्रदेश में डीसी भूमि की पहचान कर योग्य भूमिहीन परिवारों के बीच बांटी जा सकती है।
- जिन भूमिहीनों को ज़मीनें दी जा चुकी हैं, उन्हें बिना भूमि के बदले भूमि की क्षतिपूर्ति के सेज या आधारभूत संरचनाओं के विकास के नाम पर वापस नहीं ली जानी चाहिए, क्योंकि ऐसा करना उनके साथ क्रूर मजाक ही होगा, क्योंकि वे अपनी ज़मीनों के बूते ही मुख्यधारा में शामिल हो रहे होते हैं।
- कई सालों से ज़मीन जोत रहे किसानों के हक़ में वन और राजस्व विभाग के बीच मतभेदों का निपटारा शीघ्र किया जाना चाहिए। (जैसा कि मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ के बीच संतरा उत्पादकों के मामले सुलझाने से 37 लाख एकड़ भूमि के बंटवारे का मार्ग प्रशस्त हुआ)।
- भूदान की ज़मीनों की पहचान, आवंटन स्थापना भी निपटाये जाने चाहिए।
- हर गांव के भूमि रिकॉर्ड पारदर्शी होने चाहिए। आंध्र प्रदेश के वारंगल जिले के जिला कलेक्टर के प्रयासों की बानगी दी जा सकती है, जिसके कारण हाशिये के लोगों को फायदा हुआ।
- सीलिंग के क्रियान्वयन में होने वाली गड़बड़ियों के लिए मनरेगा जैसी सोशल ऑडिट जरूरी है। ऐसे स्थान जहां सिंचित ज़मीन ज्यादा हैं और वे सीलिंग के तहत हैं, फिर से आवंटित किया जाना चाहिए।
- पौधरोपण कंपनियों की अधिकाई भूमि पुनर्वितरण के लिए वापस ले लेनी चाहिए।
- कंपनियों और धार्मिक संस्थाओं की अनुपयोगी ज़मीनें भूमिहीनों को दे देनी चाहिए, ताकि वे अनाज पैदा कर सकें।
- भूमि को अनुपयोगी बनाए रखने का चलन खत्म होना चाहिए और उन्हें भूमिहीनों के हक़ में बांट देना चाहिए।
- एक राष्ट्रीय रिकॉर्ड धारण प्रणाली का विकास किया जाना चाहिए, ताकि कोई व्यक्ति या परिवार देश के विभिन्न हिस्सों में विभिन्न नाम से सीलिंग का उल्लंघन करते हुए ज़मीनें न बटोरता जाए।
- किसी भी तरीक़े की बेनामी ज़मीन होल्डिंग का चलन खत्म होना चाहिए।
- फॉर्म हाउसों के चलन को हतोत्साहित करना चाहिए और उपलब्ध ज़मीनें अनाज पैदा करने के लिए भूमिहीनों के बीच बांट देनी चाहिए।
- भूमिहीनों को पर्याप्त ज़मीन उपलब्ध कराने के लिए सीलिंग की वर्तमान सीमा का पुनरीक्षण होना चाहिए। तकनीक के विकास से भूमि की उत्पादकता अब काफी बढ़ चुकी है, अतः सीलिंग की सीमा को नीचे लाकर अतिरिक्त जमीन का पुनर्वितरण कर देना चाहिए।

जमीन के मुद्दे से संबंधित अनुशंसाएं

भारत सरकार का दस सूत्री एजेंडा ऐसी कुछ समस्याओं के निराकरण की दिशा में ठोस शुरुआत है। ये हैं:

- राष्ट्रीय भूमि सुधार नीतियों पर राज्य सरकारों से समझौते।
- लाखों लोगों, खासकर ग्रामीण इलाक़ों के लोगों के आवास की गारंटी करने वाला राष्ट्रीय विधेयक।
- वन भूमि से संबंधित केंद्रीय कानूनों का ठोस क्रियान्वयन।
- औरतों समानता के अधिकार को मजबूती देते हुए उन्हें भूमि स्वामित्व देना।
- भूमि प्राधिकरणों का क्रियान्वयन सुनिश्चित करना।
- सरकार और नागरिक समाज द्वारा संयुक्त रूप से मामलों पर नज़र। ❑

(लेखक गांधीवादी सामाजिक कार्यकर्ता और नयी दिल्ली स्थित गांधी शांति प्रतिष्ठान के उपाध्यक्ष हैं। साथ ही वह एकता परिषद के अध्यक्ष भी हैं जिसने 2007 में अहिंसक भूमिहीन जनसंदेश यात्रा तथा 2012 में जनसत्याग्रह का आयोजन किया था।
ई-मेल : ekta.rajagopal@gmail.com)

Geog./भूगोल by आलोक रंजन

OUR RESULTS → 2011 Ranks - 4, 20, 27, 35 ..... 100 (approx) | 2010 Ranks - 18, 21, 26, 31 ..... 100 more.

2012 : - RESULTS

- Total results with geography 300+ (could be more...).
- 12* students in top 100 (based on received phone calls & thanksfullness) & total result more han 100... including 2, 4, 12, 27, 36, 40, 50, 52, 53, 54 ... more than 100.

हिन्दी माध्यम में भी शानदार सफलता–Ranks - 36, 40, 50, 52, 53, 54, 93 ...

भूगोल सर्वोत्तम वैकल्पिक विषय के रूप में

- उच्चतम औसत अंक देने वाला । जैसे – 425, 423, 407 आदि।
- लगभग 3000 मुख्य परीक्षा में शामिल परीक्षार्थियों में से 300 सफल प्रतियोगी प्रत्येक वर्ष।
- प्राथमिक परीक्षा में 30 से 40 प्रश्न, प्रत्येक वर्ष।
- 250 अंकों का निबंध (भूगोल विषय से संबंधित)।
- सामान्य अध्ययन – प्रश्नपत्र प्रथम (पाठ्यक्रम का 50%) + द्वितीय प्रश्नपत्र (20%) + तृतीय प्रश्नपत्र का (80%) भूगोल। विषय से संबंधित अर्थात् भूगोल विषय सामान्य अध्ययन मुख्य परीक्षा का लगभग (300 से 400) अंकों को समाहित करता है।

कक्षा कार्यक्रम

100 दिवसीय कक्षा कार्यक्रम

- अत्यंत सावधानीपूर्ण तैयार की गई उत्तम पाठ्यसामग्री।
- समग्र टेस्ट सीरीज कार्यक्रम।
- विगत वर्षों के प्रश्नों का विश्लेषण एवं व्याख्या।
- मानचित्र (Mapping) पर 12 दिवसीय विशेष कक्षाएं।
- मैप, डायग्राम आदि पर दक्षता पूर्ण कक्षाएं।
- आदर्श उत्तर एवं उत्तर लेखन कला, कक्षा कार्यक्रम के एक विशेष भाग के रूप में ।
- छात्रों द्वारा लिखित उत्तरों का साप्ताहिक मूल्यांकन, विशेष शिक्षक समूह द्वारा।

BATCHES STARTS : 20th Oct.

बैच - I मुखर्जी नगर (हिन्दी)

बैच - II मुखर्जी नगर (ENGLISH)

बैच - III करोल बाग (ENGLISH)

DIGMANI EDUCATIONS

www.alokranjansias.in

Corporate office – A-18 Top Floor, Young Chamber, Behind Batra Cinema, Mukherjee Nagar, Delhi-9,
Ph : 27658009, 9311958008, 9311958009

Branch Office - 17-A/20, IIIrd Floor, Near Metro Station (Near Titan Showroom), Ajmal Khan Road, Karol Bagh, Delhi-05,
Ph : 28756008, 9311958007, 9311958009

YH-176/2013

जल प्रबंधन में जवाबदारी की चुनौती

● अरुण तिवारी

भारत में कितने ही इलाक़े हैं, जहां बारिश में बाढ़ आती है और बारिश गुज़र जाने के मात्र तीन महीने बाद ही नदियां सूख जाती हैं और भूजल खुद में एक सवाल बनकर सामने खड़ा हो जाता है। यह सवाल 'तालों में ताल भोपाल ताल' के इलाक़े पानी पर भी है और कभी झीलों के लिए प्रसिद्ध रहे बंगलुरु के पानी पर भी। न्यूनतम 100 मिली बारिश वाला जैसलमेर भी आज पेयजल की कमी वाले इलाक़े में शुमार है और अधिकतम 11,400 मिलीमीटर वर्षा वाला चेरापूंजी भी तथा नदियों के शानदार संजाल वाला उत्तराखंड भी। गुणवत्ता को लेकर पंचनद वाले पंजाब के भूजल पर भी आज सवालिया निशान है और अपनी सब स्थानीय नदियों को सुखा चुकी दिल्ली के भूजल पर भी। दिलचस्प है कि भूजल में आर्सेनिक और फ्लोराइड जैसे ख़तरनाक रसायन वाले इलाक़े सबसे अधिक बाढ़ वाले बिहार में भी मौजूद हैं और हर साल सूखा से सूखते राजस्थान में भी।

यह विरोधाभासी परिदृश्य स्वयंमेव प्रमाण है कि भारत में पानी की कमी नहीं, पानी के प्रबंधन में कमी है। प्रमाण इस बात के भी हैं कि पानी का प्रबंधन न सरकारों को कोसने से ठीक हो सकता है, न रोने से और न किसी के चीखने-चिल्लाने से। हम इस मुगालते में भी न रहें कि नोट या वोट हमें पानी पिला सकते है। वोट पानी पिला सकता, तो देश में सबसे ज्यादा वोट वाले उत्तर प्रदेश के बांदा-महोबा-हमीरपुर में पानी की कमी के कारण आत्महत्याएं न होती। सिर्फ़ नोट से ही यदि पानी का सुप्रबंधन संभव होता, तो सबसे अधिक बांध और हमारी पंचवर्षीय योजनाओं में पानी का सबसे अधिक बजट खाने वाले महाराष्ट्र में इस वर्ष गर्मी आने से पहले ही सिंचाई और पेयजल का संकट न गहराया होता। यदि कोई कहे कि कोई कच्छ, चेन्नई और कलपक्कम की तरह करोड़ों फेंककर खारे समुद्री पानी को मीठा बनाने की मंहगी तकनीक के बूते सभी को पानी को पिला देगा, तो यह भी हक़ीक़त से मुंह फेर लेना है।

हक़ीक़त यह है कि हमें हमारी जरूरत का कुल पानी न समुद्र पिला सकता है, न ग्लेशियर, न नदियां, न झीलें और न हवा व मिट्टी में मौजूद नमी। पृथ्वी में मौजूद कुल पानी में सीधे इनसे प्राप्त मीठे पानी की हिस्सेदारी मात्र 0.325 प्रतिशत ही है। आज भी पीने योग्य सबसे ज्यादा पानी (1.68 प्रतिशत) धरती के नीचे भूजल के रूप में ही मौजूद है। हमारी धरती के भूजल की तिजोरी इतनी बड़ी है कि इसमें 213 अरब घन लीटर पानी समा जाए और हमारी ज़रूरत है मात्र 160 अरब घन लीटर। भारत सरकार खुद मानती है कि मानसून के दौरान बहकर चले जाने वाली 36 अरब घन लीटर जलराशि को हम भूजल बैंक में सुरक्षित कर सकते हैं। केंद्रीय जलसंसाधन मंत्री श्री हरीश रावत जी ने एक बैठक में माना कि सरकार के पास कोई आंकड़ा नहीं है कि हम कुल वर्षाजल का कितना प्रतिशत संचित कर पा रहे है लेकिन सच यही है कि निकासी ज्यादा है और संचयन कम। ऐसे में पानी के खातेदार कंगाल हो जाएं, तो क्या आश्चर्य!

सच यह भी है कि अभी तक देश में जलसंरचनाओं के चिह्नीकरण और सीमांकन का काम ठीक से शुरू भी नहीं किया जा सका है। भारत के पास कहने को राष्ट्रीय व प्रादेशिक स्तर पर अलग-अलग जलनीति जरूर है, लेकिन हमारे पानी प्रबंधन की चुनौतियों को जिस नदी नीति, बांध नीति, पानी प्रबंधन की जवाबदेही तथा उपयोग व मालिक़ाना सुनिश्चित करने वाली नीति, जलस्रोत से जितना लेना, उसे उतना और वैसा पानी वापस लौटाने की नीति की दरकार है, वह आज भी देश के पास नहीं है। बावजूद इसके सभी के सच तो यही है कि यदि आज भी हमें हमारी ज़रूरत का पूरा पानी यदि कोई पिला सकता है, तो वे हैं सिर्फ़ और सिर्फ़ बारिश की बूंदें। ज़ाहिर है कि भूजल प्रबंधन ही पानी प्रबंधन की सबसे पहली और ज़रूरी बुनियाद है।

बूंदों पर टिकी बुनियाद

बारिश की बूंदों को सहेजने की हमारी संस्कृति पिछले दो दशक से सरकारी

योजनाओं, दस्तावेज़ों और बयानों में उतर जरूर आई है; स्वयंसेवी संस्थाओं ने भी 'रेन वाटर हार्वेस्टिंग' की बहुप्रचारित शब्दावली सीख ली है; लेकिन देश के एक बहुत बड़े समुदाय को अभी भी यह समझने की जरूरत है कि छोटी और परंपरागत इकाइयां ही हमें वह जलसुरक्षा वापस लौटा सकती हैं, जो खाद्य सुरक्षा और औद्योगिक सुरक्षा सुनिश्चित करने की कोशिशों में हमने पिछले 66 वर्षों में खोई है।

यह दावा कागज़ पर समझाना मुश्किल है, लेकिन लद्दाख, करगिल, लाहौल और स्पीति जैसे शुष्क पहाड़ी और ठंडे रेगिस्तानों के जिंग और कूलों को देखकर समझा जा सकता है कि यदि जलसंचयन का स्थानीय कौशल न हो, तो वहां आज भी आबादी का रहना मुश्किल हो जाए। सूरत में हीरों का व्यापार करने वाले मथुर भाई सवानी बता सकते हैं कि सौराष्ट्र के अपने गांव खोपला में जलसंचयन इकाइयां बनाने का काम क्यों किया।

जलसंचयन में सिर्फ़ विदर्भ के गोंड परिवारों का पलायन रोकने की क्षमता ही नहीं है, जूनागढ़ और पोरबंदर की 15 तहसीलों में पानी का खारापन भी नियंत्रित हुआ है। अपनी बनाई हज़ारों चालों के बूते ही ऊरैखाल, दूधतोली (जिला-पौड़ी गढ़वाल) के 38 गांवों अपनी सूखीगौला नदी का नाम बदलकर गढ़गंगा रखने का गौरव हासिल कर सके हैं। जलसंचयन के ऐसे संकल्प व उपयोग के अनुशासन के कारण ही जिला-अलवर (राजस्थान) की नदी 'अरवरी' के पुनर्जीवन का प्रयास वर्ष-2003 के अंतर्राष्ट्रीय नदी महोत्सव (ब्रिसबेन, ऑस्ट्रेलिया) की अंतिम सूची में सम्मान दिया गया। अब यदि मारवाड़ के 38वें राठौर प्रधान महाराजा गजसिंह उर्फ बापजी, उद्योगपति रुइया व डालमिया परिवार से लेकर पीएचडी चैंबर्स ऑफ कॉमर्स या सी. आई.आई जैसे प्रतिष्ठित व्यापारिक संगठन भी जलसंचयन का काम कर खुद को धन्य मानते हैं, तो आखिर कोई तो चमत्कार होगा, मेघों की नन्ही बूंदों को सहेजने में।

पानी की बूंदों को सहेजने के ये उदाहरण नये ज़माने के लिए भले ही नये हों, लेकिन दुनिया में इनका इतिहास बहुत पुराना है। ताल, पाल, झाल, चाल, खाल, बंधा, बावड़ी, जोहड़ कुंड, पोखर, पाइन, तालाब, झील, आपतानी आदि अनेक नामों से जलसंचयन की अनेक प्रणालियां भारत में समय-समय पर विकसित हुईं। जिनके पास नक़द धेला भी नहीं था, उन्होंने भी बारिश के पहले अक्षया तृतीया से अपने पुराने पोखरों की पालें ठीक करने का काम किया। बारिश के बाद देवउठनी एकादशी से जागकर इस देश ने लाखों-लाख तालाब बनाए। तालाबों की तलहटी से गाद निकासी का काम कभी रुकने नहीं दिया। अपनी आय के दो टके का 10 फीसदी कुंआ-बावड़ी-जोहड़ आदि धर्मादे में लगाने के कारण ही सेठ-साहूकार एक समय तक महाजन यानी 'महान जन' कहलाए। समयानुसार नहरों के माध्यम से नदीजल का सीमित उपयोग भी समाज ने अपनी पानी जरूरत की पूर्ति के लिए किया। सतही व भूजल के अपने इस सुंदर प्रबंधन के कारण ही सदियों तक भारत पानीदार बना रह सका।

क्यों टूटा साझा प्रबंधन?

इतनी सुंदर और उत्तम प्रणालियां टूट क्यों गईं? समाज व सरकारें इन्हें जीवित क्यों नहीं रख सकीं? इतिहास गवाह है कि पानी का काम कभी अकेले नहीं हो सकता। पानी एक साझा उपक्रम है। अत: इसका प्रबंधन भी साझे से ही संभव है। वैदिक काल से मुगल शासन तक शामिलात संसाधनों का साझा प्रबंधन नरिष्ठा, सभा, समिति, खाप, पंचायत आदि के नाम वाले संगठित ग्राम समुदायिक ग्राम्य संस्थान किया करते थे। अंग्रेजी हुकूमत ने भूमि-जमींदारी व्यवस्था के बहाने नये-नये कानून बनाकर ग्राम पंचायतों के अधिकारों में खुला हस्तक्षेप प्रारंभ किया। इस बहाने पंचों को दंडित किया जाने लगा। इससे साझे कार्यों के प्रति पंचायतें धीरे-धीरे निष्क्रिय होती गईं। नतीजन सदियों की बनी-बनाई साझा प्रबंधन और संगठन व्यवस्था टूट गई। रही-सही कसर अंग्रेज़ी हुकूमत ने राजस्व बटोरने की दृष्टि से नदी, नहर व वनों को सरकारी नियंत्रण में लेकर पूरी कर दी।

लद्दाख, करगिल, लाहौल और स्पीति जैसे शुष्क पहाड़ी और ठंडे रेगिस्तानों के जिंग और कूलों को देखकर समझा जा सकता है कि यदि जलसंचयन का स्थानीय कौशल न हो, तो वहां आज भी आबादी का रहना मुश्किल हो जाए।

बड़ी चुनौती : अंग्रेजी हुकूमत के शासन से पूर्व प्राकृतिक संसाधनों पर लोगों का मालिक़ाना हक़ था। नहरें थे, लेकिन उनसे सिंचाई पर सिंचान नहीं वसूला जाता था। इन संसाधनों के सरकारी होते ही लोगों ने इन्हें पराया मान लिया। हालांकि 'जिसकी भूमि-उसका भूजल' का निजी अधिकार पहले भी भू-मालिकों के हाथ था और आज भी लेकिन भूजल का अदृश्य भंडार हमें दिखाई नहीं देता। हमारा समाज आज भी यही मानता है कि जल-जंगल के सतही स्रोत सरकार के हैं। अत: पानी पिलाना, सिंचाई व जंगल का इंतजाम उसी के काम हैं; वही करे। आज, जब केंद्र के साथ-साथ राज्य सरकारों ने भी अनेक योजनाओं के क्रियान्वयन के अधिकार पंचायतों को सौंप दिए हैं; बावजूद इसके सरकारीपन को पराया मानने की नजीर और नज़रिया आज पहले से बदतर हुआ है। इसी सोच व नासमझी ने पूरे भारत के जल प्रबंधन का चक्र उलट दिया है। पूरी जवाबदेही अब सरकार के सिर आ गई है। समाज हकदारी खो चुका है। परिणामस्वरूप आज भारत के पानी प्रबंधन को बाढ़-सुखाड़ से इतर तीन नये संकट से जूझना पड़ रहा है।

संकट

शोषण, अतिक्रमण और प्रदूषण : 21वीं सदी के इस दूसरे दशक में भारत के पानी समक्ष पेश नये संकट तीन ही हैं। जो उद्योग या किसान जेट अथवा सबमर्सिबल पंप लगाकर धकाधक भूजल खींच रहा है, उस पर कोई पाबंदी नहीं कि जितना लिया, उतना पानी वापस धरती को लौटाए। हालांकि अभी हाल ही में राष्ट्रीय हरित न्यायाधिकरण ने एक मामले में उद्योगों को ऐसे आदेश जारी किए हैं; लेकिन जब तक 'रेलनीर' या हमारे दूसरे सरकारी संयंत्र खुद यह सुनिश्चित नहीं करते कि उन्होने जिन इलाक़ों का पानी खींचा है, उन्हें वैसा और उतना पानी वे कैसे लौटाएंगे, तब तक सरकार गैर-सरकारी पक्ष को कैसे बाध्य कर सकती है? यही हाल अतिक्रमण का है। देश में जलसंरचनाओं की ज़मीनों पर सरकारी-गैर-सरकारी कब्ज़े के उदाहरण एक नहीं, लाखों हैं। तहसील अदालतों से लेकर सर्वोच्च न्यायालय तक के कई ऐतिहासिक आदेशों के बावजूद स्थिति बहुत बदली नहीं है। जहां तक प्रदूषण का सवाल है, हमने उद्योगों

को नदी किनारे बसाने के लिए दिल्ली-मुंबई औद्योगिक गलियारा, लोकनायक गंगापथ और गंगा-यमुना एक्सप्रेस वे आदि परियोजनाएं तो बना ली, लेकिन इनके किनारे बसने वाले उद्योंगों द्वारा उत्सर्जित प्रदूषण के स्रोत पर प्रदूषण निपटारे की कोई ठोस व्यवस्था योजना हम आज तक सुनिश्चित नहीं कर पाए हैं; जबकि प्रदूषण प्रबंधन का सिद्धांत यही है।

समाधान

जिस तरह कैंसर का निदान उसके स्रोत से किया जाता है, उसी तरह प्रदूषण का निपटारा भी उसके स्रोत पर ही किया जाना चाहिए। मल हो या क़चरा दोनों को ढोकर ले जाना सिर्फ़ सामाजिक व नैतिक ही नहीं, बल्कि वैज्ञानिक रूप से भी पाप है। भूजल शोषण नियंत्रण का उपाय भूजल स्रोतों का नियमन, लाइसेंसीकरण या रोक नहीं हो सकता। हां! अकाल आदि आपदाकाल छोड़कर सामान्य दिनों में जलनिकासी की अधिकतम गहराई सीमित कर भूजल-शोषण कुछ हद तक नियंत्रित अवश्य किया जा सकता है। ऐसा करने से स्थानीय उपभोक्ताओं को जलसंचयन के लिए भी कुछ हद तक बाध्य किया जा सकेगा। किंतु सभी प्रकार के शोषण रोकने का यदि कोई सबसे पहला और बुनियादी सिद्धांत है, तो वह यह कि हम जिससे जितना लें, उसे उतना और वैसा वापस लौटाएं। यह सिद्धांत पानी पर भी पूरी तरह लागू होता है। अतिक्रमण रोकने के लिए जलसंरचनाओं का चिह्निकरण और सीमांकन कर अधिसूचित करना एक सफल उपाय साबित हो सकता है।

हक़दारी-जवाबदारी की जुगलबंदी ज़रूरी

इन सिद्धांतों को व्यवहार में लाकर हम इन संकटों से निजात पा सकते हैं, लेकिन बाज़ार के लालच और प्राकृतिक उपक्रमों के प्रबंधन को लेकर सरकार की तरफ ताक़ने की सामाजिक आदत से निजात पाने का रास्ता एक ही है: प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन की जवाबदारी तथा मालिकाने व उपयोग की हक़दारी सुनिश्चित करना। वन प्रबंधन में वनवासियों की सहभागिता और लाभ में भागीदारी प्रावधान के परिणाम बेहतर आए हैं। क्यों? क्योंकि अतिक्रमण, शोषण और प्रदूषण हमारे प्राकृतिक संसाधनों के नष्ट होने के कारण नहीं हैं। ये परिणाम है, प्राकृतिक संसाधनों के प्रति परायेपन की हमारी सोच का।

यूं देखें, तो जहां-जहां समाज ने मान लिया है कि ये स्रोत भले ही सरकार के हों, लेकिन इनका उपयोग तो हम ही करेंगे, वहां-वहां चित्र बदल गया है। वहां-वहां समाज पानी के संकट से उबर गया है। समाज और शासन-प्रशासन के साझे से संकट पर विजय के उदाहरण भी इस देश में भी कई हैं। उ. प्र. के जिला सहारनपुर में पांवधेई नदी की प्रदूषण मुक्ति की कथा आज भी प्रशासनिक पहल, औद्योगिक सहयोग और जननिगरानी की साझी मिसाल के तौर पर जानी जाती है। पंजाब की कालीबेई की प्रदूषण मुक्ति भी मिसाल भी साझी ही है। महाराष्ट्र में अग्रणी नदी पुनर्जीवन की जारी कोशिश इस कड़ी में ताज़ा है। महोबा, मंगलौर और देवास में तालाबों-झीलों को जीवन लौटाने के नये काम ऐसे ही साझे के उदाहरण हैं लेकिन हर जगह का समाज व प्रशासन ऐसे ही हों, ज़रूरी नहीं है। अत: हक़दारी और जवाबदारी की जुगलबंदी ज़रूरी है। सरकारी के प्रति परायेपन के भाव से समाज को उबारने का यही तरीक़ा है। तीन सवाल भारतीय पानी प्रबंधन के समक्ष नई चुनौती बनकर खड़े ही हैं : प्राकृतिक संसाधनों का मालिक कौन? शासन-प्रशासन प्राकृतिक संसाधनों की ठीक से देखभाल न करे, तो जनता क्या करे? जलापूर्ति पर निर्णय का अधिकार किसका? पानी के व्यावसायीकरण ने यह चुनौती और बढ़ा दी है।

जब तक 'रेलनीर' या हमारे दूसरे सरकारी संयंत्र खुद यह सुनिश्चित नहीं करते कि उन्होने जिन इलाक़ों का पानी खींचा है, उन्हें वैसा और उतना पानी वे कैसे लौटाएंगे, तब तक सरकार गैर-सरकारी पक्ष को कैसे बाध्य कर सकती है?

इन्ही सवालों के कारण पानी के स्थानीय, अंतर्राज्यीय व अंतर्राष्ट्रीय विवाद हैं। इसी के कारण लोग पानी प्रबंधन के लिए एक-दूसरे की ओर ताक रहे हैं। इसी के कारण सूखती-प्रदूषित होती नदियों का दुष्प्रभाव झेलने के बावजूद समाज नदियों के पुनर्जीवन के लिए व्यापक स्तर पर आगे आता दिखाई नहीं दे रहा। अभी आम धारणा यह है कि सार्वजनिक जरूरतों की पूर्ति करना शासन-प्रशासन का काम है। उनके काम में दखल देना कानून अपने हाथ में लेना है। प्राचीन रोमन साम्राज्य द्वारा स्थापित पब्लिक ट्रस्टीशिप के वैधानिक सिद्धांत समेत दुनिया भर के आधुनिक ट्रस्टीशिप के सिद्धांत इसे खारिज करते हैं। भारतीय संविधान की धारा 21 और 32 इन सिद्धांतों को समर्थन देती हैं।

स्पैन मोटल प्राइवेट लिमिटेड द्वारा बनाए जा रहे रिजोर्ट के लिए हिमाचल प्रदेश में ब्यास नदी की धारा के ख़िलाफ़ दायर याचिका संख्या-182 (वर्ष 1996) पर फ़ैसला सुनाते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने बाकायदा न सिर्फ़ पब्लिक ट्रस्टीशिप सिद्धांत का हवाला दिया है, बल्कि इसे भारतीय कानून का हिस्सा भी बताया है। वर्ष 1997(1) सर्वोच्च न्यायालय मामला संख्या-388 में आदेश देते न्यायमूर्ति कुलदीप सिंह और सागीर अहमद ने सरकार की भूमिका और अधिकारों की स्पष्ट व्याख्या इंगित की है। पब्लिक ट्रस्टीशिप के सिद्धांत के मुताबिक जंगल, नदी, समुद्र, हवा जैसे महत्वपूर्ण संसाधनों की सरकार सिर्फ ट्रस्टी है, मालिक नहीं। ट्रस्टी का काम देखभाल करना होता है। अदालत ने ऐसे संसाधनों को निजी कंपनी को बेचने को अन्यायपूर्ण माना है।

इस शानदार फ़ैसले के बावजूद यह बहस तो फिलहाल खुली ही है कि यदि सरकार ट्रस्टी है, तो इन प्राकृतिक संसाधनों का मालिक कौन है? सिर्फ संबंधित समुदाय या प्रकृति के समस्त स्थानीय जीव? दूसरा, यह कि मालिक यदि मालिक समुदाय या समस्त जीव हैं, तो क्या उन्हें हक है कि वे सौंपे गए संसाधनों की ठीक से देखभाल न करने की स्थिति में सरकार को ट्रस्टीशिप से बेदखल कर, इन संसाधनों की देखभाल खुद अपने हाथ में ले ले? जो जवाबदारी के लिए हक़दारी ज़रूरी मानते हैं, उन्हे आज भी इन सवालों के जवाब की प्रतीक्षा है। लेकिन उन्हे यह कब याद आएगा कि जवाबदारी निभाने से हक़दारी खुद-ब-खुद आ जाती है? याद रखने की जरूरत यह भी है कि कुदरत की सारी नियामतें सिर्फ़ इंसान के लिए नहीं हैं, दूसरे जीव व वनस्पतियों का भी उन पर बराबर का हक़ है। अत: उपयोग की प्राथमिकता पर हम इंसान ही नहीं, कुदरत के दूसरे जीव व वनस्पतियों की प्यास को भी सबसे आगे रखें। ❑

(लेखक पत्रकार हैं एवं जल तथा पर्यावरण संबंधी विषयों के विशेषज्ञ हैं।
ई-मेल : amethiarun@gmail.com)

सिविल सेवा प्रधान परीक्षा 2014 हेतु सत्र आरम्भ...

लोक प्रशासन by अभय कुमार

7 नवम्बर प्रातः 9:00 बजे

सिविल सेवा परीक्षा 2012 में अंतिम रूप से चयनित सभी विद्यार्थियों को ढेर सारी बधाईयाँ...

GAURAV K. SINGH	REENA NIRANJAN	MANISH K. PATHAK	SANTOSH K. ROY	MD. MUSTAQUE	DHAN LAKSHMI	BALRAM MEENA	PRAVEEN KUMAR	DHARM RAJ MEENA
RANK - 190	RANK - 211 (साक्षात्कार)	RANK - 562 (साक्षात्कार)	RANK - 665	RANK - 722	RANK - 747	RANK - 847	RANK - 897	RANK - 933

लोक प्रशासन (अभय कुमार कक्षा कार्यक्रम) ही क्यों?

- हिन्दी माध्यम के लिये सरल, संक्षिप्त, बोधगम्य, सफलतादायी व सुरक्षित विषय जिसकी तैयारी सिर्फ 100 दिनों में हो जाती है।
- सिविल सेवा परीक्षा की नयी योजना में सामान्य अध्ययन में लोक प्रशासन का अधिकतम पाठ्यक्रम रखा जाना स्वयं इस विषय की महत्ता व प्रासंगिकता हो स्पष्ट करता है।
- अब सामान्य अध्ययन के चौथे पत्र में सत्यनिष्ठा, अभिवृत्ति, ऐथिक्स हेतु केस अध्ययन भी पढ़ना है और लोक प्रशासन में केस अध्ययन के माध्यम से ही इन विषय वस्तुओं का अध्ययन करना होता है।
- अब नये दौर में किसी अन्य वैकल्पिक विषय का चयन करने के उपरांत भी लोक प्रशासन का अध्ययन करना ही होगा क्योंकि सामान्य अध्ययन में लगभग 65% पाठ्यक्रम लोक प्रशासन से हैं। अतः लोक प्रशासन ही सबसे बेहतर विकल्प है।
- सामान्य अध्यन के नये पाठ्यक्रम में **द्वितीय पत्र (अंतर्राष्ट्रीय सम्बन्ध को छोड़ कर)** एवं **तृतीय पत्र (सरकारी बजट, समावेशी विकास, आपदा प्रबंधन, उग्रवाद व आंतरिक सुरक्षा इत्यादि)** तथा **चतुर्थ पत्र (सम्पूर्ण पाठ्यक्रम)** की तैयारी लोक प्रशासन के साथ ही सम्भव है, क्योंकि ये सभी लोक प्रशासन के ही पाठ्यक्रम हैं। कोई भी विद्यार्थी लोक प्रशासन के पाठ्यक्रम से तुलना करते हुये स्वयं यह समझ सकते हैं। इस प्रकार लोक प्रशासन के अध्ययन के साथ-साथ सामान्य अध्ययन का लगभग 65% पाठ्यक्रम तैयार किया जा सकता है। अन्य किसी वैकल्पिक विषय के चयन से विद्यार्थियों को यह लाभ प्राप्त नहीं हो सकता है।

SYNERGY
AN INSTITUTE FOR CIVIL SERVICES EXAMINATION

पता - 102, प्रथम तल, मनुश्री बिल्डिंग, कॉमर्शियल कॉम्पलेक्स, पोस्ट ऑफिस के पीछे, मुखर्जी नगर दिल्ली-9

9910852132, 9650682121, 01127654518

YH-180/2013

ई-सरकार : संभावनाएं और चुनौतियां

● **योगेश के. द्विवेदी**
नृपेंद्र पी. राणा
एंटनिस सी. सिमिन्तिरस

ई-सरकार (जिसे इलेक्ट्रॉनिक सरकार, ऑनलाइन सरकार और डिजिटल सरकार के नाम से भी जाना जाता है) नागरिकों और अन्य हितधारकों के लिए सार्वजनिक सेवाओं के वितरण को बदलने के संदर्भ में हाल के समय के महत्वपूर्ण विकासों में से एक है।

आमतौर पर यह सरकार से नागरिकों (जी 2 सी), कारोबार (जी 2 बी), कर्मचारियों (जी 2 ई), और सरकारों (जी 2 जी) के लिए सरकार की जानकारी और सेवाएं प्रदान करने के लिए सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) का उपयोग करने के संदर्भ में है। इस पृष्ठभूमि में ई-सरकार अक्षमता, भ्रष्टाचार और नौकरशाही को खत्म करने और सेवाओं के वितरण में प्रभावशीलता को बढ़ाने के लिए सार्वजनिक सेवाएं प्रदान करने को एक तकनीकी संबलता के तौर पर देखा जा रहा है।

आईसीटी से लाभ प्राप्त करने और समय पर नागरिक सेवाओं का पारदर्शी एवं परेशानी मुक्त वितरण सुनिश्चित करने के लिए भारत सरकार ने 1990 के दशकांत के दौरान एक ई-सरकार कार्यक्रम की शुरुआत की और वर्ष 2000 में 'सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम' को लागू किया।

इस अधिनियम के मुख्य उद्देश्य, इलेक्ट्रॉनिक ठेकों की पहचान करना, कंप्यूटर अपराधों को रोकना और, इलेक्ट्रॉनिक फाइलिंग को संभव बनाना था। इसके बाद वर्ष 2006 में, भारत में ई-सरकार की पहल को बढ़ाने के लिए राष्ट्रीय ई-शासन योजना (एनईजीपी) को सरकार से मंजूरी मिली। देशभर में इसे सरकारी सेवाओं के वितरण में सुधार लाने के उद्देश्य से आम लोगों के इलाक़ों में कॉमन सर्विस सेंटर (सीएससी) के माध्यम से शुरू किया गया था।

फरवरी 2012 में, लगभग 97,159 सीएससी अलग-अलग ब्रांड के नामों से चलाए जा रहे थे अब तक जिन्होंने लोगों को सेवाएं देना शुरू कर दिया था (आईडीजी, 2013)।

इसके बाद से सरकार ने ई-सरकार के साथ कई अन्य उपक्रमों की शुरुआत की जिनमें से कुछ ई-फाइल प्रबंधन, ई-अवकाश, ई-टूर, आयकर सेवाएं, ऑनलाइन पासपोर्ट सेवाएं, पेंशन सेवाएं, ई-प्रापण और उत्पाद और सीमा शुल्क सेवाएं आदि हैं। लगभग सभी राज्य सरकारों और केंद्र शासित प्रदेशों ने भी अपने नागरिकों और व्यवसायों की सेवा करने के लिए अलग से अपनी ई-सरकारी सेवाओं को लागू किया है।

अत्यधिक विशिष्ट सेवाओं में से कर्नाटक की 'भूमि', मध्य प्रदेश की 'ज्ञानदूत' आंध्र प्रदेश की 'स्मार्ट गवर्नमेंट' और तमिलनाडु की 'सारी' प्रमुख सेवाएं शामिल हैं। इसके साथ ही, कुछ ई-सरकार सेवाओं को केंद्रीय और राज्य दोनों सरकार के स्तरों पर लागू किया गया है। ई-सरकार की सेवाओं में, जैसे कि शिकायत प्रबंधन प्रणालियां, ई-जिला प्रणालियां, ऑनलाइन मतदाता सूची और बिल भुगतान प्रणालियां इन सेवाओं के कुछ उदाहरण हैं।

ई-सरकार अपने हितधारकों को सरकार की क्षमता और प्रभाव बढ़ाने के संदर्भ में बेहतर सेवाएं प्रदान करने में पारदर्शिता सक्षम करने के लिए, किसी भी समय और कहीं भी सरकारी सेवाओं के लिए उपयोग की अनुमति, उपयोगकर्ता केंद्रित आईसीटी सेवाएं प्रदान करने, लागत और समय को कम करने की नौकरशाही को कम करने और सरकारी संगठनों के बीच संचार और समन्वय बढ़ाने के अवसरों का क्षेत्र प्रदान करता है (देखें तालिका-1)।

ई-सरकार का कार्यान्वयन, पारदर्शिता में सुधार, जवाबदेही के विकास, नागरिक सशक्तीकरण, सेवाओं के लिए समय और लागत कम करने और बेहतर शासन उपलब्ध करने की दिशा में किसी भी सरकार के परिवर्तन में एक आवश्यक घटक है। ई-सरकार से सरकार को अधिक परिणामोन्मुखी बनने में मदद मिली है।

ई-सरकार द्वारा दिए गए लाभों को तेज़ी से नागरिकों तक पहुंचाने और कुशल सेवाएं देकर, उनके सशक्तीकरण को बढ़ावा देकर भारत सशक्त हो रहा है। देश में विभिन्न ई-सरकारों की पहल से उभरते आंकड़ों से संकेत मिलते हैं कि यह सरकार के भीतर और सरकार तथा अन्य हितधारकों के बीच सूचना और व्यवहार की दक्षता, प्रभावशीलता, पारदर्शिता और जवाबदेही के बदलाव की शुरुआत है।

भारत में ई-प्रशासन लगातार ऐसे नागरिक केंद्रित, सेवा अभिविन्यास और पारदर्शिता (एनईजीपी, 2013) के पहलुओं में सुधार के लिए विभागों को कंप्यूटरीकरण से विकसित किया गया है जिससे कि शासन की बारीकियों को इसमें समाहित किया जा सके।

हालांकि, केंद्रीय और राज्य दोनों सरकारें ई-सरकार द्वारा मुहैया की गई सेवाओं का पूंजीकरण करने की कोशिश कर रही हैं, इसकी क्षमता नागरिकों और व्यवसायों को इस तरह की सेवाओं का लाभ प्रारंभ करते समय सरकार की पहल को आम जनता तक पहुंचाने की है जिससे उपयोगकर्ताओं द्वारा अपनी क्षमता को सही मायने में महसूस किया जा सकता है।

भारत की एनईजीपी की वेबसाइट पर उपलब्ध ताज़ा आंकड़ों के रूप में भारत के विभिन्न राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों में ई-सरकार की लगभग 968 वेबसाइटें मौजूद हैं। हालांकि, यह अभी विश्व ई-सरकार विकास रैंकिंग (संयुक्त राष्ट्र नागरिक सर्वेक्षण, 2012) के मामले में 125 देशों से पीछे है।

इससे पता चलता है कि सरकार भले ही, ई-सरकार के विकास और कार्यान्वयन पर अत्यधिक राशि ख़र्च कर रही है, फिर भी इस क्षेत्र में बाधाओं और चुनौतियों के चलते भारत को अन्य राष्ट्रों (कोरिया गणराज्य, नीदरलैंड, ब्रिटेन, डेनमार्क और अमरीका) के समान स्थिति लाने के लिए इस पर काम करने की जरूरत है। इस संबंध में, ई-सरकार को सफल और विकासशील बनाने के लिए इस तरह की बाधाओं और चुनौतियों (देखें तालिका-2) की पहचान की गई है।

ऐसी बाधाओं और चुनौतियों के कारण, दुनियाभर में ई-सरकार के उपयोग के समग्र स्तर भले ही अपेक्षाकृत कम रहता है, यद्यपि विकासशील देशों में सरकारों की एक बड़ी संख्या ऐसी सेवाओं का उपयोग बढ़ाने में बड़े पैमाने पर निवेश और प्रयास किये जा रहे हैं (संयुक्त राष्ट्र ई-शासन सर्वेक्षण, 2012)।

चुनौतियों और बाधाओं की पहचान भारतीय संदर्भ में अच्छी तरह से लागू होती हैं। ये मुद्दे तकनीकी, आर्थिक, और प्रकृति में सामाजिक होते हैं। भारत में उपलब्ध कौशल क्षमता का उच्च स्तर के साथ प्रौद्योगिकी का तेज़ी से विकास, ई-सरकार की सफल वसूली के लिए तकनीकी चुनौतियां कम महत्वपूर्ण हैं।

इसके विपरीत, भारत में ई-सरकार की पहल करने के लिए प्रकृति में सामाजिक और आर्थिक जागरुकता का ऐसा अभाव, पहुंच, और ग्रामीण भारत में रहने वाली विशाल

तालिका-1

ई-सरकार द्वारा प्रदान किए गए मुख्य अवसर

अवसर	टिप्पणी	स्रोत
प्रभावशीलता और दक्षता में वृद्धि	सरकार के उद्देशों और कार्यों को पूरा करने के रूप में विकसित सरकारी सेवाएं	बर्टोट ईटी एएल. (2010), द्विवेदी ईटी एएल. (2009, 2012 अ), और शरीफ ईटी एएल. (2011)
बेहतर सेवाएं	ई-सरकार हितधारकों के लिए जल्दी और समय पर सेवाएं प्रदान कर सकती हैं	शरीफ ईटी एएल. (2011)
पारदर्शिता	बिना किसी बाहरी हस्तक्षेप के सरकार से प्राप्तकर्ताओं को सीधे सेवा	बर्टोट ईटी एएल. (2010) और द्विवेदी ईटी एएल. (2009, 2012ब),
कहीं भी किसी भी समय उपगम्य	क्योंकि ई-सरकार द्वारा अपनी सेवाएं वेब-सक्षम तकनीक से उपलब्ध कराई जाती हैं जिससे उन तक कहीं भी किसी भी समय पहुंचा जा सकता है	शरीफ ईटी एएल. (2011)
उपयोगकर्ता केंद्रित आईसीटी समर्थित सेवाएं	नगरिको, व्यवसायों और स्वयं सरकारों के लिए अभीष्ट प्राथमिक सेवाएं	बर्टोट ईटी एएल. (2010) और द्विवेदी ईटी एएल. (2012ब)
न्यूनीकृत लागत और समय	सेवाएं इंटरनेट के माध्यम से उपलब्ध कराई जाती हैं इसलिए यह समय और लागत में प्रभावी है	द्विवेदी ईटी एएल. (2012अ, 2012ब) और शरीफ ईटी एएल. (2011)
न्यूनीकृत नौकरशाही	ई-सरकार किसी भी सरकारी सेवाओं का लाभ उठाने के लिए प्राधिकरण के पदानुक्रम को कम करता है	द्विवेदी ईटी एएल. (2012अ, 2012ब)
सरकारी संगठनों के बीच संचार व समन्वय	स्वचालित सेवाएं विभिन्न संगठनों द्वारा इस्तेमाल की जाती है जिससे संचार व समन्वय आसान हो जाता है	द्विवेदी ईटी एएल. (2012ब)

तालिका-2

ई सरकार की पहल में सफलता की प्राप्ति में प्रमुख चुनौतियां और बाधाएं		
बाधा/चुनौती	**टिप्पणी**	**स्रोत**
खंडित/एकीकरण की कमी	- दी गई सेवाओं का खंडन -अनुप्रयोगों का दोहराव	द्विवेदीईटी एएल.(2012ब) और वीरैकोडी एट अल (2011)
तकनीक साक्षरता और पहुंच	-तकनीको को समझने और इस्तेमाल करने की योग्यता -प्रत्येक के पास इंटरनेट उपलब्धता	बर्टोट ईटी एएल. (2010) और वीरैकोडी ईटी एएल. (2011) राणा ईटी एएल. (2013) और शरीफ ईटी एएल. (2011)
आईसीटी-संबंधित चुनौतियां	ई-सरकार के लागू होने तथा परिकल्पना में सरकार द्वारा तकनीकी चुनौतियों का सामना	राणा ईटी एएल. (2013) और वीरैकोडी ईटी एएल. (2011)
विश्वास में कमी	ई-सरकार की सेवाओं पर अविश्वास की असंगति	राणा ईटी एएल. (2013) और वीरैकोडी ईटी एएल. (2011)
गोपनीयता और सुरक्षा	गेपनीयता की भावना की सुरक्षा का अभाव	राणा ईटी एएल. (2013) और शरीफ ईटी एएल. (2011)
डिजिटल विभेद	ई-सरकार की सेवाओं का उपयोग करने में सामाजिक व्यवस्था में लोगों के बीच असमानता	द्विवेदी ईटी एएल. (2009, 2012), राणा ईटी एएल. (2013) और शरीफ ईटी एएल. (2011)

आबादी द्वारा ई-सरकार की सेवाओं का उपयोग सबसे बड़ी चुनौतियां हैं (द्विवेदी ईटी एएल., 2012)।

सरकार ने पिछले कुछ वर्षों में इन चुनौतियों से उबरने के लिए काफी प्रयास किए हैं, जिसमें ग्रामीण आबादी के एक बड़े हिस्से को भी जोड़ा गया है। इसके अलावा, सरकार ने टिकाऊ विकास की जरूरत महसूस करते हुए तीन सालों में 250,000 पंचायतों के लिए ब्रॉडबैंड कनेक्टिविटी का एक सेतु बनाने की घोषणा की है (संयुक्त राष्ट्र नागरिक सर्वेक्षण, 2012)।

भारत में सभी भौगोलिक क्षेत्रों को जोड़ने के लिए एक फिक्स्ड लाइन टेलीकम्यूनीकेशन नेटवर्क का उपयोग मुश्किल होगा। मोबाइल फोन और वायरलेस नेटवर्क का जाल व्यापक रूप से समाज के सभी वर्गों में दूर तक फैला हुआ है। यहां एम-सरकार, ई-सरकार की सेवाओं के व्यापक प्रसार के लिए एक उभरता विकल्प हो सकता है।

वे लोग जो स्वयं मोबाइल उपकरण खरीदने में अक्षम हैं वे सरकार द्वारा सहायता प्राप्त कर सकते हैं, जिससे कि गरीबी रेखा के नीचे रहने वाले इन लोगों को मुफ्त मोबाइल मुहैया कराए जा सकें। यदि भारत को एक न्यायसंगत सूचना समाज बनाना है तो एक मार्गदर्शक की तरह कोशिश की जा सकती है जिससे ये लाभ ले सकें। जिसे मोबाइल-आधारित अनुप्रयोगों के विकास के साथ मिलकर किया जा सकता है।

ई-सरकार या मोबाइल आधारित सरकारी सेवाओं के उपयोग से कम साक्षर नागरिकों की समस्याओं को हल किया जा सकता है। यह आवाज आधारित मोबाइल अनुप्रयोगों के विकास की योजना के लिए उपयोगी हो सकता है जिससे सरकार आधारित सेवाओं को सभी वर्गों के लिए उपलब्ध कराया जा सकता है।

तीव्रगति के इंटरनेट के प्रावधान के साथ विशाल ग्रामीण संयोजकता डिजिटल विभेद के मुद्दे को हल करने की दिशा में केवल एक प्रारंभिक चुनौती पार होगी। प्रासंगिक एजेंसियों के लिए संबोधन में सबसे जटिल चुनौती जागरुकता की कमी है। यह नागरिकों के बुनियादी ढांचे और ई-सरकार अनुप्रयोगों को सक्षम करने के वास्तविक उपयोग के लिए शर्त है कि संसाधनों और प्रेरणा की सुविधा के माध्यम से संबोधित किया जाना चाहिए।

यह ग्रामीण नागरिकों के लिए जागरुकता की कमी, तकनीकी योग्यता, और आवश्यक संसाधनों के रूप में विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। ऐसी बाधाओं को पार करने के लिए एक पर्याप्त संभव समाधान आईसीटी कौशल (जैसे कि कंप्यूटर, इंटरनेट और ई-सरकार अनुप्रयोगों संचालित करने के लिए योग्यता) के साथ नागरिकों को लैस करने के लिए व्यापक प्रशिक्षण का प्रावधान होगा।

सीएससी की एक सीमित संख्या का प्रावधान नागरिकों को उपलब्ध ई-सरकार की सेवाओं देने की दिशा में एक उचित कदम है। हालांकि, इस तरह की सेवाओं को व्यापकता से अपनाने के लिए आवश्यक है कि ई-सरकार उपयोगकर्ताओं को महत्वपूर्ण बनाने के लिए, सीएससी की संख्या को बढ़ाया जाना चाहिए ताकि सभी ग्रामीण समुदायों में दूर तक उसकी पहुंच बन सके।

ऐसा करने में विफल होने पर नागरिक के साथ बातचीत के लिए पारंपरिक माध्यम इसका नेतृत्व कर सकते हैं, इसलिए, ई-सरकार के अपनाए जाने से आशान्वित लाभों और विकास को महसूस कराने में इसे लंबा समय लग सकता है। इस तरह की सेवाओं तक पहुंचने में भाषा एक अन्य बाधा है, इसलिए ई-सरकार की मुख्य सेवाओं को हिंदी और अंग्रेजी के साथ-साथ क्षेत्रीय भाषाओं में उपलब्ध कराया जाना चाहिए।

इसके अलावा, स्थानीय स्तर पर (जैसे, ब्लॉक और ग्राम पंचायतें) पर्याप्त कौशल और योग्यता के साथ नागरिकों को ई-सरकार की सेवाओं का उपयोग करने की आवश्यकता है। इन सेवाओं का उपयोग करने के लिए अन्य नागरिकों को प्रभावित करने वाले इन नागरिकों को सामाजिक उत्प्रेरक (विजेता) के रूप में देखा जाना चाहिए। जिससे कि सेवाओं के लाभ के लिए उन्हें जागरूक बनाने और सुरक्षा और गोपनीयता की चिंताओं को कम करने से उनका विश्वास बढ़े।

इस तरह के सामाजिक प्रतिनिधि भी आवश्यक कौशल और योग्यता के साथ नागरिकों को लैस करने के लिए एक सहायक के रूप में कार्य कर सकते हैं। भारत के संदर्भ में, आईसीटी आधारित प्रणालियों (जैसे

कजाखस्तान में) का उपयोग लोकतांत्रिक प्रक्रिया में कर नागरिक की भागीदारी के मामले में अग्रणी देशों में उचित सर्वोत्तम अभ्यास और रणनीतियों जानने और लागू करने के लिए चिन्हित किया जाना चाहिए।

विभिन्न स्तरों (केंद्रीय और राज्य स्तर) पर प्रणालियों का विखंडन आपूर्ति पक्ष पर प्रणाली एकीकरण के अभाव में अधिक प्रचलित है। केंद्रीय और राज्य सरकारों द्वारा किए गए ई-सरकारों के समान विश्लेषण से पता चलता है कि देशभर में विभिन्न सरकारें इसे लागू कर रही हैं। यह केवल विकास और उन्हें बनाए रखने के मामले में संसाधनों की बर्बादी है, जो आंकड़ों का दोहराव और त्रुटियों के साथ समस्याएं पैदा करता है।

केंद्रीय और राज्य दोनों स्तरों पर इस तरह से एक एकीकृत योजना को लागू करना चाहिए कि केंद्रीय सरकार के स्तर पर विकसित एक ही ई-सरकार प्रणाली प्रत्येक राज्य सरकार के लिए व्यक्तिगत मापदंड शामिल कर सकते हैं या सिर्फ केंद्र और राज्य स्तरों पर उपयोग के विभिन्न स्तरों की पेशकश कर सकते हैं।

मौजूदा प्रणाली के मानचित्रण के लिए निरर्थक प्रणालियों के परिचय की जरूरत है। इसके अलावा, यह विश्लेषण, मानचित्रण और मूल्यांकन प्रक्रिया की पहचान करने के लिए सभी प्रयास करने चाहिए जो किसी भी पैतृक प्रणाली (जो अन्य प्रणालियों के साथ एकीकृत नहीं किया जा सकता है) में मौजूद हैं। संक्षेप में उभरती प्रणालियों को सुव्यवस्थित होने की जरूरत है और नई प्रौद्योगिकियों के कार्यान्वयन की नई प्रणालियों को कुछ पैतृक प्रणालियों के साथ बदला जाएगा या उद्देश्य का समाधान प्रदान करने के लिए एकीकृत किए जाने आवश्यकता है।

इसके अलावा सेवाओं के मूल्यांकन के कुछ सबूत हैं जो कि पहले से ही मौजूद हैं। इलेक्ट्रॉनिक सेवाओं के विकास के लिए जांच के क्रम में मूल्यांकन इतना ज्यादा आवश्यक है कि वांछित मूल्य प्राप्त किया जा रहा है या इससे कोई सीख लेने की जरूरत है। प्रभावी मूल्यांकन के बिना इसी तरह की गलतियां दोबारा हो सकती हैं।

हम निम्नलिखित विचारों के साथ उपरोक्त चर्चा से निष्कर्ष पर आते हैं। केंद्रीय और राज्य स्तर पर सरकारों द्वारा ई-सरकार के बुनियादी ढांचे के कुछ पहलुओं को स्थापित करने में भारी निवेश किया गया है, सेवाएं पूरी तरह से प्रदान करने के बावजूद यह अवसरों का दोहन करने में सक्षम नहीं रही। इसके अलावा, जब तक सांस्कृतिक परिवर्तन नहीं होता है तब तक नौकरशाही को कम करने, पारदर्शिता का समर्थन करने और नागरिक सशक्तीकरण में वृद्धि करने के लिए अकेले ई-सरकार वेबसाइटों के विस्तार से कोई मदद नहीं मिलेगी। इन सबके बाद, नागरिक केवल तभी ई-सरकार पर भरोसा करेंगे जब उन्हें सरकार और सरकारी एजेंसियों पर विश्वास होगा। दूसरे शब्दों में, भारत को ई-सरकार से ई-शासन की ओर ले जाने की जरूरत है। इसके साथ ही ई-सरकार के सामने सामाजिक तथा आर्थिक चुनौतियां और बाधाएं चिंताजनक हैं, वे मुख्यतः अल्पशिक्षित और आर्थिक रूप से कमजोर ग्रामीणों के विशाल जनसमूह के बीच पहुंच से संबंधित हैं। ❑

(लेखक योगेश के. द्विवेदी ब्रिटेन के स्वानसी विश्वविद्यालय के प्रबंधन विद्यालय में पर्सनल चेयर धारण करते हैं। नृपेंद्र पी. राणा इसी संस्थान में व्याख्याता हैं एवं लेखक एंटनिस सी सिमिन्तिरस भी इसी संस्थान में रणनीति तथा विपणन विभाग के अध्यक्ष एवं अंतर्राष्ट्रीयकरण के लिए प्रभारी डीन हैं।

ई-मेल : y.k.dwivedi@swansea.ac.uk,
n.p.rana@swasea.ac.uk,
a.l.s.mintiras@swansa.ac.uk)

क्रॉनिकल
आईएएस एकेडमी
सिविल सर्विसेज़ क्रॉनिकल की पहल
हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्यम
सिविल सेवा परीक्षा 2014
फाउन्डेशन बैच
मुख्य विशेषताएं
• एक वर्षीय कार्यक्रम
• सामान्य अध्ययन (प्रारंभिकी व मुख्य परीक्षा)
• पूर्णतः संशोधित अध्ययन सामग्री
• टेस्ट-शृंखला (प्रारंभिक परीक्षा)
• 100 प्रतिशत अद्यतन अध्ययन सामग्री
• उत्कृष्ट विशेषज्ञों के मार्गदर्शन में कक्षा
• असीमित वैयक्तिक शंका समाधान सत्र
• साप्ताहिक समसामयिकी पुस्तिका
• सीमित बैच आकार
प्रारम्भ 18 नवम्बर
पंजीकरण जारी
उपलब्ध वैकल्पिक विषयः इतिहास, लोक प्रशासन एवं दर्शनशास्त्र
सिविल सर्विसेज़
क्रॉनिकल
23 वर्षों से सफलता का मार्गदर्शक
नॉर्थ कैंपस (दिल्ली सेन्टर)
2520, हडसन लेन, विजय नगर चौक, दिल्ली-09
(जी.टी.बी मैट्रो स्टेशन के समीप)
SMS: "CAMPUS YJ" to 56677
www.chronicleias.com
8800495544, 9953120676
YH-182/2013

जैविक सपने

बात उत्तराखंड के एक कृषि मेले की है। देश के कई राज्यों से किसान इस कृषि मेले में भाग लेने आए थे। उनमें से एक था जम्मू के आर एस पुरा तहसील का किसान स्वर्ण लाल। स्वर्ण लाल मेले में प्रदर्शित जैविक खेती (ऑरगेनिक फार्मिंग) से संबंधित आधुनिकतम उपकरणों को काफी उत्सुकता और कौतूहल भरी नज़रों से देख रहा था। वहां उसने जो कुछ भी देखा उससे उसे एक सुखद सपने की उम्मीद जगी। उसने भी अपने पंचायत क्षेत्र सुचेतगढ़ में इस नयी तकनीक को आजमाने का प्रण किया।

उसके मन में एक विश्वास जगा कि इस विधि को अपनाकर वह भी कुछ विशेष कर दिखाएगा। और सचमुच कुछ सालों बाद उसका यह सपना सच साबित हुआ।

जम्मू शहर से 35 किलोमीटर दूर, भारत-पाक सीमा के पास स्थित, सुचेतगढ़ क्षेत्र अपने उत्तम कोटि के चावल के लिए मशहूर रहा है। मगर पिछले दो दशकों से रासायनिक खाद और कीटनाशक दवाओं के अत्यधिक उपयोग ने कृषि उत्पाद पर बुरा असर तो डाला ही है, साथ ही साथ किसानों पर अतिरिक्त ख़र्च का बोझ भी डाल दिया है। जैसाकि हम सभी जानते हैं कि आजकल अधिक उत्पादन के लिए किसान खाद और कीटनाशक दवाओं का उपयोग करते हैं। इसका सीधा असर कृषि में ज़्यादा ख़र्च के रूप में तो महसूस किया जाता ही है साथ ही साथ उत्पाद की गुणवत्ता भी इससे प्रभावित होती है। स्वर्ण लाल की उत्तराखंड की यह यात्रा, जिसे कृषि उत्पाद विभाग ने कृषि जागरुकता कार्यक्रम के अंतर्गत आयोजित किया था, ने उस क्षेत्र को जैविक कृषि के एक प्रयोगशाला के रूप में तब्दील कर दिया। स्वर्ण लाल के अनुसार ''इस यात्रा के दौरान जैविक कृषि ने उसके विचारों को काफी प्रभावित किया मगर सबसे बड़ी चुनौती इसे छोटे और गरीब किसानों के अनुकूल बनाना था।'' उसी यात्रा के दौरान उसकी बातचीत उत्तराखंड के उन किसानों से हुई जिन्होंने इस विधि को अपनाया था। उन किसानों से उसने बहुत-सी जानकारियां एकत्र की और इस प्रकार की खेती करने का निश्चय किया। और यहीं से उसने एक नयी ज़िंदगी की शुरुआत की जिससे उसके और उस क्षेत्र के करीब 80 किसानों की ज़िंदगी ही बदल गई।

सबसे पहले उसने इस विधि का प्रयोग एक छोटे से भूखंड पर किया और उसकी

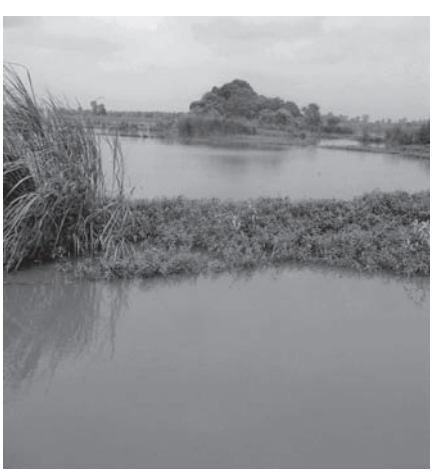

खुशी का ठिकाना न रहा जब उसका यह प्रयोग सफल रहा। आज करीब डेढ़ साल के बाद स्वर्ण लाल ने 82 किसानों को इस विधि को अपनाने के लिए प्रेरित किया है। आज सुचेतगढ़ के कुल 1,100 एकड़ कृषि योग्य भूमि में से 350 एकड़ पर जैविक खेती की जाती है।

इस पहल के सफल होने के पीछे सबसे बड़ा कारण है इन किसानों के रहन-सहन का तरीक़ा। इसमें से अधिकांश परिवार खेती के साथ-साथ पशुपालन भी करते हैं। इन पशुओं के गोबर प्राकृतिक खाद का सबसे अच्छा स्रोत हैं। इसके अलावा ये किसान हरित खाद और वर्मी कंपोस्ट का भी इस्तेमाल करते हैं जो जैविक खेती के अनुकूल है। अतः इन किसानों को यह विश्वास है कि अगले साल जैविक खेती करने वाले परिवारों की संख्या 300 के ऊपर हो जाएगी।

कुछ साल पहले तक बुआई के समय मांग बढ़ जाने के कारण यूरिया, डीएपी और पोटाश जैसे खादों की किल्लत हो जाती थी। एक स्थानीय किसान रमेश लाल का कहना है कि बुआई के समय किसानों का ज़्यादा समय पंजाब जैसे राज्यों से खाद लाने में ही बर्बाद हो जाता था। साथ ही साथ यह काफी महंगा भी साबित होता था। रमेश लाल का कहना है कि यह भी एक कारण था कि आर एस पुरा के लोगों ने जैविक खेती को अपनाया।

हालांकि जैविक खेती को बहुत से किसान अपना चुके हैं मगर फिर भी कुछ ऐसे किसान हैं जो अभी भी रासायनिक खादों

का ही इस्तेमाल करते हैं। ऐसे में जैविक खेती करने वाले किसानों की शिकायत है कि भारी बारिश के दौरान ऐसे खेतों से पानी बहकर अक्सर जैविक खेती वाले क्यारियों में आ जाता है जिससे जैविक फ़सलें भी प्रदूषित हो जाती है। अत: इनका फायदा पूर्ण रूप से तभी मिल सकता है जब ज़्यादा से ज़्यादा किसान जैविक कृषि पद्धति का इस्तेमाल करें। इससे इन किसानों के उत्पाद को सरकार द्वारा शुद्धता का प्रमाण-पत्र भी मिलने में आसानी होगी। और अंतत: सभी किसानों को इसका फायदा मिलेगा।

इस संबंध में कृषि उत्पाद विभाग के निदेशक अजय खजूरिया का कहना है कि आप कोई भी नया काम शुरू करें, परेशानियां तो आती ही हैं। मगर एक बार आप शुरुआत कर दें तो परिस्थितियां धीरे-धीरे अनुकूल होती जाती हैं।

श्री खजूरिया का कहना है कि हम लोगों ने छह कंपनियों के साथ समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए हैं जिसके अंतर्गत ये कंपनियां विभिन्न प्रकार के फ़सलों को उपजाने में हमारी मदद करेंगी। ये कंपनियां जैविक खेती करने वाले किसानों के उत्पादों की मार्केटिंग भी करेंगी। हमारा यह करार तीन सालों का है और हमने अभी-अभी दूसरे साल में प्रवेश किया है। तीन सालों में हमारे जैविक उत्पादों को सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त हो जाएगी। विश्व बाज़ार में जैविक उत्पादों की बढ़ती मांग को देखते हुए हमें विश्वास है कि जैविक खेती करने वाले किसानों को काफी फायदा होगा।

दलीप काचरू, जोकि शेरे कश्मीर कृषि विश्वाविद्यालय के विज्ञान और तकनीकी इकाई कृषि प्रणाली अनुसंधान केंद्र के विभागाध्यक्ष हैं, का कहना है कि जैविक कृषि शुरुआत में भले ही बहुत ज़्यादा फायदेमंद साबित न हो मगर एक निश्चित समय के बाद किसानों को इसकी महत्ता समझ में आएगी, और उनको इसका भरपूर लाभ मिलेगा। क्योंकि इससे मिट्टी की उर्वरा शक्ति और जलस्तर पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ने की संभावना है।

श्री काचरू ने चिंता जताई कि आर एस पुरा क्षेत्र की मिट्टी में ऑरगेनिक कार्बन की मात्रा (ओसीसी) घटकर 0.45, 0.50, 0.52 रह गई है जबकि इसकी मात्रा 0.60, 0.80, और 1 होनी चाहिए। इसी कमी को पूरा करने के लिए किसान अक्सर ज़्यादा खादों का उपयोग करते हैं जिससे जल और पर्यावरण दोनों प्रदूषित होते हैं।

श्री काचरू ने कहा कि शुरुआत में तो जैविक कृषि में उत्पाद में कमी पाई गई है मगर ओसीसी की कमी को प्राकृतिक खादों के उपयोग से पूरा किया जाता है। हमलोग आशा करते हैं कि अगले छह वर्षों में ओसीसी स्तर में बढ़ोतरी होगी और उत्पादन भी ज़्यादा होने लगेगा। अगर इन वैज्ञानिकों की भविष्यवाणी सच निकली तो स्वर्ण लाल ने अपने राज्य जम्मू के लिए जो सपने देखे थे, वे जरूर सच साबित होंगे। ❑

(चरखा फीचर्स)

I.A.S AUDIO TUTORIALS
(AUDIO EDUCATON FORUM) (SINCE 1998)
www.audioturiorials.org
I.A.S. 2013 MAINS & I.A.S. 2014
Available in English & Hindi Both

THE MEDIUM OF LISTENING WHEN SMOOTH SOOTHING AND EFFECTIVE ENABLES MIND TO RETIAN THE MATERIAL PARMANENTLY &IMPRESSIVELY - FRANCIS BACON

Coaching Through Audio CDs at most Nominal price yet more effective and better than any class-room coaching You can join. More than 70% Result in Prelimns for last 10 years. Equally successful in Mains examination

Salient Features :
1. Whole Vast Sylabus reduced to easy, systematic and focussed form
2. comprehensive, descriptive and analytical presentationl
3. combining extensive and intensive approach
4. Highly time saving and time Utilising
5. Result oriented, inexpensive, more effective than class room coaching
6. prepared by research scholars, subject experts and professors

**** Recording is Done in Professional Voice in Modern Studio.****
**** All items are technically guaranteed. ****
**** Material is sent by speed post or courier.****

PRELIMNS
General Studies (PART I) : Total 50 Hours (Min.) Price Rs. 5000/-
General Studies (PART II) : Total 50 Hours (Min.) Price Rs. 5000/-
CSAT : Total 50 Hours (Min.) Price Rs. 5000/-
Prepared by experts in Audio & Print
POSTAL CHARGE RS. 150/- FOR EVERY SET
PAYMENT IS THROUGH BANK DRAFT OR A/C TRANSFER IN FAVOR OF AUDIO EDUCATION FORUM

MAINS
General Studies (MAINS) PAPER I, II, III, IV, V :
Each paper Rs. 4000/- (About 40 Hours Each paper)
Indian History (M) : Total 50 Hours (Min.) Price Rs. 5000/-
Geography (M) : Total 50 Hours (Min.) Price Rs. 5000/-
World History (M) : Total 30 Hours (Min.) Price Rs. 4000/-
Optional (Mains) :Pub Admin, Political Science, Sociology, Anthropology Geography
50 Hours (Min) Per Subject Price Rs. 5000/-

Available in Hindi Medium Also
CALL For Free Demo : 9811538412, 9891984233
AUDIO EDUCATION FORUM
A-40, SECTOR-47, NOIDA-201303 (U.P.) TEL. 9811538412, 9891984233
e-mail: audioeducationforum@gmail.com

YH-183/2013

टिकाऊ विकास के लक्ष्यों के प्रति प्रतिबद्ध

भूमि अधिग्रहण, पुनर्वास और पुनर्व्यवस्थापन विधेयक

● देवेंद्र उपाध्याय

संसद ने मानसून सत्र के दौरान 'भूमि अर्जन, पुनर्वासन और पुनर्व्यवस्थापन विधेयक-2013' को अपनी मंजूरी देकर सन् 1894 के विधेयक को बदलकर जबरन भूमि अधिग्रहण के अभिशाप से किसानों को मुक्ति दे दी है। विधेयक को पारित कराने में कमोवेश सभी राजनीतिक दलों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हुए यह स्पष्ट करने का प्रयास किया कि वे ग़रीबों और किसानों के हितों के ख़िलाफ़ नहीं बल्कि उनके हिमायती हैं। इस विधेयक के कानून बन जाने पर न केवल किसानों को सही मुआवज़ा मिलेगा बल्कि कृषि भूमि की लूट पर भी रोक लगेगी।

भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1994 में कई कमियां थीं। इसमें भू-स्वामी की सहमति के बिना भूमि अधिग्रण करने की कार्रवाई करने, सुनवाई की न्यायोचित व्यवस्था की कमी, विस्थापितों के पुनर्वास एवं पुनर्व्यवस्थापन के प्रावधानों का अभाव, तत्काल अधिग्रहण का दुरुपयोग, भूमि के मुआवज़े की कम दरें, मुकदमेबाजी आदि प्रमुख थीं। सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश गणपति सिंघवी ने टिप्पणी की थी कि ''भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1994 एक 'घपला बन गया है।'' उन्होंने यह भी टिप्पणी की कि 1894 के कानून का प्रारूप इस प्रकार तैयार किया गया प्रतीत होता है जिसमें ''आम आदमी के हित'' का ज़रा भी ध्यान नहीं रखा गया।

सर्वोच्च न्यायालय की एक अन्य खंडपीठ ने अपनी टिप्पणी में कहा था :

''अधिनियम में निहित प्रावधान के संबंध में यह महसूस किया गया है कि ये प्रावधान भू-स्वामियों तथा भूमि में हित रखने वाले लोगों का पर्याप्त रूप से बचाव नहीं करते हैं। अधिनियम में ऐसे व्यक्तियों की पुनर्वास संबंधी व्यवस्था नहीं की गई है जिन्हें उनकी भूमि से हटा दिया गया है तथा ऐसे जबरन भूमि अधिग्रहण से उनकी आजीविका प्रभावित होती है। सारांश में कहा जाए तो अधिनियम पुराना हो गया है तथा शीघ्रातिशीघ्र इसके स्थान पर नयी व्यवस्था किए जाने की आवश्यकता है। ऐसा कानून बनाया जाए जो संवैधानिक प्रावधानों के लिहाज से उचित, व्यावहारिक, विशेष तथा संविधान के 300(क) की आवश्यकताओं के अनुरूप हों। हम आशा करते हैं कि भूमि अधिग्रहण के संबंध में विस्तृत अधिनियम की प्रक्रिया अनावश्यक रूप से और विलंब किए बिना पूरी की जाए।''

भूमि अर्जन, पुनर्वासन और पुनर्व्यवस्थापन विधेयक, 2013 के बारे में कहा गया है कि यह तेज़ी से उभरती हुई अर्थव्यवस्था और उन विविध सामाजिक संरचनाओं के बीच एक समझौता है जिन्हें संवदेनशीलता के साथ समझे जाने की ज़रूरत है, अब किसी भी भू-स्वामी (किसान) की इच्छा के विरुद्ध उसकी ज़मीन का जबरन अधिग्रहण करना बीते दिनों की बात हो जाएगी और अनुचित अधिग्रहण पर रोक लग जाएगी। हर राज्य में किसानों के अपने हक़ के लिए आंदोलन हो रहे हैं। जिन पर इस कानून के लागू होने से विराम लग जाएगा क्योंकि इसमें लीज की व्यवस्था भी की गई है और बीज पर अधिग्रहण की शर्तें लागू नहीं होंगी। लीज की शर्तें निर्धारित करने का दायित्व राज्य सरकारों पर छोड़ दिया गया है।

ग्रामीण विकास मंत्री जयराम रमेश ने उद्योग जगत पर इस कानून से पड़ने वाले नकारात्मक प्रभावों के आरोप को ख़ारिज करते हुए कहा कि ज़मीन की ख़रीद पर कोई पाबंदी नहीं लगाई गई है। इससे अधिकाधिक लोग भूमि खरीदने के लिए प्रोत्साहित होंगे।

जो कानून किसानों, भूमिहीनों, आदिवासियों और दलितों के हित में है वह राष्ट्रीय हित में होता है। इस कानून में उनके हितों को प्राथमिकता दी गई है और अब जबरन भूमि अधिग्रण किसी भी हालत में नहीं किया जा सकेगा।

विधेयक की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें ग्रामीण क्षेत्रों में न्यूनतम चार गुना तथा शहरी क्षेत्रों में दुगुनी मुआवज़ा राशि का प्रावधान किया गया है। लेकिन अगर राज्य सरकारें चाहें तो वे मुआवज़े की दर में बढ़ोतरी कर सकती हैं। अभी तक भूमि क्रम करने पर आजीविका गंवाने वालों को कोई लाभ नहीं मिलता था जबकि उनकी संख्या भूमि-घटकों से अधिक होती है। इस विधेयक में प्रावधान किया गया है कि आजीविका गंवाने वालों के पुनर्वास एवं उनके पुनर्व्यवस्थापन की जब तक व्यवस्था नहीं की जाएगी उन्हें विस्थापित नहीं किया जा सकेगा।

यह ऐसा पहला एकीकृत कानून है जिसमें भूमि अधिग्रहण के कारण आवश्यक पुनर्स्थापन एवं पुनर्व्यवस्थापन हेतु पांच अध्याय और दो अनुसूचियां के अलावा भूमि के बदले भूमि, आवास की व्यवस्था और रोज़गार का विकल्प के प्रावधान रखे गए हैं। यही नहीं भूमि घटकों के साथ अतीत में भू-अधिग्रहण के दौरान यदि कहीं भी कुछ अन्याय हुआ हो तो उसका भी निराकरण किया गया है। जहां भूमि अधिग्रहण अवार्ड नहीं दिया गया हो वहां मुआवजे/पुनर्स्थापन व पुनर्व्यवस्थापन के नये प्रावधान लागू होंगे। ऐसे मामलों में जहां पांच

वर्ष पूर्व भूमि अधिग्रहण किया गया था परंतु मुआवजे का कोई भुगतान नहीं किया गया या भूमि का कब्जा नहीं लिया गया है वहां भूमि अधिग्रहण प्रक्रिया नवीन कानून के अनुसार सारी प्रक्रिया संपूर्ण प्रक्रिया नये सिरे से आरंभ की जाएगी तथा नये प्रावधानों के अनुसार मुआवज़ा दिया जाएगा।

जनभागीदारी : भूमि अधिग्रहण की किसी भी प्रक्रिया को शुरू करने से पहले स्थानीय संस्थाओं की भागीदारी का प्रावधान रखा गया है। साथ ही पुनर्वासन और पुनर्स्थापन संबंधी प्रावधानों के क्रियान्वयन की निगरानी हेतु केंद्र राज्य तथा जिला स्तर पर निगरानी कमेटी गठित की जाएगी।

आदिवासियों तथा अन्य कमज़ोर समूहों के हितों की सुरक्षा करने की दृष्टि से अनुसूचित क्षेत्रों में ग्राम सभाओं की सहमति के बिना भूमि अधिग्रहण नहीं हो सकेगा। नये कानून में यह भी सुनिश्चित किया गया है कि पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों में विस्तार) अधिनियम, 1996 तथा वन अधिकार अधिनियम, 2006 के प्रावधानों का भी पालन हो। अनुसूचित जाति एवं जनजाति के लोगों के लिए नये कानून में विशेष व्यवस्थाएं की गई हैं। यह उम्मीद की जा रही है कि नक्सलवाद प्रभावित क्षेत्रों में यह कानून महत्वपूर्ण भूमिका निभाने में सफल होगा।

भू-धारकों की सहमति

सार्वजनिक-निजी भागीदारी (पीपीपी) के लिए भूमि अधिग्रहण तथा निजी कंपनियों के लिए भूमि अधिग्रहण करने से पहले क्रमशः न्यूनतम 70 प्रतिशत और 80 प्रतिशत भू-धारकों की सहमति आवश्यक है। इसके बिना किसी भी तरह का अधिग्रहण नहीं किया जा सकेगा।

विस्थापितों के हितों की सुरक्षा

नये कानून में यह सुनिश्चित किया गया है कि किसी भी व्यक्ति को जब तक विस्थापित नहीं किया जाएगा तब तक उसे उसके सभी प्रकार के मुआवज़ों का पूरा भुगतान न हो जाए तथा पुनर्व्यवस्थापन स्थल पर वैकल्पिक व्यवस्था उपलब्ध न हों। तृतीय अनुसूची में ऐसी आधारभूत संरचनात्मक सुविधाओं को सूचीबद्ध किया गया है जिन्हें विस्थापितों को उपलब्ध कराया जाना आवश्यक है।

कृषि भूमि अधिग्रहण की सीमा

बहुफ़सली तथा बुआई योग्य कृषि भूमि के अधिग्रहण की अधिकतम सीमा तय कर दी गई है। खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने तथा मनमर्जी से अधिकाधिक भूमि का अधिग्रहण रोकने के लिए नये कानून में राज्य सरकारों को कृषि भूमि के अधिग्रहण पर सीमा निश्चित करने के अधिकार दिए गए हैं। जिस उद्देश्य के लिए भूमि अधिग्रहण होगा उसमें बदलाव नहीं किया जा सकता है।

अप्रयुक्त भूमि की वापसी

नये कानून में उस अधिग्रहण की गई भूमि को वापस करने का प्रावधान किया गया है जिसका प्रयोग नहीं किया गया हो। इसमें प्रयुक्त अधिग्रहित भूमि को संबंधित राज्य के भूमि बैंक या मूल भू-स्वामियों को वापस लौटाने का अधिकार राज्य सरकार को दिया गया है।

आयकर और स्टांप शुल्क से छूट

यह पहला कानून है जिसमें भूमि अधिग्रहण से मिले मुआवज़े पर भू-स्वामी को आयकर तथा स्टांप शुल्क से छूट दी गई है। यदि अधिग्रहण की तिथि से पांच वर्षों के भीतर अधिग्रहित की गई भूमि तीसरी पार्टी को बढ़ी हुई क़ीमत पर हस्तांतरित की जाती है तो बढ़ी हुई क़ीमत का 40 प्रतिशत हिस्सा मूल भू-स्वामी को मिलेगा।

पुनर्वासन तथा पुनर्व्यवस्थापन संबंधी उपबंध

किसानों, भूमिहीनों तथा आजीविका गंवाने वालों के लिए पुनर्वासन एवं पुनर्व्यवस्थापन सुनिश्चित करने के लिए उपबंध बनाए गए हैं। जिनमें निम्नलिखित प्रावधान रखे गए हैं :

- **पात्रता का सरल मानदंड** मुआवजे की पात्रता हेतु अधिग्रहित की गई भूमि पर आजीविका कमाने वालों के लिए आश्रित अवधि विचारोपरांत तीन वर्ष ही रखी गई है।
- **प्रभावित परिवारों में पट्टीदारों को शामिल करना :** नये कानून में 'प्रभावित' की परिभाषा को व्यापक बनाया गया। अब इसमें कृषि मज़दूर, पट्टेदार किसान, बटाईदार अथवा ऐसे कामगार भी शामिल किए गए हैं जो प्रभावित क्षेत्र में अधिग्रहण से तीन वर्ष पूर्व से कार्य कर रहे हों और जिनकी आजीविका कृषि पर ही निर्भर है।
- **सभी प्रभावितों को आवास :** प्रत्येक प्रभावित परिवार को एक आवास का अधिकार होगा। इसमें यह शर्त है कि वे प्रभावित क्षेत्र में भूमि अधिग्रहण होने के तीन वर्ष या इससे अधिक अवधि से रह रहे हों। यदि उन्हें आवास की आवश्यकता नहीं होगी तो एकमुश्त वित्तीय सहायता दी जाएगी।
- **वार्षिकी या रोज़गार का विकल्प** सभी प्रभावित परिवारों का वार्षिकी अथवा रोज़गार अथवा एकमुश्त अनुदान का विकल्प है। रोज़गार न दिए जाने पर प्रति परिवार को एकमुश्त पांच लाख रुपये का अनुदान पाने का अधिकार है। विकल्प के रूप में 20 वर्ष तक दो हज़ार रुपये प्रतिमाह वार्षिकी का भुगतान किया जाएगा। इसे मुद्रास्फीति की दर के अनुसार समायोजित किया जाएगा।
- **भरण-पोषण भत्ता :** विस्थापित परिवारों को अवार्ड की तिथि से एक वर्ष तक 3 हज़ार रुपये मासिक भरण-पोषण भत्ता दिया जाएगा।
- **प्रशिक्षण और कौशल विकास** प्रभावित परिवारों को रोज़गार देते समय कौशल विकास हेतु प्रशिक्षण।
- **विविध राशियां :** सभी प्रभावित परिवारों को बहुमौद्रिक लाभ, जैसे 50 हज़ार रुपये का परिवहन भत्ता एवं 50 हज़ार रुपये पुनर्वासन भत्ता मिलेगा।
- **कारीगरों को एकमुश्त वित्तीय सहायता** कारीगरों, छोटे व्यापारियों अथवा अपना कारोबार करने वाले प्रत्येक प्रभावित परिवार को 25 हज़ार रुपये की एकमुश्त वित्तीय सहायता।
- **सिंचाई परियोजनाओं से संबंधित मामले** सिंचाई अथवा पन-बिजली परियोजना हेतु अधिग्रहित भूमि पर जल-भराव से 6 माह पूर्व पुनर्वासन एवं पुनर्व्यवस्थापन की संपूर्ण व्यवस्था आवश्यक है।
- **भूमि का कब्ज़ा :** भूमि का कब्ज़ा मुआवज़ा भुगतान, पुनर्वासन एवं पुनर्व्यस्थापन की व्यवस्था करने के बाद ही मिलेगा। प्रभावित परिवारों को तीन महीने के भीतर मुआवजे तथा पुनर्वासन एवं पुनर्व्यवस्थापन के मौद्रिक कलाम का अवार्ड की तिथि से 5 माह के भीतर भुगातन करना होगा। पुनर्वास एवं पुनर्व्यवस्थापन की उत्तम

व्यवस्था हेतु आधारभूत संख्या कार्य 18 माह के भीतर पूरे किए जाएंगे।

अनुसूचित वर्गों का संरक्षण

नये कानून में अनुसूचित जातियों के हितों के संरक्षण सुनिश्चित किए गए हैं। इन वंचित वर्गों के लिए व्यापक व्यवस्थाएं करते हुए अलग अध्याय बनाया गया है। यह प्रयास किया जाएगा कि अनुसूचित क्षेत्रों में भूमि अधिग्रहण न हो, लेकिन आवश्यक होने पर ग्राम सभा या स्वायत्त परिषद की सहमति के लेनी होगी। इन वर्गों की भूमि अधिग्रहण किए जाने पर मुआवजे की एक-तिहाई धनराशि का स्थल पर ही भुगतान करना होगा। प्रभावित अनुसूचित वर्गों के लोगों को यथासंभव उसी अनुसूचित क्षेत्र में ही पुनर्व्यवस्थापित करने के कार्य को प्राथमिकता दी जाएगी, जिससे उनकी सामुदायिक, सांस्कृतिक एवं भाषाई पहचान बनी रह सके।

पुनर्व्यस्थापन क्षेत्रों में अनुसूचित वर्गों के लिए सामुदायिक एवं सामाजिक कार्यों के लिए सरकार निःशुल्क ज़मीन उपलब्ध कराएगी। आज विद्यमान कानूनों और नियमों की अनदेखी से आदिवासियों की भूमिका का हस्तांतरण हुआ तो उसे रद्द समझा जाएगा। ऐसी भूमि के अधिग्रहण का मुआवजा तथा आरएंडआर (पुनर्वासन एवं पुनर्व्यवस्थापन) लाभ भूमि के मूल मालिक को दिए जाएंगे।

सिंचाई की पन-बिजली परियोजनाओं के प्रभावित आदिवासियों, अन्य परंपरागत वन निवासियों तथा अनुसूचित जाति के परिवारों को प्रभावित क्षेत्र की नदियों, तालाबों व जलाशयों में मछली पकड़ने का अधिकार मिलेगा।

अनुसूचित क्षेत्र (जिले) से बाहर पुनर्व्यवस्थापन करने पर प्रभावित अनुसूचित जनजातियों (आदिवासी) परिवारों को पुनर्वासन एवं पुनर्व्यवस्थापन लाभों का 25 प्रतिशत अतिरिक्त भुगतान किया जाएगा। इसके अलावा उन्हें 50 हज़ार रुपये एकमुश्त धनराशि और दी जाएगी जिससे उन्हें अपने नये पुनर्वास स्थल तक यात्रा करने में आसानी हो। अनुसूचित वर्गों को अधिग्रहित भूमि के बराबर या कम-से-कम ढाई एकड़ भूमि, जो भी कम हो, मिलेगा। अनुसूचित क्षेत्रों में भरण-पोषण राशि के अलावा विस्थापितों को 50 हज़ार रुपये की अतिरिक्त राशि भी दी जाएगी। यह एक वर्ष के लिए दी जाने वाली 3 हज़ार रुपये प्रतिमाह की भरण-पोषण राशि के अतिरिक्त होगी।

सामाजिक प्रभाव आकलन

नये कानून में सामाजिक प्रभाव आकलन के अलावा पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका को भी सुनिश्चित किया गया है। पंचायती राज संस्थाओं के प्रतिनिधियों से राय लेकर सामाजिक प्रभाव आकलन किया जाएगा। आकलन के बारे में रिपोर्ट तैयार होने पर उसे स्थानीय लोगों को उनकी भाषा में समझाया जाएगा। आकलन करने वाले विशेषज्ञ समूह में पंचायत राज संस्थाओं के दो प्रतिनिधि भी होंगे। प्रभावित क्षेत्र की पंचायत राज संस्थाओं में जन सुनवाई की व्यवस्था तथा पैसा 1996 का अनुपालन, परियोजना स्तर पर पुनर्वासन एवं पुनर्व्यवस्थापन (आरएंडआर) समिति में प्रभावित क्षेत्र की पंचायतों का प्रतिनिधित्व और तीसरी अनुसूची में दी गई आधारभूत अवसंरचना संबंधी सुविधाओं की सूची के अनुसार पंचायत भवन की सुविधा उपलब्ध कराई जाएगी।

राज्य सरकार की भूमिका

नये कानून में राज्य सरकार की भूमिका को महत्वपूर्ण बनाया गया है। इसमें मुआवजे के लिए आधारभूत विधि उपलब्ध कराते हुए स्लाइडिंग स्केल की संरचना की गई है। जिसमें राज्यों को गुणक निर्धारित करने की अनुमति दी गई है। जहां अधिग्रहित भूमि पांच वर्षों तक रहेगी वहां उसके बारे में राज्य सरकारों को निर्णय लेने का अधिकार दिया गया है। ऐसी भूमि भू-स्वामी या भूमि बैंक को दी जा सकती है। निजी ख़रीद के लिए ज़मीन की सीमा राज्य सरकार निश्चित कर सकेगी तथा पुनर्वासन एवं पुनर्व्यवस्थापन समितियां के कार्यकलाप निर्धारित करने का कार्य भी राज्य सरकारों पर छोड़ा गया है।

नये कानून में सिंचित बहुफ़सली अथवा कृषि भूमि के अधिग्रहण को हतोत्साहित किया गया है। इसके लिए राज्य सरकारों को अधिकार दिए गए हैं। राज्य सरकारों को अधिकार दिया गया है कि वे आंकलित मुआवज़ा राशि को बढ़ाने के लिए अन्य कानून बना सकते हैं।

खाद्य सुरक्षा के लिए व्यवस्था

नये कानून में व्यवस्था की गई है कि जहां तक हो सके सिंचित बहुफ़सली तथा कृषि योग्य भूमि का अधिग्रहण न किया जाए तथा ऐसी परिस्थिति में बंजर भूमि को खेती योग्य बनाया जाएगा। यदि बंजर भूमि उपलब्ध न हो तो अधिग्रहित भूमि की क़ीमत के बराबर राशि कृषि क्षेत्र में विनियोग करने के लिए सरकार के पास जमा कराई जाएगी। किसी जिला विशेष या संपूर्ण राज्य में बहुफ़सली सिंचित भूमि के क्षेत्रफल के अधिग्रहण की अधिकतम सीमा का निर्धारण राज्य सरकार करेगी।

बंजर भूमि का एटलस

ग्रामीण विकास मंत्रालय देशभर के सभी जिलों में उपलब्ध बंजर भूमि का एटलस बनाने का कार्य कर रही है। अभी तक राज्यों को ही अपने राज्य की बंजर भूमि की जानकारी है लेकिन अब जिलावार पूरे देश की बंजर भूमि की समग्र जानकारी उपलब्ध हो जाएगी। एक अनुमान के अनुसार अभी देश में करीब 5 करोड़ हेक्टेयर बंजर ज़मीन है। बंजर भूमि की जानकारी एकत्र हो जाने के बाद भूमि अधिग्रहण में बंजर ज़मीन को प्राथमिकता दी जा सकेगी।

निवेशकों की चिंता का समाधान

नये कानून में निवेशकों की चिंता का समाधान करने का भी प्रयास किया गया है। सार्वजनिक-निजी भागीदारी (पीपीपी) परियोजनाओं के मामले में सहमति 80 प्रतिशत से घटाकर 70 प्रतिशत कर दी गई है। इसके लिए आजीविका से संबंधित लोगों की सहमति लेना आवश्यक नहीं होगा। बाज़ार मूल्य की परिभाषा को सरल करने, भूमि मुआवज़ा निर्धारण में लचीली व्यवस्था, सिंचित बहुफ़सली भूमि तथा विशुद्ध बुआई क्षेत्र की सीमा का निर्धारण, भूमि की निजी ख़रीद पर आरएंडआर की सीमा निर्धारण में राज्यों को अधिकार, भूमि अधिग्रहण करने वाली संस्था के लिए सरल करने के अलावा नये कानून में कलक्टर को यह अधिकार दिया गया है कि वह ऐसे सौदों का संज्ञान न ले जो बाज़ार मूल्य की संगणना करते समय वास्तविक मूल्य न दर्शाते हों।

जहां भूमि का अधिग्रहण एक सीमा से नीचे किया जा रहा हो तब जिला अधिकारी (कलक्टर) अधिग्रहण प्राधिकारी हो सकते हैं। इस प्रावधान से कम क्षेत्रफल की भूमि अधिग्रहण करने के मामलों में आसानी होगी और छोटी परियोजनाओं के लिए भूमि

(शेषांश पृष्ठ 49 पर)

IIGS
Indian Institute of GS

शुरूआत हमेशा साथ आने से ही होती है

यह एक शुरूआत ही है...उन विद्यार्थियों के लिए

- जिन्हें सूचना नहीं, शिक्षा चाहिए।
- जिन्हें आयोग द्वारा नियत किये गये मापदण्ड पर अंग्रेजी माध्यम के विद्यार्थियों के समकक्ष रहना है।
- जिन्हें सिर्फ परीक्षा नहीं देना है, सफल होना है।

विद्यार्थियों के लिए, विद्यार्थियों के साथ...

सामान्य अध्ययन

भारत में पहली बार एक असाधारण संकल्पना...

...अद्भुत समन्वय, अनूठा प्रयास, असीमित संभावनाएं...

मणिकांत सिंह
★ (THE STUDY) ★
विश्व एवं भारत का इतिहास, कला एवं संस्कृति, अंतर्राष्ट्रीय संबंध के ऐतिहासिक पक्ष

के सिद्धार्थ
★ (ENSEMBLE) ★
विश्व भूगोल, भारतीय भूगोल, पर्यावरण एवं जैव विविधता, आपदा प्रबंधन, अंतर्राष्ट्रीय संबंध के भू-राजनैतिक पक्ष

आर. कुमार
★ (AASTHA IAS) ★
अर्थव्यवस्था, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी
&
अंतर्राष्ट्रीय संबंध

डॉ. एस.एस. पाण्डेय
★ (DIKSHANT) ★
भारतीय समाज, सामाजिक न्याय, सुरक्षा
&
नीतिशास्त्र

अभय कुमार
★ (SYNERGY) ★
संविधान, शासन प्रणाली, शासन व्यवस्था
&
नीतिशास्त्र, सत्यनिष्ठा एवं अभिरूचि

नवम्बर माह के तृतीय बैच के लिए सम्पर्क करें

IIGS Add:- 624, 3rd Floor Mukherjee Nagar, Delhi-9

9899379963, 9899379964

YH-178/2013

प्रकृतिः रक्षति रक्षिता

● मानवर्धन कंठ

कभी सुनामी तो कभी महातूफान, कभी बादल का फटना तो कभी कांपती धरती, कभी बाढ़ की विभीषिका तो कभी अकाल का रौद्र रूप– इन सभी प्राकृतिक आपदा की घड़ी में हज़ारों-लाखों सपने संजोती जीवंत आंखें पलभर में पथरा जाती हैं। मौत के आगोश में बेबस ज़िंदगी प्रकृति के प्रकोप की भेंट चढ़ जाती है। थमी ज़िंदगी की आखिरी सांसें गिनते वक़्त उन चेहरों का रंग क्या हो जाता है, किसी को नहीं मालूम। मगर महाविनाश के इस महातांडव में बर्बाद ज़िंदगियां, उनके टूटे सपने और उजड़ी हुई वीरान बस्तियां एक ही सवाल बार-बार दोहराती हैं–काश! इसके लिए हम तैयार रहे होते!

जरा सोचिए, क्या यह सिर्फ़ सृष्टि का आक्रोश है? या फिर हमारी, आपकी और उन तमाम लोगों की अनभिज्ञता व लापरवाही का नतीज़ा है?

इस धरती पर असंख्य प्रजातियां हैं, जिनके बल पर पूरे विश्व की मानवता को भोजन, आवास, दवा व अन्य आवश्यक संसाधन उपलब्ध हैं। मगर मौज़ूदा हालात में सुविधापरस्त इंसानों ने प्राकृतिक संसाधनों का जबर्दस्त दोहन किया है और मजे की बात यह है कि आए दिन होने वाली प्राकृतिक आपदाओं के बावजूद यह सिलसिला बदस्तूर जारी है।

जैव विविधता पर आयोजित हाल के सम्मेलनों की बात मानें, तो तस्वीर सचमुच डरावनी लगती है। इसके मुताबिक, हर घंटे तीन प्रजातियां गायब हो रही हैं और हर रोज़ लगभग 150 प्रजातियां लुप्त हो रही हैं।

मौज़ूदा उपलब्ध शोध के आंकड़ों पर नज़र दौड़ाएं तो विश्व की कुल प्रजातियां 20 लाख से लेकर 10 करोड़ के बीच अनुमानित है। इतने बड़े फ़ासले से पता चलता है कि इस क्षेत्र में कितना शोध कार्य करने की आवश्यकता है। इससे यह भी पता चलता है कि लुप्त होने वाले जीवों के बारे में ठीक-ठीक जानकारी उपलब्ध नहीं है। इंटरनेशनल यूनियन फॉर कंजर्वेशन ऑफ नेचर के आंकड़ों की बात मानें, तो 2000 से लेकर अब तक केवल एक जानवर निश्चित रूप से लुप्त हुआ है और वह है– घोंघा।

बहरहाल, वर्ष 2012 में हैदराबाद में आयोजित अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन, सीओपी 11 में जैव विविधता को अक्षुण्ण रखने के लिए आर्थिक विकास, जनसांख्यिकी और प्राकृतिक संरक्षण में एक संतुलन कायम रखने का सुझाव दिया गया। इस सम्मेलन में एक नारा दिया गया जोकि संस्कृत साहित्य से उद्धृत है–''प्रकृति रक्षति रक्षिता'' अर्थात् अगर हम प्रकृति की रक्षा करेंगे, तो प्रकृति हमारी रक्षा करेगी।

वर्ष 2010 में नागोया में आयोजित जैव विविधता सम्मेलन में 2020 तक जिन 20 लक्ष्यों को पूरा करने की बात तय की गई, उस तर्क़-वितर्क में भारत ने प्रमुख भूमिका निभाई थी। सम्मेलन में से कुछ प्रमुख बातें निकल के आईं जो निम्न हैं :

- प्राकृतिक आवास, जिसमें जंगल भी शामिल हैं, के क्षरण का दर कम से कम आधा, या जहां तक संभव हो सके, वहां शून्य हो जाना चाहिए।
- 17 फीसदी भू-भाग व 10 फीसदी समुद्री व तटवर्ती क्षेत्रों की सुरक्षा अत्यावश्यक है।
- कम से कम 15 फीसदी विकृत क्षेत्रों का पुनर्निर्माण जरूरी है।

विकसित देशों की प्रधानता वाले इन सम्मेलनों के इन निर्देशों का पालन करने के लिए सबसे ज़्यादा विकासशील देशों पर ही दबाव डाला जाता है। मगर यहां यह उल्लेखनीय है कि भारत एक ऐसा देश है, जो जैव विविधता के संरक्षण के मामले में किसी भी दूसरे देश से हमेशा से आगे रहा है।

विश्व का पहला नेचर रिजर्व ईसा पूर्व 272-231 में सम्राट अशोक ने स्थापित किया था। अगर आधुनिक समय की बात करें,

तो भारत जैव विविधता संरक्षण अधिनियम बनाने वाला सबसे पहला देश बना। जैव विविधता सम्मेलन के तीन प्रमुख लक्ष्यों– जैव विविधता संरक्षण, इसके दीर्घकालीन उपयोग को प्रोत्साहन और यह सुनिश्चित करना कि इसके इस्तेमाल का लाभ सभी वर्गों को समान रूप से प्राप्त हो सके, इन सबको लागू करने की दिशा में भारत सतत प्रयासरत है।

हालांकि प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण व विकास कार्य, दोनों को साथ-साथ चलाना चुनौतीपूर्ण कार्य है। 1927 में बने भारतीय वन कानून (जिसमें अब तक कई बार संशोधन किए गए हैं) के तहत यह प्रावधान है कि अगर व्यापारिक उद्देश्यों के लिए जैव विविधता का किसी प्रकार उपयोग किया जाता है, तो इसके बदले में उचित मुआवज़ा भी देना होगा। 2006 में प्रस्तुत वन अधिकार अधिनियम जंगल के अलावा ज़मीन के अधिकार व स्थानीय समुदाय के हितों की भी वक़ालत करता है। नेशनल बायोडायवर्सिटी एक्शन प्लान के तहत ऐसे कई क़दम उठाए गए हैं, जोकि जैव विविधता संरक्षण की दिशा में सार्थक हैं।

जिन जीवों के जीवन पर अभी ख़तरा मंडरा रहा है, उनकी सूची में भारत की 10 फीसदी वनस्पति और इससे भी ज़्यादा यहां के जीव-जंतु शामिल हैं। वन्य जीवों में 80 स्तनधारी प्रजातियां, जिनमें से 47 पक्षी की प्रजातियां, तीन उभयचर और बड़ी संख्या में कीट-पतंग, तितलियां व भौंरे शामिल हैं।

जैव विविधता का संरक्षण भारतीय संस्कृति की तह तक समाई हुई है। इस देश का एक चौथाई वन प्रदेश सुरक्षित क्षेत्र के रूप में व्यवस्थित है। फ़सलों की विविधता के मामले में भी भारत अग्रणी है। फिर चाहे चावल, दाल, ज्वार-बाजरा हो या फल व शाक-सब्जियां- इन सबकी जितनी किस्में भारत में उपलब्ध हैं, उतनी विरले ही मिलती हैं। पशुओं के मामले में भी कमोबेश यही स्थिति है। लगभग 140 प्रकार के घरेलू जानवर यहां पाए जाते हैं।

भारत दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा देश है और इस हैसियत से सबसे बड़े आर्थिक जगत के रूप में भी इसे प्रतिष्ठा हासिल है और दिन-प्रतिदिन यह प्रगति पथ पर भी आगे बढ़ रहा है। विविध संस्कृति-सभ्यता और पारंपरिक ज्ञान के मामले में बेमिसाल इस देश की जैव विविधता पूरे ब्रह्मांड में सबसे ज़्यादा विविध है। अगर पूरे विश्व के भू-भाग की बात करें, तो भारत का हिस्सा महज 2.4 फीसदी है, विश्व जनसंख्या का 18 फीसदी और विश्व की प्रजातियों का 8 फीसदी हिस्सा भारत का है। भारत में 45,000 पौधों की और 89,000 जीवों की प्रजातियां हैं, जोकि पूरे विश्व के जीव जगत का 6.5 हिस्सा है। भारत विश्व के दो सबसे बड़े 'हॉट स्पॉट' का भी स्थल है– पूर्वी हिमालय व पश्चिमी घाट। जिन जीवों के जीवन पर अभी ख़तरा मंडरा रहा है, उनकी सूची में भारत की 10 फीसदी वनस्पति और इससे भी ज़्यादा यहां के जीव-जंतु शामिल हैं। वन्य जीवों में 80 स्तनधारी प्रजातियां, जिनमें से 47 पक्षी की प्रजातियां, तीन उभयचर और बड़ी संख्या में कीट-पतंग, तितलियां व भौंरे शामिल हैं। नर वानर की 19 में से 12 प्रजातियों का अस्तित्व ख़तरे में है।

भारत की जैव विविधता को अक्षुण्ण रखने में सबसे बड़ी चुनौती यहां की विशाल जनसंख्या है। ऐसा अनुमान लगाया जा रहा है कि 2030 तक देश में डेढ़ से दो अरब की जनसंख्या हो जाएगी। चूंकि मानव द्वारा कुल फोटोसिंथेसिस उत्पादन का 40 फीसदी इस्तेमाल किया जाता है, इसलिए यह सहजता से अनुमान लगाया जा सकता है कि इतनी विशाल जनसंख्या हो जाने के बाद जैव विविधता पर किस प्रकार का बुरा असर पड़ सकता है।

पिछले 50 सालों में शहरों पर केंद्रित औद्योगीकरण का विकास एवं नये-नये उद्योगों को स्थापित करने में बड़े पैमाने पर प्राकृतिक संसाधनों का दोहन किया गया। और इसके साथ ही जल, थल व वायु प्रदूषण में भी इज़ाफ़ा हुआ।

इसके साथ ही, पारंपरिक तरीक़े से होने वाली खेती की जगह औद्योगिक तरीक़े की खेती का प्रचलन बढ़ गया। इसी के चलते हानिकारक कीटनाशक व खाद आदि के प्रयोग धड़ल्ले से होने लगे और जैव विविधता संकट में आ गई।

जैव विविधता को संरक्षित रखने के लिए भारत में जैव-आर्थिकी रणनीति अपनाने की आवश्यकता है। राष्ट्रीय जैव विविधता मिशन को आगे बढ़ाते हुए इस बात का खयाल रखना होगा कि ग़रीबों की ज़िंदगी खुशहाल बन सके न कि चंद अमीरों की झोली भरती जाए। आर्थिक समानता के बाद जैव विविधता को कायम रखना आसान हो जाएगा। महात्मा गांधी ने अंत्योदय के माध्यम से सर्वोदय की बात कही थी। यानी कि समाज के हाशिए पर मौजूद जन सामान्य के विकास के माधयम से ही असली सर्वोदय संभव है। हालांकि गांधी जी के आर्थिक उदय के इस फॉर्मूले को आधुनिकतावादी दृष्टिकोण ने नहीं स्वीकारा और देश में औद्योगिक क्रांति नयी राह बनाने लगी।

हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि इस प्राकृतिक परिवेश में एक भी जीव अगर अस्तित्व से गायब होता है, तो इसका विपरीत असर पूरे पारितंत्र पर पड़ता है। अब सवाल उठता है कि आधुनिक जीवनशैली में क्या यह संकल्प लेना और उसे निभाना संभव है कि किसी भी जीव को हानि नहीं पहुंचे? इसका उत्तर ढूंढने से पहले हमें यह तय कर लेना पड़ेगा कि एक आदर्श जीवनशैली है क्या? अगर हम एक आदर्श जीवनशैली की बात करें, तो वह है - सह-रचनात्मकता व सह-जीविता, जोकि भारतीय सामासिक संस्कृति की तह तक समाई हुई है।

पारिस्थितिकी का अध्ययन करने वाले यह मानते हैं कि हर एक प्रजाति की सृष्टि में खास भूमिका होती हैं। यही वजह है कि एक भी प्रजाति के लुप्त हो जाने पर संसार में एक बड़ी कमी आ जाती है और इसका असर पूरी मानवता पर पड़ता है।

पारिस्थितिकी का अध्ययन करने वाले यह मानते हैं कि हर एक प्रजाति की सृष्टि में खास भूमिका होती हैं। यही वजह है कि एक भी प्रजाति के लुप्त हो जाने पर संसार में एक बड़ी कमी आ जाती है और इसका असर पूरी मानवता पर पड़ता है। जिस तरह से प्राकृतिक आपदाएं विनाशलीला मचाती है, अब यह महसूस किया जाने लगा है कि प्रकृति में असंतुलन का नतीजा क्या हो सकता है।

लेकिन सबसे बड़ा सवाल यह कि आखिर इतना जानते-समझते भी प्राकृतिक नियमों का उल्लंघन क्यों किया जाता है? क्यों पारिस्थितिकी से जुड़ी अहम बातों को भी हाशिये पर रखा जाता है? इसका एक सीधा उत्तर यह है कि हम अपनी जीवनशैली में बदलाव नहीं लाना चाहते। हम एक ऐसी जीवनशैली के अधीन हो चुके हैं, जो हमें विनाशकारी विकास के रास्ते ले जा रही है। भोगवादी दृष्टिकोण पर आधारित आधुनिक जीवनशैली एक नशे की तरह काम कर रही है।

बाज़ारवाद व मॉल-संस्कृति ने नयी सभ्यता में एक खास जगह बना ली है। उपभोग करने का स्तर अब किसी व्यक्ति की प्रभुता को स्थापित करने लगा है। जो जितना ज़्यादा भोग-उपभोग करने के लायक है, उसे उतनी ही ज़्यादा प्रतिष्ठा मिलने लगी है। लेकिन ऐसी स्थिति तक मानवता पहुंची कैसे? इस पर विश्लेषण करने वाला एक तबका यह बताता है कि वैज्ञानिक क्रांति की आंधी इन सबके लिए जिम्मेदार है।

प्रगति और विकास के नाम पर पूरी दुनिया में जिस प्रकार की होड़ मची, वह कहीं से भी मानव जाति के लिए कल्याणकारी नहीं है। भोगवादी संस्कृति का बोलबाला धीरे-धीरे बढ़ता आ रहा है, जिसकी छत्रछाया में इस बात को नज़रअंदाज किया गया कि कौन-सी वस्तुएं मानवता के लिए हितकारी होंगी। आरामदायक वस्तुएं व तकनीक धड़ल्ले से पूरी दुनिया में छाने लगी। सुविधापरक नयी वस्तुओं की खोज में इस बात का ज़रा-सा भी खयाल नहीं रखा गया कि इसका पर्यावरण व पारिस्थितिकी पर क्या असर पड़ेगा।

मजेदार बात तो यह है कि हम मानवाधिकार की बात तो करते हैं, मगर भूल जाते हैं कि प्रकृति को भी मौलिक अधिकार प्राप्त है। और अगर हम उसके अधिकारों का हनन करते जाएंगे, तो स्वाभाविक है कि एक-न-एक दिन हमें इसका दुष्परिणाम भुगतना ही पड़ेगा।

कहा जाता है कि आवश्यकता ही आविष्कार की जननी है। मगर आज ऐसे-ऐसे आविष्कार किए जा रहे हैं, जो कई तरह की आवश्यकताओं को जन्म देने लगे हैं। ऐसे में तो यही कहा जा सकता है कि आविष्कार ही आवश्यकताओं की जननी बन गई है।

उपभोक्तावादी संस्कृति के विषय में मार्शल का कथन है, '' हालांकि आरंभिक समय में मनुष्य की यह चाहत ही थी जिसने विकास को जन्म दिया और कई तरह की गतिविधियों का ईजाद किया। लेकिन बाद के समय में हर गतिविधियां जो विकास के नाम पर होने लगीं, उनसे नयी-नयी चाहतें जगने लगीं।'' विज्ञापन के माध्यम से तरह-तरह की कृत्रिम मांगें सामने आने लगीं और लालच के वशीभूत लोग लुभावनी चीज़ों के प्रति आकर्षित होते चले गएं। लेकिन इस होड़ में हम यह भूल गए कि आरामतलबी के लिए ईजाद की गई वस्तुओं के निर्माण में प्राकृतिक संतुलन बिगड़ता चला गया।

ज़रा कल्पना कीजिए कि आप एक पशु या पक्षी होते! ऐसे में आप उन्हीं चीज़ों के लिए श्रम करते, जिनसे आपकी बुनियादी जरूरतें पूरी हो जातीं। मसलन, अगर आपको पशु या पक्षी होते हुए भोजन की आवश्यकता होती, तो आप दैनिक जीवन में इसका प्रयास करते कि किस तरह से आपको आपका आहार मिल जाए और आपका जीवन चलता रहे। लेकिन आप इंसान हैं और आपने अपनी सुख-सुविधा की तमाम चीज़ें ईजाद कर लीं।

लेकिन सच तो यह है कि विकास का पहिया और प्राकृतिक संरक्षण का चक्र एक साथ घूम सकता है। जहां आर्थिक प्रगति और सतत विकास के लिए जैव विविधता का संरक्षण जरूरी है, वहीं इसमें व्यापार के विकास की भी संभावना है। जैसे, जैविक खाद व फल-सब्जियां, प्राकृतिक सौंदर्य प्रसाधन सामग्रियां व इको-टूरिज्म आदि क्षेत्र।

पर्यावरण संरक्षण पर बड़ी-बड़ी बातें करने की जगह हमें कुछ छोटी-छोटी चीज़ों का खयाल रखना पड़ेगा। मसलन, अधिक से अधिक पौधारोपण करें जिससे गर्मी व भू-क्षरण आदि से तो बचाव होगा ही, साथ ही पक्षियों को भी बसेरा मिल सकेगा। पर्यावरण में असंतुलन बढ़ाने वाले कारकों, जैसे जनसंख्या वृद्धि, अंधाधुंध औद्योगीकरण और रसायनों के अधिकाधिक प्रयोगों से हमें बचना होगा।

संयोगवश, जल, जंगल और ज़मीन– इन्हीं तीनों की प्रचुरता से समृद्धि बढ़ती है और भारत को ये तीनों चीज़ें प्रचुरता में हासिल है। लेकिन इनका संरक्षण रखना बहुत जरूरी है।

जैव विविधता कायम रखने के लिए जहां एक ओर हमें जलविभाजक विकास के लिए सुनियोजित कार्यक्रम चलाने पड़ेंगे, वहीं पर्यावरणीय पुनर्नवीकरण का कार्य भी करना होगा। जहां एक ओर पारंपरिक तरीक़े से खेती को बढ़ावा देना होगा, वहीं जैव विविधता के क्षेत्र में शोध कार्य भी करने होंगे।

हम प्राकृतिक परिवेश में रहते हैं, मगर सारी गतिविधियां प्रकृति के ख़िलाफ़ चलाते रहते हैं, जबकि प्राकृतिक तंत्र संतुलन के सिद्धांत पर आधारित है। इसीलिए अगर हमें प्राकृतिक जैव विविधता को अक्षुण्ण रखना है, तो हमें प्रकृति मित्र बनना पड़ेगा। और यह तभी संभव है, जब हम खुद से यह सवाल करें कि अपनी लालच को पूरा करने के लिए तो हम खूब प्रतिस्पर्धा करते हैं, पर क्या कभी हमने प्राकृतिक संसाधनों को संरक्षित रखने की प्रतिस्पर्धा की?

तेज़ी से बदल रही इस दुनिया में तकनीकी प्रगति का आलम यह है कि एक नयी तकनीक ठीक तरीक़े से व्यवहार में आई भी नहीं कि दूसरी तकनीक उसकी जगह लेने को आ जाती है। ऐसा हो सकता है कि कुछ सालों बाद हमारे सामने ऐसे फोन आ जाएंगे, जिन्हें मन में उठने वाले विचारों से ऑपरेट किया जा सकेगा, ऐसी कारें आ जाएंगी, जिनके लिए चालक की आवश्यकता नहीं रह जाएगी, शरीर के किसी भी अंग का प्रत्यारोपण संभव हो जाएगा। मगर सवाल उठता है कि क्या तकनीकी प्रगति और प्रकृति के साथ सहजीवन दोनों साथ-साथ चल सकते हैं? बेशक। प्रकृति की गोद में रह कर हम सह-अस्तित्व की रक्षा व सम्मान करते हुए आधुनिकता की मशाल जलाए रख सकते हैं। बशर्ते, हम संवेदनशीलता से सृजनशीलता का सिद्धांत अपना सकें। इस मामले में राजा राधिका रमण प्रसाद सिंह की अनमोल पंक्तियां मानवता को कुछ खास संदेश दे रही हैं:

''आखिर इस प्रगति के चलते हमने क्या-क्या नहीं खोया और क्या-क्या नहीं पाया? ज्ञान खोया, विज्ञान पाया। श्रद्धा खोई, अभिज्ञता पाई। विश्वास खोया, तर्क़ पाया। स्वास्थ्य खोया, इलाज पाया और दिल खोया, दिमाग पाया।'' ❑

(लेखक टाइफैक (टेक्नोलॉजी इन्फॉर्मेशन फॉरकास्टिंग एंड एसेसमेंट काउंसिल), विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग में सूचना एवं जनसंपर्क अधिकारी हैं।

ई-मेल : maanbardhan@gmail.com)

PATANJALI सिविल सेवा की तैयारी हेतु समर्पित भारत का विशेषज्ञ संस्थान **I.A.S.**

उनके लिए → *जो सिविल सेवा की तैयारी प्रारम्भ कर रहे हैं, और उनके लिए भी जो सुधार चाहते हैं।*

- भारतवर्ष
- हिन्दी व Eng.माध्यम
- एक विषय

दर्शनशास्त्र

- एक संस्थान
- सर्वाधिक चयन
- सर्वाधिक अंक

G.S.और निबंध के लिये अत्यन्त उपयोगी

नोट : U.P.S.C. द्वारा हाल में ही मुख्य परीक्षा में किये गये बदलाव के बाद जो निर्देश दिये गये हैं, उससे स्पष्ट हो गया है कि अब G.S. और वैकल्पिक विषय के बीच कोई Gap नहीं मिलेगा। साथ ही प्रश्नों की संख्या भी बढ़ेगी। ऐसी स्थिति में पाठ्यक्रम के सभी खंडों से प्रश्न पूछने की संभावना बनेगी। अतः अब संपूर्ण पाठ्यक्रम का विस्तृत अध्ययन और परीक्षा के पूर्व उसका शीघ्रतापूर्वक Revision आवश्यक है। कई तथ्याकथित लोकप्रिय पेपरों में अब ऐसा कर पाना संभव नहीं होगा। दर्शनशास्त्र का Syllabus अपेक्षाकृत छोटा एवं तार्किक है जिसकी संपूर्ण तैयारी कम समय में की जा सकती है। ऐसी स्थिति में G.S. पर भी पर्याप्त ध्यान देने का समय मिल जाता है। इस दृष्टिकोण से दर्शनशास्त्र निःसंदेह वर्तमान संदर्भ में सर्वाधिक प्रसांगिक विषय है।

हिन्दी माध्यम में दर्शनशास्त्र का सर्वश्रेष्ठ रैंक

किरण कौशल **3rd Rank** **I.A.S.** छत्तीसगढ़ कैडर

दर्शनशास्त्र की तैयारी हेतु मूलतः 'पतंजलि' संस्थान के कक्षा–कार्यक्रम से संबंधित।

वर्ष 2012 visit : www.patanjalias.in

दर्शनशास्त्र के साथ हिन्दी माध्यम के प्रथम पाँचों टॉपर्स 'पतंजलि' संस्थान के मुख्य परीक्षा कक्षा-कार्यक्रम से संबंधित रहे हैं।

Rank 20 — PRIYANKA NIRANJAN, *M.A. (Eco.)*

द्वितीय प्रयास — Rank 25 — DHARMENDRA KUMAR, *M.A. (History)*

Rank 52 — DEEPA AGRAWAL, *B.A (Geog.)*

Rank 60 — SANGEETA TETARWAL, *M.B.B.S.*

प्रथम प्रयास — Rank 105 — AMIT P. YADAV, *Mechanical Engg.*

एक-दो को छोड़कर पिछले दस वर्षों में हिन्दी व अंग्रेजी माध्यम के सभी टॉपर्स तथा सर्वाधिक अंक पाने वाले अभ्यर्थी 'पतंजलि' संस्थान से रहे हैं।

Rank 9 I.A.S. छत्तीसगढ़ कैडर — जयप्रकाश मौर्य

Rank 22 I.A.S. उ० प्र० कैडर — सरोज कुमार

Rank 28 I.A.S. मध्यप्रदेश कैडर — कर्मवीर शर्मा

दर्शनशास्त्र की तैयारी हेतु मूलतः एवं पूर्णतः 'पतंजलि' संस्थान से संबंधित।

सर्वोच्च स्थान — Rank 13 I.F.S. — डॉ० प्रदीप सिंह राजपुरोहित

प्रथम प्रयास — Rank 29 I.A.S. राजस्थान कैडर — जितेन्द्र कुमार सोनी

Rank 33 I.A.S. उ० प्र० कैडर — भानू चंद्र गोस्वामी

प्रथम प्रयास 22 वर्ष — Rank 48 I.A.S. नागालैण्ड कैडर — गोविंद जायसवाल

बैच आरम्भ

(हिन्दी माध्यम)

20 नवम्बर

समय सुबहः 9 बजे से

 # 9810172345

नोट : 'पतंजलि' संस्थान में 2006-07 में पढ़ाये एवं लिखाये गये क्लास नोटस को ही अधिकांश जगहों पर प्रिंटेड सामग्री के रूप में बांटा जा रहा है। अतः मौलिकता पर ध्यान दें।

PATANJALI

HEAD OFF.: 202, IIIrd Floor, Bhandari House (Above Post Office) Dr. Mukherjee Nagar. Delhi-09
Ph.: 011-32966281, 27115152, Mob: 9810172345, 9811583851
BRANCH OFF.: 79, Old Rajender Nagar Market, IIIrd Floor (Above Kotak Mahindra Bank), New Delhi-1

YH-179/2013

प्रकृति का उपहार- मैंग्रोव वन

● नवनीत कुमार गुप्ता

हमारी धरती अनोखी एवं जीवनदायी है। इसे विभिन्न कारक जीवनदायी बनाए हुए है। जल, ज़मीन और जंगल हमारी पृथ्वी को अनोखापन प्रदान करते हैं। इन कारकों में से जंगल की जीवन को बनाए रखने में अहम भूमिका है। जंगल या वन हमारी पृथ्वी पर वायुमंडल में गैसों का संतुलन बनाए हुए हैं जिससे यहां जीवन सुचारू रूप से चल रहा है।

पृथ्वी पर अलग-अलग मिट्टी, मौसम और परिस्थितियों के अनुसार विभिन्न प्रकार के जंगल या वन पाए जाते हैं। वनों की यही विविधता असीम जैव विविधता को जन्म देती है। ऐसे ही एक अनोखे वन हैं मैंग्रोव वन। प्रकृति ने इन वनों के रूप में जीवन के विविध रूपों को एक आश्रय स्थल सौंपा है। वास्तव में प्रकृति की रचना विचित्र है। उसने तटबंधों की रक्षा करने, वृहद समुद्री व थलीय जैव विविधता को फलने-फूलने के लिए इस धरती पर मैंग्रोव जिसे कच्छ वनस्पति भी कहा जाता है, को खारे पानी में पनपने की क्षमता प्रदान की है। तटीय क्षेत्रों में मैंग्रोव वनस्पतियों ने समुद्र की अनेक विनाशकारी लहरों को धरती पर आने से रोका है।

मैंग्रोव या कच्छ वनस्पतियां खारे पानी को सहन करने की क्षमता रखने वाली दुर्लभ वनस्पतियां हैं जिनकी ऊंचाई 40 मीटर तक होती है। मैंग्रोव वनस्पतियों से आच्छादित मैंग्रोव वन, भूमि और समुद्री जल के अंत:संबंधों का अद्भुत उदाहरण हैं। 60 से 70 प्रतिशत तटों पर मैंग्रोव वनस्पतियों को देखा जा सकता है। मैंग्रोव वनस्पतियों के कारण ही तटवर्ती क्षेत्रों में सूनामी, चक्रवात और समुद्री तूफान की विनाशलीला काफी हद तक कम हो जाती है।

मैंग्रोव वनस्पतियों के खारे पानी को सहन करने ही क्षमता ही इनके समुद्र तटीय क्षेत्रों में पनपने में सहायक होती है। मैंग्रोव के विकास में खारे पानी का अहम योगदान है इसीलिए यह वनस्पतियां ज्वारीय क्षेत्रों में बहुतायत में मिलती हैं। मैंग्रोव वन ज्वारीय खाड़ियों, पश्च-जल (बैक-वॉटर), क्षारीय दलदलों में पाए जाते हैं। मैंग्रोव वनस्पतियां समुद्र-तटों पर और नदियों के मुहानों पर भी पाई जाती हैं। यह वनस्पति विश्व के उष्ण तथा उपोष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में अच्छी फलती-फूलती हैं। मैंग्रोव वनस्पतियों का सर्वोत्तम विकास 20 डिग्री सेल्सियस तापमान वाले उन उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में होता है जहां मिट्टी महीन और तट दलदली प्रकृति वाला हो। इस प्रकार की भूमि जैव-तत्वों से भरपूर होने के कारण मैंग्रोव के तीव्र विकास में सहायक होती है। मैंग्रोव वनस्पतियां 'लवण सहनशीलता गुणों' के कारण ही समुद्री तटों में पाई जाती हैं। मैंग्रोव वृक्षों की प्रजातियों के निर्धारण में उस क्षेत्र में शुद्ध जल की मात्रा विशेष प्रभाव डालती है। सर्वाधिक लवण सहनशीलता वाले वृक्ष समुद्री तट रेखा के समीप पाए जाते हैं क्योंकि ज्वार का प्रभाव सबसे ज्यादा समुद्री तट रेखा के नज़दीक ही देखा जाता है। इस प्रकार स्थलीय क्षेत्र की ओर बढ़ने पर क्रमश: कम लवण सहनशील वृक्षों की संख्या बढ़ने लगती है। मैंग्रोव की कुछ प्रजातियों में लवण के प्रति अद्भुत सहनशीलता देखी गई है।

मैंग्रोव वनस्पतियां आंशिक रूप से जल में डूबे रहने पर भी अच्छी पनपती हैं। प्रकृति ने मैंग्रोव वनस्पतियों को समुद्र से जमीन प्राप्त करने की अद्भुत क्षमता प्रदान की है। यह वनस्पतियां ज्वारीय क्षेत्रों में मिट्टी रोककर जमीन बनाने में सक्षम हैं। इस प्रकार मैंग्रोव वनस्पतियां ज्वार-भाटे के बीच में पनपती रहती हैं और इनकी जड़ें बहती मिट्टी को रोक लेती हैं। मैंग्रोव वनों के तट की ढलान से समुद्र की लहरों का वेग मंदा हो जाता है और उथली ढलानें जमीन को क्षरण से बचाने के साथ ही ये हवाओं के विरुद्ध भी अवरोधक का कार्य करती हैं।

अनोखी जड़ें

मैंग्रोव की विशिष्ट जड़ संरचना मलवे को जमाने में सहायक होती है। इन वनस्पतियों द्वारा नदियों में बहकर आया हुआ मलवा समुद्री तटों पर ही रोक दिया जाता है। एक लंबे अंतराल के बाद लगातार मलवे के जमा होते रहने से डेल्टाओं का निर्माण होता है। मैंग्रोव की जड़ें मुख्यत: तीन प्रकार की होती हैं। एक प्रकार की मैंग्रोव जड़ें तने के ऊपरी भाग से निकलते हुए मलवे तक पहुंच जाती हैं। मैंग्रोव वनस्पतियों में जड़ की दूसरी संरचना 'मुड़े घुटने' जैसी दिखाई देती है। यह जड़ें समस्तर रूप से फैलती हुई ऊपर नीचे की ओर निकलती हैं। इन वनस्पतियों में एक तीसरी प्रकार की जड़ संरचना भी देखी जाती है जिसमें जड़ समस्तर आकार में फैलती तो हैं, पर कुछ जड़ें ऊपर की ओर भी निकलती हैं। इस प्रकार मैंग्रोव वनस्पतियों की पुरानी जड़ें धीरे-धीरे मलवे में समाती रहती हैं।

पेड़ों पर अंकुरित होते बीज

मैंग्रोव वनस्पतियों में फलों के बीज जमीन पर गिरने से पूर्व ही इस प्रकार अंकुरित हो जाते हैं जैसे किसी पौधे को कलम द्वारा लगाया जाता है। कुदरत ने मैंग्रोव को यह विशिष्ट गुण इसलिए दिया है ताकि इसके बीज दलदल में गिरने पर अपनी जड़ें आसानी से जमा सकें। यह तो हम जानते ही हैं कि खारे पानी में बीजों के अंकुरण की संभावना कम होती है, इसलिए विकास की उत्तरोत्तर प्रक्रिया के कारण मैंग्रोव वनस्पतियों ने बीज अंकुरण की विशिष्ट प्रक्रिया को अपनाया। इन वनस्पतियों में बीज अंकुरण के इस असाधारण गुण को जयायुज या पिण्डज (विविपैरस) के नाम से जाना जाता है। मैंग्रोव में फलों के आने का मुख्य समय जून से सितंबर के मध्य होता है। हांलाकि कम मात्रा में फल व बीज तो इनमें वर्षभर देखे जा सकते हैं। कई बार तो मुख्य पेड़ से गिरने के पहले ही बीज की अंकुरित जड़ें नीचे की ओर झुकती हुई जमीन तक पहुंच जाती हैं। मैंग्रोव के बीज की एक विशेषता इसका भारीपन व गूदेदार होना भी है, जो इसको पेड़ से गिरने पर स्थायित्व प्रदान करने में सहायक होता है। इस प्रकार मैंग्रोव के बीज पानी के बहाव में भी कई दिनों तक जीवित रह पाते हैं।

अनोखा पारिस्थितिकी तंत्र

मैंग्रोव वन समृद्ध पारिस्थितिकी तंत्र का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण हैं। मैंग्रोव वन क्षेत्र जीव-जंतुओं और पौधों की ऐसी प्रजातियों के संरक्षण क्षेत्र हैं जो विकास की दीर्घकालीन प्रक्रिया से आपस में जुड़े हुए हैं। मैंग्रोव क्षेत्र उच्च उत्पादक और पोषक तत्वों से भरपूर होता है। यह पारिस्थितिकी तंत्र, स्थलीय और जलीय दोनों जीवों से समृद्ध है। इस क्षेत्र में पक्षी, स्तनधारी, सरीसृप एवं मत्स्य वर्ग के जीवों की प्रधानता होती है। मैंग्रोव पारिस्थितिकी तंत्र में समृद्ध जैव बहुलता के कारण आर्थिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। इस क्षेत्र में सीप, केकड़ा, झींगा, घोंघा और मछली पालन की अपार संभावनाएं विद्यमान हैं। मैंग्रोव औषधीय महत्व के कारण भी महत्वपूर्ण वनस्पति है। इनसे अनेक दवाइयां बनाई जाती हैं। कुछ क्षेत्रों में मैंग्रोव पत्तियों का उपयोग प्राकृतिक चाय के रूप में किया जाता है। मैंग्रोव का उपयोग घरेलू ईंधन के रूप में किए जाने के साथ-साथ खाद्य पदार्थ के रूप में भी किया जाता है। मैंग्रोव से चारकोल, मोम, टेनिन, शहद और जलावन लकड़ी भी प्राप्त की जाती है।

मैंग्रोव क्षेत्र की प्रचुर जैव-विविधता के लिए प्रकृति ने विशेष व्यवस्था की है। मैंग्रोव पारितंत्र में फफूंदी और बैक्टीरिया जैसे सूक्ष्मजीव जैविक पदार्थों का विघटन कर इस क्षेत्र की भूमि को पोषक तत्वों से समृद्ध रखते हैं। इससे इस पारितंत्र में शैवाल और समुद्री घासों की विभिन्न प्रजातियां बहुतायत में मिलती हैं जिन पर शाकाहारी जीव निर्भर

तालिका-1

मैंग्रोव कार्ययोजना के अंतर्गत भारतीय मैंग्रोव क्षेत्र

क्रमांक	संरक्षण प्राप्त मैंग्रोव क्षेत्र	राज्य
1	सुंदरवन	पश्चिम बंगाल
2	भितरकनिक	उड़ीसा
3	महानदी	उड़ीसा
4	सुवर्णरेखा	उड़ीसा
5	देवी	उड़ीसा
6	धामरा	उड़ीसा
7	कालीभंजा डीए द्वीपसमूह	उड़ीसा
8	कोरिंगा	आंध्र प्रदेश
9	पूर्व गोदावरी	आंध्र प्रदेश
10	कृष्णा	आंध्र प्रदेश
11	पिचवरम	तमिलनाडु
12	केजुहुवेली	तमिलनाडु
13	मुथुपेट	तमिलनाडु
14	रामानाड	तमिलनाडु
15	अचरा-रत्नागिरी	महाराष्ट्र
16	देवगढ़	महाराष्ट्र
17	विजयदुर्ग	महाराष्ट्र
18	मुम्ब्रा-दीवा	महाराष्ट्र
19	वितीरलर नदी	महाराष्ट्र
20	कुण्डलिका-रवदाना	महाराष्ट्र
21	वसासी-मनोरी	महाराष्ट्र
22	श्रीवर्धन-वेरल-टुरूमबादी और कालसुरी	महाराष्ट्र
23	चारो	गोवा
24	उत्तरी अंडमान	अंडमान और निकोबार द्वीपसमूह
25	दक्षिणी अंडमान	अंडमान और निकोबार द्वीपसमूह
26	खंभात की खाड़ी	गुजरात
27	कच्छ की खाड़ी	गुजरात
28	कूंडापुर	कर्नाटक
29	होनावर क्षेत्र	कर्नाटक

होते हैं और शाकाहारी प्राणियों की अधिक संख्या होने पर मांसाहारी जीव भी इन क्षेत्रों में आसानी से अपना जीवनयापन करते हैं। इस प्रकार यह क्षेत्र जैवविविधता से समृद्ध होता है। भारत के मैंग्रोव वनों में लगभग 1,600 वनस्पतियां एवं 3,700 जीव पहचाने गए हैं।

प्रमुख मैंग्रोव क्षेत्र

पूरे विश्व में मैंग्रोव दो समूहों में विभाजित है। पहले वर्ग में हिंद-प्रशांत समूह में करीब 40 मैंग्रोव प्रजातियां हैं जो अफ्रीका, भारत, ऑस्ट्रेलिया और पश्चिम प्रशांत महासागर के तटीय क्षेत्रों में विद्यमान हैं। दूसरे क्षेत्र में पश्चिम अफ्रीका, कैरेबियन और अमेरिकन समूह में पाए जाने वाली 8 मैंग्रोव प्रजातियां हैं। विश्व में सर्वाधिक सघन मैंग्रोव वन मलेशिया के तटवर्ती क्षेत्रों में पाए जाते हैं। विश्व का सर्वाधिक विशाल (51,800 वर्ग किलोमीटर) मैंग्रोव क्षेत्र भारत एवं बांग्लादेश की सीमा में स्थित सुंदरवन क्षेत्र है। भारत की बात की जाए तो पश्चिम बंगाल का सुंदरवन क्षेत्र देश का सबसे बड़ा मैंग्रोव क्षेत्र है।

भारत में स्थित मैंग्रोव क्षेत्र

भारत विश्व के उन देशों में से एक है जहां मैंग्रोव वनस्पतियों की सर्वश्रेष्ठ प्रजातियां पाई जाती हैं। यहां विश्व के कुल मैंग्रोव वनों का सात प्रतिशत उपलब्ध है। भारत में 42 वर्गों और 28 समूहों में मैंग्रोव की 69 प्रजातियां पाई जाती हैं। इनमे में 26 अंडमान और निकोबार क्षेत्र में एवं 18 प्रजातियां पूर्वी तट में पाई जाती हैं। भारत की वर्ष 2011 की वन रिपोर्ट के अनुसार देश में 4,462 वर्ग किमी. क्षेत्र में मैंग्रोव वनस्पतियां पाई जाती हैं। भारत में मैंग्रोव की दो देशज प्रजातियां हैं, पहली राइजोफोरा एन्नामलायाना जोकि पिचवरम तमिलनाडु में और दूसरी उड़ीसा के भितर कनिक क्षेत्र में पाई जाती है। पर्यावरण और वन मंत्रालय में 1987 से मैंग्रोव वनस्पति संरक्षण योजना शुरू की। अब तक वन मंत्रालय द्वारा 39 मैंग्रोव वनस्पति क्षेत्रों की पहचान की गई है, जिनमें गहन संरक्षण और प्रबंधन का कार्य किया जा रहा है। इन क्षेत्रों की पहचान ह्नेशनल कमेटी ऑन मैंग्रोव एंड कोरल रीफह द्वारा उन क्षेत्रों की जैव विविधता के आधार पर की जाती है। मैंग्रोव क्षेत्र प्रबंधन कार्यक्रम के अंतर्गत मैंग्रोव वनस्पतियों का रोपण, सुरक्षा केचमेंट एरिया उपचार, प्रदूषण शमन, गाद नियंत्रण, जैव विविधता संरक्षण, सर्वेक्षण और सीमांकन के साथ-साथ जागरुकता संबंधित गतिविधियां चलाई जाती हैं। भारतीय वन एवं पर्यावरण मंत्रालय ने मैंग्रोव वनस्पतियों की उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए उड़ीसा में 'राष्ट्रीय मैंग्रोव वनस्पति आनुवांशिक संसाधन केंद्र' स्थापित किया है। मैंग्रोव वनस्पति संरक्षण और प्रबंध योजना वाला यह कार्यक्रम मैंग्रोव वनों को बढ़ाने, बचाने, प्रदूषण मुक्त रखने, जैव-विविधता संरक्षण के साथ उन क्षेत्रों के सीमांकन और सर्वेक्षण का कार्य करते हुए मैंग्रोव वनस्पतियों के बारे में जागरुकता के प्रसार का कार्य कर रहा है।

लंबे समय तक मैंग्रोव वनों को व्यर्थ मान कर इन क्षेत्रों पर विशेष ध्यान नहीं दिए जाने से भी मैंग्रोव वनों की स्थिति बिगड़ती गई। इसके अलावा विगत कुछ दशकों में मैंग्रोव पारिस्थितिकी तंत्र को अत्यधिक मानवीय और जैवीय दबाव को सहन करना पड़ा है जिसके परिणामस्वरूप भारत के लगभग आधे मैंग्रोव वन समाप्त हो गए हैं। इन वनों के समाप्त होने से स्थानीय जैव-विविधता पर भी नकारात्मक परिणाम देखे गए हैं। क्षेत्रीय जैवविविधता के प्रभावित होने के साथ मैंग्रोव रहित तटीय क्षेत्रों को तूफान की विभीषिका झेलनी पड़ती है। मैंग्रोव वनों को मानव अतिक्रमण से भारी क्षति पहुंची है। मानव द्वारा कृषि क्षेत्र के विस्तार, झींगा पालन और मछली पालन के लिए मैंग्रोव क्षेत्रों के अतिक्रमण से भी इन वनों के अस्तित्व को गंभीर चुनौती मिलने लगी है। बांग्लादेश में सुंदरवन मैंग्रोव क्षेत्र के तीव्र क्षरण से तटवर्ती क्षेत्रों को समुद्री तूफान का सामना करना पड़ रहा है। भारत में भी आंध्र प्रदेश और उड़ीसा में समुद्री तट रेखा के विकास के नाम पर बिना सोचे-समझे मैंग्रोव वनों को काट देने से आए दिन समुद्री तूफान की विपत्ति झेलनी पड़ती है।

ख़तरे में है मैंग्रोव वनस्पतियां

मैंग्रोव वन सबसे अधिक उत्पादक और जैव विविधता वाले क्षेत्र हैं लेकिन आज इन तटीय वनों पर सबसे अधिक ख़तरा मंडरा रहा है। मैंग्रोव वन आंतरिक वर्षावनों से भी अधिक तेज़ी से खत्म हो रहे हैं। नदी मुख, भूमि और समुद्रों के अंत:संबंधित क्षेत्रों में कायम मैंग्रोव वन थलीय और जलीय जीवों के लिए अनोखे आवास स्थल हैं। इसीलिए मैंग्रोव वन किसी भी समुद्री पारिस्थितिकी के स्वास्थ्य की निशानी होते हैं। लेकिन आने वाले समय में विश्व के सामने मैंग्रोव वनों की सुरक्षा बड़ी पर्यावरणीय चुनौती होगी। भारत में पिछले एक सदी के दौरान मैंग्रोव वनों के क्षेत्रफल में 40 प्रतिशत की कमी आई है। नेशनल रिमोट सेंसिंग एजेंसी के अनुसार 1975 से 1981 के दौरान मैंग्रोव वनों के क्षेत्रफल में करीब 7,000 हेक्टयर की कमी आई है।

मैंग्रोव वनों के विनाश से कीटनाशकों, रासायनिक व औद्योगिक बहि:स्रावों के कारण प्रदूषण की समस्या में भी वृद्धि होगी। मैंग्रोव वनस्पतियों को प्राकृतिक व मानवीय गतिविधियों से ख़तरा बढ़ने लगा है। चक्रवात व जलवायु परिवर्तन जैसी प्राकृतिक क्रियाओं से इन वनस्पतियों को काफ़ी नुक़सान पहुंचता है। यदि मानव समझदारी से काम ले तो इस समृद्ध वन का उचित लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

मैंग्रोव वनस्पतियों का संरक्षण

समृद्ध जैव विविधता वाले मैंग्रोव वनों के आर्थिक, सामाजिक और पर्यावरणीय महत्व के कारण इनका संरक्षण अति आवश्यक है। असल में भारत में मैंग्रोव वनों के प्रबंधन की दीर्घकालीन परंपरा रही है। सुंदरवन मैंग्रोव क्षेत्र विश्व का पहला मैंग्रोव क्षेत्र है जहां वैज्ञानिक तरीक़े से इस वन का प्रबंधन किया गया। भारतीय मैंग्रोव वनों की पुनर्समृद्धि स्थानीय पारितंत्र के साथ तटीय क्षेत्रों की सुरक्षा के लिए भी लाभकारी होगा। मैंग्रोव वनों की उपयोगिता को देखते हुए विश्वभर में इनके बचाव और विकास पर पर्याप्त ध्यान दिया जा रहा है। समुद्र तटवर्ती क्षेत्रों में मैंग्रोव के विकास के कई कार्यक्रम आरंभ किए गए हैं। भारत में भी इस दिशा में महत्वपूर्ण कार्य हो रहा है। तमिलनाडु के पिचवरम क्षेत्र में मैंग्रोव वृक्षारोपण के लिए वृहद अभियान चलाया जा रहा है। इसी तरह 15 जनवरी, 1996 को सेवारी मैंग्रोव उद्यान की घोषणा की गई। बांबे नेचुरल हिस्ट्री सोसायटी ने इस क्षेत्र में पक्षियों के संरक्षण की लिए विशेष कार्य किए।

मैंग्रोव वनों को राजस्व कमाने के नजरिये से न देख कर एक जीवित इकाई के रूप में देखने, समझने व उपयोग करने की आवश्यकता है तभी हम आने वाली पीढ़ियों को धरोहर के रूप में समृद्ध मैंग्रोव वन विरासत में दे पाएंगे। हमें सदैव यह बात याद रखनी चाहिए कि मैंग्रोव पारिस्थितिकी तंत्र अनोखा पारिस्थितिकी तंत्र होने के साथ ही जैव विविधता का भी भंडार है जहां जीवन के विविध रूप खिलखिला रहे हैं। ❑

(लेखक विज्ञान प्रसार, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, नई दिल्ली में परियोजना अधिकारी हैं एवं *जलवायु परिवर्तन: एक गंभीर चुनौती* **पुस्तक के लिए राजभाषा पुरस्कार से सम्मानित हैं।**

ई-मेल : ngupta@vigyanprasar.gov.in)

IAS PCS

भारत का एकमात्र सेवार्थ संस्थान
जो "न्यूनतम शुल्क पर अधिकतम गुणवत्ता" हेतु प्रतिबद्ध है

KUMAR'S IAS

KUMAR'S IAS में Fee अन्य संस्थानों की तुलना मे कम क्यों?

क्योंकि

KUMAR'S IAS की स्थापना **Kumar Sir** द्वारा **2006** में अपनी **Mother** की प्रेरणा से की गई थी, और उन्हीं के कहने पर **Kumar Sir** ने संस्थान को केवल आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग को ध्यान में रखकर संचालित किया लेकिन कुछ समय पूर्व उनकी **Death** हो जाने के कारण आज भी **Kumar Sir** उनके सपने को पूरा करने के लिए संस्थान को सेवार्थ भावना पर ही संचालित कर रहे है। इसलिए कोई भी अभ्यर्थी **KUMAR'S IAS** में आकर कम **Fee** के बारे में कोई प्रश्न न करें और ना ही अन्य संस्थान **KUMAR'S IAS** की सेवार्थ भावना पर कोई टिप्पणी करें।

उपलब्ध विषय, Fee व कोर्स अवधि

विषय	Fee	अवधि
सामान्य अध्ययन (मुख्य परीक्षा)	₹ 15,500	5 माह
सामान्य अध्ययन (प्रारंभिक सह मुख्य परीक्षा)	₹ 20,500	8 माह
लोक प्रशासन (मुख्य परीक्षा)	₹ 15,500	4 माह
CSAT	₹ 12,500	3½ माह
BPL, SC, ST, OBC तथा Female को इस Fee में 25% Discount मिलेगा।		

अभ्यर्थी ध्यान दें **Admission** "पहले आऐं व पहले पाऐं" के आधार पर होगें अतः बैच में **Seat Full** हो जाने के बाद किसी भी प्रकार की सिफारिश को स्वीकार नहीं किया जाएगा।

बैच प्रारम्भ : 16 Dec.

एक बार पुनः कम Fee में उच्चतम गुणवत्ता का उत्कृष्ट परिणाम

Rank-4 (BPSC) Md. Mustaque

Rank- 97

Result CSE-2012

Jafar Malik
Roll No.: 038816

Sakthi Ganesan S
Roll No.: 020243

Rank- 131

सिविल सेवा मुख्य परीक्षा-2012 में सफल अन्य अभ्यर्थी

KUMAR'S IAS

A-31/34, Basement Arya Gas Agency, Behind Post Office,
Jaina Extension Complex, Dr. Mukherjee Nagar, Delhi-09
Email : kumariasacademy@gmail.com
Website : www.kumarsias.com
011-47567779

24×7 Helpline : 0-8882388888

0-888-222-4455
0-888-222-4466
0-888-222-4477
0-888-222-4488

अभ्यर्थी ध्यान दें Admission कराने के लिए 1 Photo व Total Fee का 20% Amount अवश्य साथ लायें...

YH-186/2013

(पृष्ठ 39 का शेषांश)

अधिग्रहण आसानी से किया जा सकेगा।

जिलाधिकारी के अधिकारों पर नियंत्रण

नये कानून में जिलाधिकारी द्वारा भूमि अधिग्रहण स्वत: करने के अधिकारों को नियंत्रित किया गया है। यह अधिकार था कि वह उन गतिविधियों को तय करे कि जनहित में कौन-सी गतिविधियां आती हैं। नये कानून में यह निर्धारित करने का अधिकार अब जिला अधिकारी से वापस ले लिया गया है। इस कानून में जनहित के मापदंड सुस्पष्ट कर दिए गए हैं। अब जिला अधिकारी इस कानून में उल्लिखित जनहित कार्यों की सूची में कोई परिवर्तन नहीं कर सकते हैं। जिलाधिकारी को पहले 1894 के कानून में विस्थापित को दिए जाने वाले मुआवज़े को निर्धारित करने का भी अधिकार था जबकि नये कानून में इसके लिए एक फार्मूला बनाया गया है जिसमें जिलाधिकारी कोई भी परिवर्तन नहीं कर सकता है। उसका कार्य निर्धारित दर पर मुआवज़े की गणना कर उसका भुगतान सुनिश्चित करना है।

जिलाधिकारी को पुराने कानून में यह फैसला करने का अधिकार था कि कब्ज़ा कब लिया जाए। साथ ही वह एक महीने का नोटिस देकर किसी भी परिवार को विस्थापित कर सकता था। नये कानून में व्यवस्था की गई है कि अब तभी कब्ज़ा लिया जा सकता है जब भू-स्वामी को अधिग्रहण की गई भूमि के मुआवज़े का पूरा भुगतान कर दिया गया हो और पुनर्वासन एवं पुनर्व्यवस्थापन की सारी प्रक्रियाएं पूरी कर दी गई हों।

पुराने कानून में जिलाधिकारी को आपात क्लाज की निरंकुश शक्तियां प्राप्त थीं और वह स्वयं उनके बारे में फ़ैसला ले सकता था। अब प्राकृतिक आपदा और राष्ट्रीय सुरक्षा से संबंधित मामलों को छोड़कर वह स्व-विवेक से भूमि अधिग्रहण के अधिकार का प्रयोग नहीं कर सकेगा।

पुनर्विचार का अधिकार

नये कानून के अंतर्गत अगर कोई प्रभावित भूमि अधिग्रहण के बारे में किए गए निर्णय से संतुष्ट नहीं है तो उसे पुनर्वास एवं पुनर्व्यवस्थापन प्राधिकरण के समक्ष मुआवजे या अन्य सुविधाओं में संशोधन या वृद्धि करने के बारे में याचिका दायर करने का अधिकार है। नये कानून में प्राधिकरण की स्थापना का प्रावधान किया गया है। प्राधिकरण को 6 महीने के भीतर याचिका पर फ़ैसला करना होगा। अगर इसके बाद भी प्रभावित परिवार प्राधिकरण के फ़ैसले से संतुष्ट न हों तो वह अदालत में प्राधिकरण के फ़ैसले के ख़िलाफ़ अपील कर सकता है।

भूमि अधिग्रहण, पुनर्वासन तथा पुनर्व्यवस्थापन विधेयक, 2013 से नक्सल प्रभावित जिलों में भी व्यापक प्रभाव पड़ने की संभावना है। देश के 88 नक्सल प्रभावित जिले हैं जहां जंगल और ज़मीन से जुड़े मुद्दे प्रभावित कर रहे हैं। सही ढंग से इस कानून के लागू होने से आदिवासियों को भी अधिकाधिक फायदा होगा। यह एक ऐसा विधेयक है जिसमें भू-स्वामी को शोषण से बचाने का पूरा प्रयास किया गया है और उसके अधिकारों को पूरी तरह से सुरक्षित रखा गया है। ❑

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं।
ई-मेल : devendra.kumar@gmail.com)

योजना

सदस्यता कूपन

नयी सदस्यता / नवीकरण / पता बदलने के लिए (जो लागू होता हो उस पर '✓' का चिह्न लगाएं।)

मैं ..... (पत्रिका का नाम एवं भाषा) का ❑ वार्षिक (100 रुपये) ❑ द्विवार्षिक (180 रुपये) ❑ त्रिवार्षिक (250 रुपये) सदस्य बनने का इच्छुक हूं। डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर/मनीआर्डर संख्या .... तारीख .....

नाम .....

वर्ग ❑ विद्यार्थी ❑ शिक्षक ❑ संस्था ❑ अन्य

पता :.....

.....

पिन .....

नवीकरण/पता बदलने के लिए कृपया अपनी सदस्य संख्या यहां लिखें :.....

डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर/मनीआर्डर ***अपर महानिदेशक, प्रकाशन विभाग*** के नाम से बनवाएं और कूपन के साथ इस पते पर भेजें : व्यापार व्यवस्थापक (प्रसार) प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड-IV, सातवां तल, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली-110066

हम आपको प्रशासक बनाते हैं, इतिहासकार नहीं!

SIHANTA IAS

इतिहास का एकमात्र मानक संस्थान

इतिहास रजनीश राज

नि:शुल्क कार्यशाला

11 Nov., 11:00 A.M.

20 Nov., 5:00 P.M.

हमारा प्रदर्शन

KIRAN KAUSHAL
RANK- 3

हिन्दी माध्यम का अब तक का सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन

इस बार के श्रेष्ठ रैंकधारी

KANA RAM
RANK-54 (UPSC)

REENA NIRANJAN
RANK-211 (UPSC)

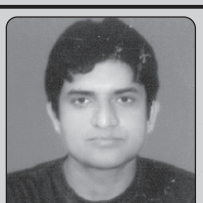

MD. MUSTAQUE
RANK-4 (BPSC)

धीरज कुमार, अमरपाल, अमित सिंह, मो. मुश्ताक, मनीष कुमार, साकेत रंजन प्रियंका मीना, नरेन्द्र कुमार, प्रवीन कुमार —क्रमशः

उपरोक्त सभी प्रतिभागी इतिहास में श्रेष्ठ अंक के कारण ही कामयाब हुए।

संकल्पनात्मक विकास एवं लेखन शैली पर सर्वाधिक बल के कारण सिहान्ता के श्रेष्ठ अंकधारी

विष्णुकांत तिवारी-378 अंक	राजेन्द्र मीणा -371 अंक
नरेश सैनी -376 अंक	मयंक प्रभा -371 अंक
रामाशीष -376 अंक	द्रोपसिंह मीणा-371 अंक
आलोक पाण्डेय-372 अंक	क्रमशः

इतिहास पढ़ें, क्योंकि

1. नियमित रूप से श्रेष्ठ अंक दिलाने वाला विषय।
2. प्रारम्भिक एवं मुख्य परीक्षा के सामान्य अध्ययन के लिए सर्वाधिक उपयोगी, जो तीन महीने का समय भी बचाएगा और गुणवत्ता भी बढ़एगा।
3. संविधान, अंतर्राष्ट्रीय संबंध एवं नीति शास्त्र की भी शानदार पृष्ठभूमि मिलेगी
4. निबन्ध के लिए विशेष रूप से लाभदायक।

Plot No. 8-9, Flat No. 301-302, Ansal Building, Comm. Complex, Dr. Mukherjee Nagar, Delhi -9

011-42875012, 09873399588, 09990107573

YH-187/2013

औद्योगिकीरण, जनजातीय सरोकार और मीडिया

● उमाशंकर मिश्र
सुबोध कुमार

वर्ष 2006 में वनवासी जनजातियों को भूमि अधिकार देने के लिए वनाधिकार अधिनियम बनाया गया था, जिस पर आज तक ठीक से अमल नहीं हो सका है। प्राकृतिक संपदा के बड़े पैमाने पर हो रहे दोहन के बावजूद, आज भी हमारे जंगलों में अकूत खनिज संपदा और जैव विविधता भरी पड़ी है, जिस पर विदेशी कंपनियों की नज़रें गड़ी हुई हैं। औद्योगिक विस्तार के लिए ये कंपनियां स्थानीय लोगों को उनके आवास और खेती-बाड़ी से बेदखल कर रही हैं। प्रस्तुत शोध-पत्र में इस बात को रेखांकित करने का प्रयास किया गया है कि जागरुकता के प्रचार-प्रसार, विभिन्न मुद्दों पर जनस्वीकृति, जनमत निर्माण और नीति निर्धारण में मीडिया की भूमिका काफी अहम हो सकती है

बात 5 नवंबर, 2009 की है, जब 37 गैर-सरकारी संगठनों से जुड़े झारखंड के दूर-दराज के जनजातीय इलाक़ों से आए सैकड़ों आदिवासियों ने रांची रेलवे स्टेशन से लेकर राजभवन तक पैदल मार्च किया था। वे यहां विकास परियोजनाओं में न तो अपनी हिस्सेदारी की मांग करने के लिए आए थे और न ही उनकी मंशा राजनीतिक ताक़त बटोरने की थी। बल्कि वे लोग सैकड़ों किमी. का सफ़र तय करके झारखंड की राजधानी रांची में सरकार से अपनी ज़मीन पर अधिकार की मांग को लेकर यहां पहुंचे थे, यह ऐसी ज़मीन थी जो औद्योगिक अथवा खनन परियोजनाओं के चलते उनसे छीनी जा रही थीं।

उल्लेखनीय है कि इस घटना से ठीक एक दिन पहले प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने मुख्यमंत्रियों के सम्मेलन में आदिवासियों की भूमि एवं वनाधिकार की रक्षा की अपील की थी। इसे विडंबना ही कहा जाएगा कि गत छह दशकों में भारतीय लोकतांत्रिक व्यवस्था से आदिवासियों को कुछ हासिल हुआ तो वह शोषण, भेदभाव, वंचना एवं पीढ़ियों से भूमि को जोतने और बोने से बेदखली के रूप में मिला है। आदिवासियों ने वनों के स्वाभाविक निवासी होने के नाते अपने अधिकारों की जब भी मांग की तो उसे सभी सरकारें ख़ारिज करती रहीं और जब भी जनजातीय समुदायों ने स्वयं के परंपरागत वनवासी होने का दावा पेश किया तो उन्हें आधिकारिक तौर पर विभिन्न कानूनी प्रावधानों की आड़ में पेड़ों, नदियों, पहाड़ों और जंगली जानवरों का दुश्मन ठहराकर जंगल से बाहर खदेड़ने की प्रक्रिया आरंभ कर दी गई। इतने पर भी जब आदिवासियों ने अपनी ज़मीनों को तथाकथित विकास परियोजनाओं के लिए देने से इंकार कर दिया गया तो उन पर विभिन्न प्रकार के आपराधिक मामले दर्ज़ कर लिए गए और उन्हें अपने देश की ही लोकतांत्रिक व्यवस्था के रक्षक कही जाने वाली पुलिस की गोलियों का भी शिकार बनना पड़ा। उपनिवेशवादी हुकूमत ने संसाधनों के दोहन के लिए जिस तरह का ढांचा बनाया था, आजादी के बाद भी कानून

एवं नीतियों की आड़ में संसाधनों की लूट का यह सिलसिला ठीक उसी तरह से चलता रहा। भारतीय संविधान ने औपनिवेशिक नीति का अनुसरण करते हुए जनजातीय इलाक़ों पर अधिकार शासन व्यवस्था को देकर वनों के स्वाभाविक निवासियों को उनके परंपरागत आवास से कानूनी तौर पर बेदखल कर दिया गया। बाद में जब संरक्षित वन और अभयारण्यों की अवधारणा का जन्म हुआ तो मामला और भी पेंचीदा हो गया। इस तरह वनोत्पादों पर परस्पर आश्रित समूचे जनजातीय समाज को हाशिये पर और ग़रीबी के दलदल में धकेल दिया गया, जहां न तो आजीविका थी, न आवास और न ही आत्मसम्मानपूर्ण एवं आत्म निर्भर जीवन का अहसास ही बचा रह सका था।

जानी-मानी पर्यावरणविद सुनीता नारायण ने इस बात को भली-भांति समझाया है। भारत के नक्शे पर सबसे पहले उन इलाक़ों को चिह्नित कीजिए जो सबसे अधिक खनिज और प्राकृतिक संसाधनों से संपन्न हैं। फिर एक नक्शे पर ऊपर से नीचे की ओर नज़र दौड़ाइए और उन जिलों को चिह्नित कीजिए जो देश के सबसे ग़रीब जिले हैं। फिर उन जिलों को चिह्नित कीजिए जहां सबसे अधिक औद्योगिक परियोजनाएं, बड़े बांध एवं सिंचाई परियोजनाएं स्थापित की गई हैं। अंत में पता चलेगा कि देश की सबसे ग़रीब आबादी वाले जिले वही हैं जो खनिज संसाधनों से संपन्न हैं। उद्योगीकरण और अन्य विकास परियोजनाओं ने भी यहीं पर अपनी जड़ें जमाई हैं। सवाल यह है कि इतना सब कुछ होने के बावजूद देश के सबसे संपन्न जिलों की आबादी सबसे ग़रीब, अशिक्षित, कुपोषित और पिछड़ी क्यों बनी हुई है? संविधान की धारा-342 के मुताबिक, अनुसूचित जनजातियां वे जनजातीय समुदाय हैं जिन्हें सार्वजनिक अधिसूचना द्वारा उनके परंपरागत जीवन के संरक्षण, उत्थान के लिए और शोषण एवं भेदभाव से मुक्त रखने के लिए संविधान में सूचीबद्ध किया गया है। सवाल यह है कि क्या इस तरह के संवैधानिक प्रावधान के बावजूद जनजातीय समुदायों के मूल अधिकारों का संरक्षण संभव हो सका है? वर्ष 2001 की जनगणना के मुताबिक भारत में अनुसूचित जनजातियों की आबादी आठ करोड़ 43 लाख है, जो पूरे देश की जनसंख्या के 8.2 प्रतिशत के बराबर है।

अगर इस बात का विश्लेषण किया जाए कि अब तक औद्योगीकरण, उत्खनन और बड़े बांधों से जुड़ी परियोजनाओं ने आखिर स्थानीय निवासियों को दिया क्या है तो रोंगटे खड़े हो जाएंगे। अकेले बड़े बांधों से तीन करोड़ से अधिक लोग विस्थापित हुए हैं, जिनमें अधिसंख्य आबादी जनजातीय समुदायों की है। लाखों लोगों को अब तक इस कथित विकास की बेदी पर अपने घर, खेत-खलिहान और सामाजिक ताने-बाने की बलि चढ़ानी पड़ी है। झारखंड, ओड़िशा, छत्तीसगढ़ जैसे जनजातीय प्रदेशों की बात हो या फिर मामला हरसूद और टिहरी का हो। स्थानीय आबादी को इस कथित विकास की भारी क़ीमत चुकानी पड़ी है। बड़ी संख्या में लोगों को निराश्रय होना पड़ा है। ऐसे में लोगों के जीवनयापन के स्रोत और मानव जीवन एवं उसके विकास की आधारभूत जरूरतें मसलन- भोजन, आवास, शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, स्वच्छ पर्यावरण और सुरक्षित वातावरण भी ऐसे में छिन जाते हैं। सामाजिक कार्यकर्ता रमणिका गुप्ता के मुताबिक-''औद्योगीकरण के नाम पर विस्थापन और विनाश की गाथा लिखी जा रही है। स्थानीय लोगों को उनके आवास से बेदखल करने वाला यह विकास आखिर किसके लिए है? इस विकास से न तो रोज़गार मिलता है और न ही पुनर्वास, यदि कुछ मिलता है तो सिर्फ़ विस्थापन! दूसरी ओर राजनीतिज्ञ और कार्पोरेट कंपनियां इस मामले पर जनता का विश्वास अर्जित नहीं कर पा रहे हैं। विडंबना तो यह है कि कोई सामूहिक आंदोलन भी नहीं खड़ा हो पा रहा है।''

दूसरी ओर सरकार और संविधान ने भी अनुसूचित जनजातियों के साथ ऐतिहासिक अन्याय की बात को स्वीकार किया है। वनाधिकार अधिनियम-2006 को इसी तरह के सवालों के जवाब के तौर पर ईजाद किया गया था। इसके बावजूद यह सवाल जस का तस बना हुआ है और इस अधिनियम का क्रियान्वयन अब भी अधर में लटका हुआ है।

औद्योगीकरण और नक्सलवाद के निहितार्थ

नक्सलवादियों का आरोप है कि सरकार कंपनियों की पैरोकार बनकर औद्योगिक परियोजनाओं के लिए जल, जंगल, ज़मीन और प्राकृतिक संसाधनों के दोहन की खुली छूट देने में जुटी हुई है। वर्ष 1990 की शुरुआत से भारत सरकार ने उदारीकरण की ओर कदम बढ़ाया। इसी के साथ जल, जंगल, ज़मीन ही नहीं ग्रामीण जलधाराएं, चरागाह आदि वन संपदाओं पर बचे-खुचे जनाधिकारों और विशेष आर्थिक क्षेत्र, खनिज उत्खनन, औद्योगीकरण तथा सूचना प्रौद्योगिकी क्षेत्र जैसे प्रकल्पों के प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष द्वंद्व शुरू हो गया। सरकार पर विकास के नाम पर औद्योगीकरण के प्रति उदारवादी रवैया अपनाने के आरोप लगते रहे हैं। क्या कारण है कि सरकार अब तक विस्थापन और पुनर्वास से जुड़ी कोई ठोस नीति नहीं बना पाई है! बांध निर्माण, सिंचाई परियोजनाएं, बिजली उत्पादन, सेज और औद्योगीकरण को विकास की अनिवार्य आवश्यकता के तौर पर महिमामंडित किया जाता है। इसी धारणा का प्रचार-प्रसार करते हुए औद्योगिक समूह और विनिर्माण क्षेत्र दशकों से चांदी कूटते रहे हैं।

सरकार विस्थापन एवं पुनर्वास से जुड़ी कोई ठोस नीति तो नहीं बनाती, लेकिन उद्योग जगत को जनता द्वारा चुकाये गए करों के पैसे से तमाम तरह की सब्सिडी देकर निर्यात वृद्धि का मार्ग प्रशस्त करना चाहती है। सवाल यह है कि इस निर्यात वृद्धि से कालाहांडी या फिर बस्तर के जनजातीय समुदाय को क्या लाभ मिलेगा? सामाजिक कार्यकर्ता अरुणा राय का कथन उल्लेखनीय है कि-''खनिजों से समृद्ध जनजातीय क्षेत्रों में औद्योगिक परियोजनाओं के लिए लोगों के मशविरे के बिना जरूरत से ज्यादा भूमि ली जा रही है।'' पिछले कुछेक वर्षों के दौरान छत्तीसगढ़, झारखंड, ओड़िशा और पश्चिम बंगाल की सरकारों ने कारपोरेट घरानों के साथ कई खरब डॉलर के सैकड़ों समझौतों पर दस्तख़त किए हैं। इनमें स्टील प्लांट, स्पंज आयरन फैक्टरी, पावर प्लांट, एल्युमीनियम रिफाइनरी, बांधों और खदानों के लिए सैकड़ों एमओयू प्रदेश सरकारों ने किए हैं। इन परियोजनाओं को विकास का कीर्तिस्तंभ बताया जाता है, जो शायद 10 फीसदी की विकास दर हासिल करने के सरकार के लक्ष्य को हासिल करने में मददगार साबित हो सकती हैं। निश्चित तौर पर इस तरह के आंकड़ों से सरकार का रिपोर्ट-कार्ड बेहतर बनता है, भले ही ज़मीनी स्तर पर किसी को फायदा न हो। शायद तभी केंद्र सरकार इन परियोजनाओं की स्थापना के लिए पूंजीपतियों को करों में रियायत देती है। कर्नाटक के लोकायुक्त की एक रिपोर्ट के मुताबिक एक निजी कंपनी द्वारा खोदे गए एक टन लौह अयस्क के लिए सरकार को 27 रुपये की रॉयल्टी मिलती है जबकि खनन कंपनी 5000

रुपये का मुनाफ़ा कमाती है। बॉक्साइट और एल्युमीनियम के क्षेत्र में और भी अधिक बुरे हालात बताए जाते हैं। मैग्सेसे पुरस्कार प्राप्त लेखिका अरूंधती रॉय के मुताबिक-''ये अरबों डॉलर की दिनदहाड़े लूट की दास्तानें हैं, जो चुनावों, सरकारों, जजों, अख़बारों, टी.वी. चैनलों, एनजीओ और अनुदान एजेंसियों को खरीद लेने के लिए काफी है।''

हालांकि इस बात से भी इंकार नहीं किया जा सकता कि नक्सलवाद औद्योगिक साम्राज्यवाद के प्रतिरोध को जायज ठहराते हुए कहीं न कहीं अपने अस्तित्व को ''जस्टीफाई'' करने का प्रयास करता है। इसके लिए जनजातीय जनसरोकारों की आड़ ली जाती है और स्थानीय लोगों को ढाल के तौर पर इस्तेमाल किया जाता है। लोगों के बीच अपनी प्रासंगिकता को स्थापित करने के लिए नक्सलवाद कथित भ्रष्ट लोकतांत्रिक व्यवस्था को बंदूक के दम पर चुनौती देने की बात करता है और बंदूक की नोक पर सत्ता एवं व्यवस्था को परिवर्तित करने की बात की जाती है। क्या यह भारत के संविधान और लोकतांत्रिक व्यवस्था को चुनौती नहीं है? संवैधानिक नज़रिये से यह निश्चित तौर पर एक चुनौती है और सशस्त्र आंदोलन की इज़ाजत हमारा संविधान नहीं देता। नक्सलवादी अपनी लड़ाई गुरिल्ला युद्ध के रूप में लड़ रहे हैं। गुरिल्ला युद्ध के तहत स्थानीय लोगों को ढाल बनाया जाना कोई नई बात नहीं है। दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि जब लोकतांत्रिक व्यवस्था को चुनौती मिलती है, तो उस चुनौती के ख़िलाफ़ सैन्य कार्रवाई करना राजसत्ता की बाध्यता हो जाती है। इस तरह से एक अंतहीन टकराव एवं हिंसा का जन्म होता है, जिसके बीच स्थानीय बेगुनाह समुदाय को पिसना पड़ता है। हालांकि सुनीता नारायण का कहना है कि हमने अभी तक प्राकृतिक संसाधनों के विकास का मॉडल तैयार ही नहीं किया। तो क्या ये टकराव उसी की देन है? जो भी हो, संविधान और लोकतांत्रिक मूल्य अधिक महत्वपूर्ण हैं। इसलिए नक्सलवाद को तो कतई जायज नहीं ठहराया जा सकता।

जनजातीय इलाक़ों में जिस नक्सलवाद को आदिवासियों के अस्तित्व की लड़ाई और अपने वजूद को बनाए रखने के लिए प्रतिरोध की संस्कृति के तौर पर महिमामंडित किया जा रहा है, उस पर भी सवाल उठाए गए हैं। गांधीवादी सामाजिक कार्यकर्ता पी. वी. राजगोपाल के मुताबिक-''उद्योग समूह अपने बचाव के लिए नक्सलियों को धन दे रहे हैं, जिससे नक्सली असलहा खरीदते हैं। नक्सलियों ने एक भी उद्योगपति को नुक़सान नहीं पहुंचाया, जबकि सरकार की मदद से विशाल भू-भागों पर कब्ज़ा करने में यही तबका सबसे आगे है। राजनीतिज्ञों को भी उद्योग जगत से धन मिलता है, इसलिए वे भी चुप हैं।'' पी.वी. राजगोपाल की बात से तो यही कहा जा सकता है कि उद्योगपतियों के साथ राजनीतिज्ञों और नक्सलियों दोनों का ही स्वार्थपरक मूक समझौता रहता है। एक तरफ तो नक्सलवादी गरीब एवं पिछड़े जनजातीय समुदाय के साथ ऐतिहासिक अन्याय का हवाला देकर औद्योगीकरण एवं विकास परियोजनाओं का विरोध करते हैं, दूसरी ओर वही नक्सली अपने राजनीतिक हितों की पूर्ति के लिए यदि उद्योगपतियों से गुपचुप हाथ मिलाकर कार्य कर रहे हों, तो कोई बड़ी बात नहीं है। राजगोपाल की बात पर गौर करें, तो सवाल यह भी खड़ा होता है कि कहीं औद्योगीकरण का यह छद्म विरोध धन उगाही की रणनीति का हिस्सा तो नहीं है? नक्सल आंदोलन के लोकतांत्रिक व्यवस्था के ख़िलाफ़ सशस्त्र संघर्ष को देश की आंतरिक सुरक्षा के लिए ख़तरे के रूप में प्रतिस्थापित करने के लिए क्या ये तथ्य पर्याप्त नहीं हैं जिसमें जनजातीय समुदायों को बरगलाकर आपस में ही टकराव को जन्म दिया जाता है और फिर बंदूक के दम पर सत्ता हासिल करने अथवा प्राकृतिक संसाधनों पर वर्चस्व के उद्देश्य को अंजाम दिया जाता है।

अनुसूचित जनजातियों पर औद्योगीकरण का प्रभाव और मीडिया की भूमिका

यह कार्पोरेट साम्राज्यवाद का युग है और कार्पोरेट जगत अपनी व्यावसायिक प्रतिबद्धता को पूरा करने के लिए राजनीतिक और रणनीतिक 'मोलभाव' का 'व्यवस्थित' उपयोग करना बखूबी जानता है। साम्राज्यवाद की यह अंधी दौड़ उपनिवेशवाद का एक छद्म रूप भी है, जहां वर्चस्व स्थापित करने की परस्पर होड़ कंपनियों में लगी रहती है। वर्तमान वैश्विक युग में कार्पोरेट जगत दुनिया के हर उस पहलू पर अपना आधिपत्य जमा लेना चाहता है, जो उसके व्यावसायिक हितों को पूरा करता हो। भूलना न होगा कि किसी भी कार्य को अंजाम देने में जनस्वीकृति की आवश्यकता होती है। मीडिया उस जनस्वीकृति को हासिल करने का वाहक बनता है। अपने काम को 'जस्टीफाई' करने के लिए सरकार, नक्सलवाद और औद्योगिक समूह तीनों ही मीडिया का सहारा लेते हैं। इस तरह तीन 'प्रेशर ग्रुप' एक साथ मीडिया में हस्तक्षेप करते हैं, जिससे एक ही मुद्दे के तीन पक्ष मीडिया में देखने को मिलते हैं। इस तरह बहुत ही कम मामलों में मीडिया उदारवादी छवि प्रस्तुत कर पाता है। औद्योगिक समूहों से विज्ञापन प्राप्त करने की एवज में मीडिया संस्थान औद्योगिक इकाइयों की स्थापना से रोजगार सृजन, समृद्धि और आर्थिक बेहतरी के 'भ्रमजाल' के सपनों से भरे विचारों को पेश करते हैं। ऐसी स्थिति में मीडिया संस्थान यह स्थापित करने में जुट जाते हैं कि औद्योगीकरण से ही विकास संभव है, इसलिए स्थानीय ग्रामीणों को महत्वाकांक्षी औद्योगिक परियोजनाओं के लिए ज़मीन देने से नहीं हिचकिचाना चाहिए। सरकार भी औद्योगिक विकास एवं निर्यात से आर्थिक तरक्क़ी का सपना देखती है लेकिन पुनर्वास और भूमि के पर्याप्त मुआवजे के लिए कोई कारगर नीति सरकार के पास नहीं है। जमीन मानवाधिकारों को पुष्ट करने का संसाधन भर नहीं है, बल्कि इससे जुड़े संविधान प्रदत्त अन्य अधिकार मसलन-भोजन, शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य, शांतिपूर्ण जीवनयापन भी प्रभावित हुए बिना नहीं रह पाते। यह विडंबनापूर्ण है कि मीडिया में जनमुद्दों का स्थान अब स्वार्थपरक प्रोपेगेंडा ने ले लिया है।

कभी नक्सलवाद, तो कभी औद्योगिक साम्राज्यवाद से जुड़े निहितार्थ जनसरोकारों पर भारी पड़ने लगे हैं, जिसका सीधा असर मूल निवासियों के जीवनयापन पर पड़ रहा है और उन्हें जल, जंगल, जमीन जैसे बुनियादी संसाधनों से वंचित किया जा रहा है। सरकार की गलत नीतियों के कारण लगभग 8 लाख एकड़ भूमि से आदिवासियों का अधिकार छिन गया। विस्थापन की सबसे बड़ी मार आदिवासियों पर पड़ी है। प्राकृतिक संसाधनों के लिए आज होड़ मची हुई है और उस पर अधिकार के निर्धारण में मीडिया की भूमिका अहम साबित होती है। नीतियों के निर्माण की ज़मीन तैयार करने से लेकर जनस्वीकार्यता हासिल करने में मीडिया एक महत्वपूर्ण कड़ी का काम करता है। परेशानी तब होती है, जब औद्योगिक साम्राज्यों के प्रतिनिधि अपने प्रभाव और पूंजी की बदौलत प्राकृतिक संसाधनों पर अधिकार कायम कर लेते हैं।

वंचित समुदाय के भूमि अधिकारों के लिए संघर्ष करने वाले सामाजिक कार्यकर्ता पी.वी. राजगोपाल कहते हैं कि-''आज संसद में भी उद्योगपति बैठे हुए हैं, जिनसे गरीबों के हितों की वक़ालत करने की उम्मीद करना बेमानी लगता है, वे तो सिर्फ अपने औद्योगिक साम्राज्य के विस्तार के लिए जरूरी 'पॉलिसी सपोर्ट' पाने के लिए बिसात बिछाने में जुटे रहते हैं। इसके परिणामस्वरूप जल, जंगल और जमीन पर समुदाय के अधिकार छिन जाते हैं। संसद में उद्योगपतियों के पैरोकार हैं, विभिन्न जातियों एवं धर्मों के कथित रहनुमा हैं, लेकिन गरीबों की बात करने वाले सांसद गिने-चुने ही हैं। ऐसे में मीडिया और न्यायपालिका पर ही वंचित समूहों की आस टिकी हुई है। विडंबना यह है कि ज्यादातर मीडिया संस्थान भी राजनीतिक रसूखदारों के हैं या फिर उनमें उद्योगपतियों का पैसा लगा हुआ है। इस तरह के कॉरपोरेट मीडिया पर भी पक्षपात के आरोप लगते रहे हैं।''

निष्कर्ष

बात चाहे जल, जंगल, जमीन और पर्यावरण की सुरक्षा की हो, या फिर मामला पूंजीपतियों एवं प्रभावशाली लोगों द्वारा महत्वाकांक्षी परियोजनाओं के लिए प्राकृतिक संसाधनों पर कब्जे की कवायद से जुड़ा हो, मीडिया दोनों स्थितियों में ''ओपिनियन मेकिंग'' यानी जनमत निर्माण का काम करता है। लेकिन जब मीडिया भी उन्हीं लोगों के हाथों में हो, जो संसाधनों की होड़ में जुटे हैं, तो मीडिया की निष्पक्षता और वंचितों अधिकार हाशिए पर चले जाते हैं। बड़े मीडिया घरानों पर दोष मढ़ने से काम नहीं चलेगा कि वे जनसरोकारों से जुड़ी पत्रकारिता से परहेज करते हैं। बल्कि ब्लॉक अथवा ग्राम स्तर पर छोटे-छोटे सामुदायिक 'क्लस्टर' बनाकर जनसहभागिता पर आधारित पत्रकारिता का मॉडल खड़ा करने की जरूरत है, क्योंकि वैकल्पिक मीडिया की ईमानदार एवं प्रतिबद्ध चुनौती ही बाज़ार में टिके रहने के लिए कॉर्पोरेट मीडिया को भी जनमुद्दों पर आधारित रिपोर्टिंग के लिए अपनी रणनीतियों में बदलाव के लिए प्रेरित कर सकती है। को-ऑपरेटिव मीडिया के छोटे-छोटे मॉडल भी कारगर हो सकते हैं। इस काम में गैर-सरकारी संगठनों और पत्रकारिता एवं जनसंचार से जुड़े अकादमिक संस्थानों की भूमिका महत्वपूर्ण साबित होगी। अकादमिक संस्थान इसके लिए पृष्ठभूमि तैयार करने में मदद कर सकते हैं। शोधकर्ताओं, सामाजिक कार्यकर्ताओं, गैर-सरकारी संगठनों और संवेदनशील पत्रकार भी इस काम में अपना योगदान दे सकते हैं। ताकि लोगों को उनके मूल निवास से न उजाड़ा जाए, उनके सामूहिक व स्वायत्त जीवन को सम्मान दिया जाए और उनके क्षेत्र के नियोजन में उनकी भलाई को ही सबसे ऊपर रखा जा सके लेकिन यह तब तक संभव नहीं हो सकता, जब तक कि निर्णय प्रक्रिया में समुदाय की भागीदारी न हो। हालांकि पंचायती राज व्यवस्था और स्थानीय निकायों में निर्णय प्रक्रिया में जनभागीदारी को विशेष महत्व दिया गया है लेकिन इन अधिकारों के बारे में लोगों को बहुत अधिक जागरुकता नहीं होने से समस्या हो रही है। मीडिया लोगों को उनके अधिकारों के प्रति जागरूक कर सकता है, जिससे संसाधनों की लूट को रोकने में मदद मिल सकती है और मूल निवासियों को अपने नैसर्गिक आवास से बेदखल भी नहीं होना पड़ेगा। ❑

(उमाशंकर मिश्र पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग, वर्धमान महावीर ओपन यूनिवर्सिटी, कोटा, राजस्थान में शोधार्थी हैं एवं लेखक सुबोध कुमार इसी विश्वविद्यालय में पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग के अध्यक्ष हैं।

ई-मेल : umashankarm2@gmail.com, skumar@vmou.ac.in)

योजना अब फेसबुक पर

आपकी लोकप्रिय पत्रिका **'योजना'** अब फेसबुक पर **Yojana Journal** नाम से पृष्ठ के साथ मौजूद है। हमारे फेसबुक पृष्ठ पर आएं और हमारी गतिविधियों तथा आगामी अंकों के बारे में ताज़ी जानकारी प्राप्त करें।

योजना के फेसबुक पेज की शुरुआत से लगभग पांच माह की छोटी-सी अवधि में इसे 13000 से ज्यादा LIKES के लिए पाठकों का धन्यवाद।

हमारा पता : http://www.facebook.com/pages/Yojana-Journal/181785378644304?ref-hl

फेसबुक पर हमसे मिलें, Like करें और अपने बहुमूल्य सुझावों से हमें अवगत कराएं।

विकलांगों के लिए सेंसर युक्त श्वसन यंत्र

● सुशांत पटनायक

सुशांत एक नवाचारी, सदा कुछ नया निर्माण करने वाले उद्यमी और प्रेरक वक्ता हैं। उन्होंने कम से कम दस ऐसे आविष्कार किए हैं, जो विचार के स्तर से उठकर कार्यशील प्रारूप का आकार ग्रहण कर चुके हैं। उन्होंने चार कंपनियों की स्थापना की है और वे एमआईटी (मैसाच्युसेट्स इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी) की समीक्षा में स्थान पा चुके हैं। वे अभी मात्र 20 वर्ष के हैं, परंतु उन्हें देशभर से आईआईटी (भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थानों) में व्याख्यान देने के लिये अतिथि के रूप में आमंत्रित किया जाता है।

सुशांत पटनायक धीरूभाई अंबानी को अपना आदर्श मानते हैं और अपने दृष्टिकोण को समझाने के लिए उनकी अनेक उक्तियों को अनायास उद्धृत करते रहते हैं। अपने आराध्य की भांति उनमें भी अपने प्रगतिशील विचारों को सार्थक रूप देने का विश्वास और लगन कूट-कूट कर भरा है। उनके विचारों के कुछ नमूने इस प्रकार हैं:

दुर्घटनारोधी प्रौद्योगिकी

यह चार पहिया वाहनों को पहाड़ों से गिरने अथवा गड्ढे में गिरने से बचाता है। सेंसर आधारित यह तकनीक सामने की सड़क की मौजूदगी का अंदाज लगा लेती है। गड्ढा अथवा खड़ी चट्टान के सामने आने पर गाड़ी को आगे बढ़ने से रोकने के लिए सेंसर सक्रिय हो जाते हैं। हां, इसके लिए वाहन की गति एक निर्णायक स्तर से कम रहनी चाहिए। वे 10 वर्ष के थे जब उन्हें यह विचार आया और उसे मूर्त रूप दिया।

लकवाग्रस्त लोगों के लिए सेंसर युक्त श्वसन-तंत्र

यह एक पहिये वाली कुर्सी (व्हील चेयर) है जिसमें एक ऐसा यंत्र लगा होता है जिससे लकवाग्रस्त व्यक्ति आगे-पीछे जाने और खाना अथवा पानी आदि मांगने जैसे रोज़मर्रा के कार्यों के लिए इस्तेमाल कर सकता है। यह सांस लेने के तरीक़े में होने वाले परिवर्तनों से आदेश प्राप्त करता है। इस यंत्र की कार्यप्रणाली को स्पष्ट करते हुए सुशांत कहते हैं कि इसमें एक स्क्रीन (पर्दा) लगा होता है जिसपर विभिन्न कार्य नियमित रूप से लिखकर सामने आते रहते हैं। पर्दे पर थोड़ा ज़ोर से सांस लेने पर किसी भी काम का चयन किया जा सकता है। उन्हें यह विचार 2009 में उस समय आया जब वे कक्षा 11 के छात्र थे। उन्होंने इस व्हील चेयर का प्रारूप तैयार कर लिया है। दिलचस्प बात यह है कि उन्होंने अपनी दुर्घटना-सह प्रौद्योगिकी का समावेश इस व्हील चेयर में भी किया है ताकि वह सीढ़ियों से गिरे नहीं।

कारों की चोरी रोकने वाला यंत्र

अपनी कार को चोरों के हाथ लगने की चिंता से छुटकारा पाने के लिए आपको केवल यह करना होगा कि इस सुविधाजनक यंत्र को आपको अपनी कार में लगाना होगा। प्रत्येक व्यक्ति को एक विशिष्ट संख्या दी जाती है, जिस पर कार स्टार्ट होने पर फोन कॉल आती है। इससे संबंधित व्यक्ति उस समय सतर्क हो

जाता है, जब उसकी कार को बिना उसकी जानकारी के चलाए जाने की कोशिश की जाती है और कार को रोकने के लिए केवल उस नंबर पर वापस फोन करना होता है। तब कार तभी आगे बढ़ेगी जब सिस्टम को फिर से सेट किया जाए। सुशांत का दावा है कि उन्होंने

भोपाल में 50 कारों में इस यंत्र को लगाकर इसका सफल परीक्षण किया है। उनका कहना है कि बाजार में इसी प्रकार का यंत्र 8 से 20 हज़ार रुपये में मिलता है, जबकि उनके यंत्र का मूल्य केवल तीन हजार रुपये है। भिन्न प्रकार की तकनीक के प्रयोग के कारण इसका मूल्य कम है।

ध्वनि चालित किफायती इलेक्ट्रिकल और इलेक्ट्रॉनिक्स उपकरण

यह एक ऐसा उपकरण है, जिसमें फोन पर निर्देश देकर इलेक्ट्रिकल यंत्र को नियंत्रित किया जाता है। इस किट में मुख्य इलेक्ट्रिकल उपकरण में प्रोग्राम किए हुए सर्किट लगे हुए हैं। यंत्र को चालू या बंद करने के लिए पूर्व निर्दिष्ट नंबर पर फोन करना होता है, जहां से वह सर्किट में जाता है। निर्दिष्ट निर्देश देने पर उपकरण उसी प्रकार काम करने लगेगा जैसा उसे निर्देश दिया गया है। उदाहरणार्थ मान लीजिए आपने कहा, पांच मिनट के बाद रोशनी कर दो, तो वह उसी मुताबिक बल्व जला देगा और यदि आप कहते हैं, दस मिनट के बाद पंखा बंद कर दो, तो वह ठीक दस मिनट के बाद पंखे का स्विच ऑफ कर देगा।

सुपर सेंस प्रौद्योगिकी

यह सुशांत का नवीनतम आविष्कार है। परिपथ (सर्किट) आधारित यह यंत्र कलाई पर बांध दिया जाता है, जिसके जरिये सिर अथवा हाथ की मामूली हलचल से कंप्यूटर चलाया जा सकता है। इसमें 'की बोर्ड' अथवा 'मॉउस' की कोई ज़रूरत नहीं होती है। वे एक उन्नत प्रादर्श (मॉडल) पर काम कर रहे हैं, जिसमें एक जैकेट और इनबिल्ट कंप्यूटर लगा होता है। जैकेट और रिस्टबैंड पहन लेने के बाद कंप्यूटर की ज़रूरत नहीं रह जाती। इसका प्रयोग करके नियमित कंप्यूटर की तरह टाइप किया जा सकता है, चित्र बनाया जा सकता है और यहां तक कि इंटरनेट का लाभ उठाया जा सकता है।

फ़िल्मों से प्रेरित भविष्य के विचार

उनके कुछ विचार इतने भविष्य तत्कालीन हैं कि वे किसी काल्पनिक विज्ञान फ़िल्म का हिस्सा प्रतीत होते हैं। कोई आश्चर्य नहीं कि वे स्वयं इस बात को स्वीकारते हैं कि वे फ़िल्मों के शौकीन हैं और 'सप्ताह में तीन-चार फ़िल्में देखते हैं।' हालांकि अधिकांश विचार स्वत: उनके मन में आते हैं, परंतु वे कहते हैं कि सुपर सेंस प्रौद्योगिकी की प्रेरणा उन्हें हिंदी फ़िल्म *कृष* से मिली। इसमें एक कंप्यूटर को हवा में प्रयोग करते दिखाया गया था। इसे अवैज्ञानिक कहकर ख़ारिज करते हुए उन्होंने विज्ञान के उन सिद्धांतों के अध्ययन की ओर ध्यान केंद्रित किया, जिससे उसे वास्तव में प्रयोग में लिया जा सके।

वर्तमान में भोपाल के भारतीय विज्ञान शिक्षा एवं अनुसंधान संस्थान (आईआईएसईआर) में भौतिकशास्त्र में पांच वर्ष का समेकित डिग्री कोर्स कर रहे सुशांत को इसमें कोई आनंद नहीं आ रहा क्योंकि यह कुछ अधिक ही सामान्य-सा है। (एनआईएफ राष्ट्रीय नवाचार प्रतिष्ठान को उन्हें अपने विचारों से उस समय अवगत कराया था। जब वे स्कूली छात्र थे) उनको लगता है कि परीक्षा और प्राप्तांकों पर कुछ अधिक ही ज़ोर दिया जाता है। छात्र पढ़ते तो हैं, पर कुछ सीखते नहीं। मैंने इलेक्ट्रॉनिक्स सीखी है, कभी पढ़ी नहीं।

सामाजिक उद्यमी

उन्होंने 2011 में वैज्ञानिक नवाचार प्रतिष्ठान (एसआईएफ) की स्थापना की। यह एक ऐसा संगठन है जो विश्वभर में नवोन्मेषी विचारों का संवर्धन, सृजन और विलेखीकरण करता है। उन्होंने 2012 में स्पिन्ट्रोटेक इंडिया (प्रा.) लिमिटेड की भी शुरुआत की। यह ज़ोखिम उठाने वाली एक सामाजिक कंपनी है जो नवोन्मेषी उत्पादों का विकास और विपणन करती है। अपने नवाचारों के संवर्धन के लिए उन्होंने अरमान फाउंडेशन, इंटेल, टेक्पीडिया, आईआईटी, गांधीनगर आदि के साथ गठजोड़ किया है। उन्हें एनआईएफ से भी सहायता मिलती है। सुशांत ने 2012 में ही व्यापारिक वस्तुओं की एक कंपनी भी स्थापित की, जिसका नाम है- सिंगल फ्रेम फैशंस (प्रा.) लिमिटेड (उबेर इंप्रिंट्स)। इसमें लोग अपनी टी शर्ट खुद ही डिज़ाइन कर सकते हैं जो चार कार्य दिवसों में उनके पास पहुंचा दी जाएगी। एक उत्कृष्ट प्रेरक वक्ता होने के कारण उन्हें विशेष अवसरों पर प्रतिष्ठित महाविद्यालयों और बड़े व्यापारिक घरानों में व्याख्यान देने के लिए आमंत्रित किया जाता है।

पारिवारिक सहयोग

भुवनेश्वर निवासी एक पशु चिकित्सक के पुत्र, सुशांत का अभिभावकों के बारे में कुछ अलग ही विचार हैं। उनका कहना है कि 'माता-पिता एक बाधा बन सकते हैं, क्योंकि वे आपको सुरक्षित देखना चाहते हैं।' वे आगे कहते हैं कि 'मेरे माता-पिता को शायद यह बात अधिक पसंद आती यदि मैंने विद्यालय, महाविद्यालय, डिग्री और नौकरी का सामान्य रास्ता अपनाया होता। परंतु मैं अपने सपनों को पूरा करना चाहता था और इसके लिए मुझे ज़ोखिम उठाने की आवश्यकता है। हां, वे मेरी उपलब्धियों से प्रसन्न हैं।

भविष्य के प्रति आशाएं

उनका अगला बड़ा विचार एक ऐसा बॉडी सूट बनाने का है जिसमें पहिये लगे हों और जिसे पहन कर सड़क पर 40-50 किमी प्रतिघंटे की गति से ग्लाइड किया जा सके। यह बैटरी से संचालित होगा और इससे वाहनों से होने वाले प्रदूषण से छुटकारा भी मिल सकेगा। यह एक महत्वाकांक्षी स्वप्न है। परंतु वे इसे धीरूभाई अंबानी की उक्ति- 'यदि आप अपने सपनों को मूर्त रूप नहीं देंगे तो कोई और उसको साकार करने के लिए आपको काम पर रख लेगा।' का उद्धरण करते हुए उचित ठहराते हैं। ❑

पुस्तक का नाम : खुदरा व्यापार में एफडीआई
लेखक : कमल नयन काबरा
प्रकाशक : बोधी
वर्ष : 2013..; **मूल्य :** ₹ 60; **पृष्ठ :** 96

खुदरा व्यापार में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश

● **स्वाति जैन**

भारत जैसे देश में खुदरा व्यापार में एक बड़ा हिस्सा गली-मोहल्लों की दुकानों और फेरी लगाने वालों का भी है जहां से आम जनता अपनी ज़रूरत का हर समान ख़रीद सकती है। भारत में खुदरा व्यापार, सामाजिक एवं सांस्कृतिक परंपरा का एक अभिन्न हिस्सा है जो लोगों के बीच संबंधों को मधुर बनाने का भी काम करता आया है। साथ ही साथ एक बड़े तबके को रोजी-रोटी के रूप में सामाजिक सुरक्षा भी प्रदान करता आया है। भारत में सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों का कोई भी पक्ष आधुनिकता, पूंजीवाद, दिखावे एवं बनावट तथा गलाकाट प्रतियोगिता के प्रभाव से अछूता नहीं रह गया है और समाज इसके पक्ष-विपक्ष में बंटा हुआ प्रतीत होता है। ठीक उसी तरह से खुदरा व्यापार में भी विदेशी पूंजी का प्रचार-प्रसार इस समय एक विवाद का विषय बना हुआ है। खुदरा व्यापार में विदेशी निवेश की अनुमति और विदेशी बहुराष्ट्रीय कंपनियों के प्रसार से संभावित ख़तरों का विस्तृत लेखा-जोखा प्रो. कमल नयन काबरा की नवीन पुस्तक *खुदरा व्यापार में एफडीआई : भ्रांति और यथार्थ* में अत्यंत तर्क़संगत रूप में प्रस्तुत किया गया है। लेखक ने पुस्तक के विभिन्न खंडों में सिर्फ़ इसके अभिप्राय एवं प्रभावों को ही नहीं समझाया है बल्कि सरकार के इस फ़ैसले के पीछे के राजनीतिक अर्थशास्त्र को भी बखूबी उजागर किया है। खुदरा बाज़ार में विदेशी पूंजी का समर्थन न सिर्फ़ सरकार कर रही है अपितु बड़े उद्योगपति, पूंजीपति उद्योग संगठन विदेशी सलाहकार सभी कर रहे हैं। सरकार को इससे जो फायदा समझ में आ रहा है वह है विदेशी मुद्रा का अधिक प्रवाह, जिससे उसे अपने विदेशी ऋण भार एवं घाटे को कम करने का आसान उपाय मिल जाता है। बड़े उद्योगपति एवं पूंजीपति और उनसे जुड़े उद्योग संगठन जैसे सीआईआई एवं फिक्की इसलिये समर्थन करते हैं कि वह अपना क़ारोबार विदेशी कंपनियों को बेचकर बड़ा मुनाफ़ा कमा सकें। विदेशी कंपनियां एवं सलाहकार, विस्तृत भारतीय बाज़ार, सस्ते कच्चा माल तथा त्वरित लाभ के कारण इसकी पैरवी कर रहे हैं। इन सभी स्वार्थी एवं लालची पूंजीवादी संस्कृति के ख़तरों से आगाह करती यह पुस्तक खुदरा व्यापार में विदेशी निवेश का एक सामाजिक लागत-लाभ विश्लेषण प्रस्तुत करती है। अनेक सारगर्भित तथ्यों की व्याख्या करते हुए कुछ मूलभूत प्रश्नों को भी उजागर करती है यह। उदाहरण के लिए भारत जोकि एक श्रम प्रधान देश है और रोज़गार की अवसरहीनता से जूझ भी रहा है वहां असंगठित व्यापार का हिस्सा कुल व्यापार में 90 प्रतिशत से घटकर 75 प्रतिशत ही रह गया है जबकि 5,000 लाख श्रम शक्ति में से सिर्फ़ 5 लाख लोग संगठित क्षेत्र में रोज़गार पा सके हैं और 5-10 करोड़ लोग असंगठित क्षेत्र पर निर्भर है। देश में लगभग डेढ़ करोड़ खुदरा दुकानें या व्यवसाय हैं जिससे आम जनता को किसी तरह से आजीविका चला लेने का सहारा मिल रहा है। ऐसी स्थिति में भारी एवं बड़ी मात्रा में पूंजी निवेश करने की इच्छुक विदेशी खुदरा कंपनियां सामाजिक विषमता को और भयानक बना देगी, इसे अनदेखा नहीं किया जाना चाहिए।

नवउदारवादी व्यवस्था के फैलते जाल में राज्य शासन न ही इन कंपनियों को आवश्यक वस्तुओं के उत्पादन के लिये बाध्य कर पाएगा, न ही रोज़गार और सामाजिक समता को बनाए रखने के लिए कारगर क़दम उठाने को बाध्य कर पाएगा।

लेखक ने अपने लेखों में बड़ी पैनी दृष्टि से विदेशी निवेश के पक्ष में दिए जाने वाले पूंजीवादी तर्क़ों पर प्रहार किया है। बिचौलियों की समाप्ति, बेहतर भंडारण एवं संरक्षण व्यवस्था प्रति इकाई क़ारोबार लागत में कमी, स्वचयन प्रक्रिया, अधोसंरचना निर्माण जैसे अनेक तर्क़ जोकि विदेशी निवेश के पक्ष में दिए जाते हैं, काफी हद तक बेमानी सिद्ध हो जाते हैं जब लेखक कहते हैं कि ''अब सवाल यह है कि क्या यह परिवर्तन तांगे के स्थान पर बस या मोटर कार के सफ़र के समान थोड़े समय में सस्ते दामों पर ज़्यादा सुरक्षित, सुविधाजनक और आरामदेह तरीक़े से यात्रा करने के समान समाज में व्यक्तिगत स्तर पर जीवन की गुणवत्ता सुधारने वाला, लागत एवं क़ीमतें घटाने वाला और समय बचाने वाला तक़नीकी परिवर्तन है।'' लेखक ने लघु उद्योगों के संरक्षण की पुरजोर वक़ालत की है जिससे पूंजी के आधिपत्य और केंद्रीकरण प्रभाव से भारतीय अर्थव्यवस्था को बचाया जा सके।

इस प्रकार यह पुस्तक ''बड़ी पूंजी के पंसारीकरण'' की वास्तविक तस्वीर प्रतीत होती है एवं संभावना को रेखांकित करते हुए भारतीय अर्थव्यवस्था की मूलभूत समस्या को इंगित करती है। भारतीय आर्थिक नीतियां, विनिर्माण एवं औद्योगीकरण, कृषि उत्पादन आत्मनिर्भरता एवं विस्तृत रोज़गार के लक्ष्यों को आधा-अधूरा छोड़कर रिटेलीकरण, वित्तीयकरण एवं सट्टेबाजी की ओर तेजी से फिसलती जा रही है। इस तरह की नीतियों से स्वपोषणीय एवं समावेशी विकास का उद्देश्य कैसे पूरा होगा? ❑

बाड़मेर तेल-शोधन संयंत्र

● सुरेश अवस्थी

तेल-शोधन संयंत्र सभी उद्योगों और आर्थिक विकास की जननी कहलाती है। बाड़मेर में लगने वाला पेट्रो-रसायन शोधन संयंत्र देश में पेट्रो-रसायन, पेट्रो-अभियांत्रिकी और पेट्रो-औषधि के क्षेत्र में अनुसंधान के साथ-साथ पॉलिमर्स, प्लास्टिक आदि उद्योगों को सुदृढ़ता प्रदान करेगा

राजस्थान में पिछले कुछ वर्षों में ऊर्जा उत्पादन के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति हुई है। जोधपुर में विश्व के सबसे बड़े समेकित सौर ऊर्जा पार्क की स्थापना के बाद जैसलमेर में पवन और सूर्य के प्रकाश से ऊर्जा उत्पादन की महत्वाकांक्षी परियोजनाएं शुरू हुई हैं और अब बाड़मेर में तेलशोधन संयंत्र अर्थात ऑयल रिफाइनरी लगाई जा रही है। इस अति महत्वाकांक्षी परियोजना से न केवल मरु-प्रदेश के नाम से ख्यात राजस्थान के इस पिछड़े क्षेत्र का नक्शा बदल जाएगा, बल्कि इससे प्रदेश का आर्थिक विकास का मार्ग भी तेज़ी से प्रशस्त होगा।

लगभग 3 ख़रब 72 अरब और 30 करोड़ की यह परियोजना, इंदिरा गांधी नहर परियोजना के बाद प्रदेश में होने वाला सबसे बड़ा निवेश है। इस परियोजना के पूरा होने के बाद थार मरुस्थल का पूरा चेहरा ही बदल जाएगा। तेल शोधन संयंत्र के अतिरिक्त उससे जुड़े जो सहायक उद्योग इस जिले और आसपास के क्षेत्रों में लगेंगे, उनसे क़रीब 10 लाख लोगों को प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रोज़गार मिलने की संभावना है। समूचे राजस्थान में आधारभूत संरचना के पास की एक नई ऊंचाई मिलेगी।

सत्तारूढ़ संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (यूपीए) की अध्यक्ष श्रीमती सोनिया गांधी ने बाड़मेर में 22 सितंबर को 90 लाख टन क्षमता वाले इस संयंत्र की आधारशिला रखी। इसके साथ ही राजस्थान के लोगों की वर्षों से चली आ रही मुराद को मूर्त रूप देने के कार्य का श्री गणेश हुआ। इस परियोजना की स्थापना से राजस्थान में विकास की अपेक्षाओं को नये पंख मिले है। और अब यह शीघ्र ही देश के आर्थिक रूप से विकसित राज्यों की श्रेणी में शामिल हो सकेगा।

पांच दशकों के गहन खोज के बाद बाड़मेर ज़िले में तेल और गैस के विशाल भंडारों का पता चला है। अनुमान है कि इस क्षेत्र में 90 करोड़ टन से भी अधिक कच्चे तेल के भंडार धरती के गर्भ में छिपा पड़ा है। अभी राज्य में प्रतिवर्ष 90 लाख टन का उत्पादन होता है जो देश में कुल उत्पाद का क़रीब 20 प्रतिशत है। भविष्य में इसका उत्पाद डेढ़ करोड़ टन तक बढ़ने की संभावना है। इसके साथ ही देश के कुल तेल उत्पादन में राजस्थान का योगदान बढ़कर 35 प्रतिशत हो जाएगा।

वर्तमान में केयर्न इंडिया लिमिटेड अपने नियंत्रण वाले बाड़मेर के तेल कुओं से 1.80 लाख बैरल तेल का प्रतिदिन उत्पादन करता है। महाराष्ट्र में साढ़े बाइस लाख बैरल प्रतिदिन तेल का उत्पादन होता है, जोकि देश में सबसे अधिक है। बाड़मेर का क्रम दूसरे स्थान पर है। यदि बाड़मेर में उचित और आधुनिक तक़नीक का प्रयोग होता रहा, तो वह दिन दूर नहीं जब राजस्थान भारत का शीर्ष तेल उत्पादक राज्य बन जाएगा। ब्रिटिश कंपनी की केयर्न इंडिया ने तेल संपन्न थार क्षेत्र के विकास के लिए 3 खरब 30 अरब रुपये के निवेश की योजना बनाई है।

तेल-शोधन संयंत्र सभी उद्योगों और आर्थिक विकास की जननी कहलाती है। बाड़मेर में लगने वाला पेट्रो-रसायन शोधन संयंत्र देश में पेट्रो-रसायन, पेट्रो-अभियांत्रिकी और पेट्रो-औषधि के क्षेत्र में अनुसंधान के साथ-साथ पॉलिमर्स, प्लास्टिक आदि उद्योगों को सुदृढ़ता प्रदान करेगा। कच्चे तेल से नेप्था निकाला जाता है, जिसका उपयोग पेट्रोल के उत्पादन में होता है। इसी के साथ-साथ बाड़मेर के तेल शोधन संयंत्र में डीज़ल-मिट्टी का तेल और विमान ईंधन (गैसोलीन) का उत्पादन भी होगा।

वैक्स (मोम), अस्फाल्ट और पेट्रोलियम आधारित अन्य हाइड्रोकार्बन उत्पादों का उत्पादन भी इस संयंत्र से होगा। इस विशाल संयंत्र में राज्य के कुशल और अर्द्धकुशल युवाओं को बड़े पैमाने पर रोज़गार मिलेगा। इस परियोजना की घोषणा के बाद से क्षेत्र के किसानों की भूमि के मूल्य में तेज़ी से वृद्धि

हुई है। एक प्रकार से स्थानीय लोगों का संयंत्र की पूर्ण स्थापना के पूर्व ही आर्थिक लाभ मिलना शुरू हो गया है। इस परियोजना के लिए बाड़मेर ज़िले के पचपद्रा-बामट गांव में ज़मीन आवंटित की गई है। परियोजना लगने के बाद यह क्षेत्र किसी तेल संपन्न खाड़ी देश की भांति चमकने लगेगा।

देश के इस 26वें तेल शोधन संयंत्र में सबसे बड़ी भागीदारी एचपीसीएल की है। भविष्य में ओएनजीसी, इंजीनियर्स इंडिया लिमिटेड और राज्य सरकार के भी इस परियोजना में सम्मिलित होने की संभावना है। विशेषज्ञों के अनुसार बाड़मेर रिफाइनरी एक अति आधुनिक रिफाइनरी होगी। इसमें तेल उत्पादन के लिए वैक्स तेल प्रौद्योगिकी का प्रयोग किया जाएगा। प्रारंभ में 4 खरब का निवेश होगा, जो आगे चलकर बढ़कर 10 खरब तक जा सकता है। संयंत्र में उत्पादित तेल और पेट्रो-उत्पादों का बाज़ार मुख्य रूप से पास के उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, पंजाब और हरियाणा के साथ-साथ दिल्ली में ही केंद्रित होगा। बाड़मेर तेल संयंत्र की स्थापना से इन राज्यों में पेट्रोलियम उत्पादों की उपलब्धता बढ़ेगी वहीं उनके परिवहन के व्यय में भी काफी कमी आएगी जिसका लाभ उपभोक्ताओं को मिलेगा।

बाड़मेर रिफाइनरी एक अति आधुनिक रिफाइनरी होगी। इसमें तेल उत्पादन के लिए वैक्स तेल प्रौद्योगिकी का प्रयोग किया जाएगा। प्रारंभ में 4 खरब का निवेश होगा, जो आगे चलकर बढ़कर 10 खरब तक जा सकता है।

वर्तमान में, राजस्थान तेल के दोहन के लिए 50 अरब रुपये रॉयल्टी के रूप में प्राप्त कर रहा है। एक अनुमान के अनुसार जब इसे तेल शोधन संयंत्र में जब पूर्ण रूप से उत्पादन होने लगेगा, राज्य को क़रीब 1 खरब 30 अरब रुपये से लेकर डेढ़ खरब रुपये तक की रॉयल्टी प्राप्त होने लगेगी। जहां तक राज्य सरकार का प्रश्न है, उसे एचपीसीएल को इस तेल शोधनी के निर्माण के लिए अगले पंद्रह वर्षों तक प्रतिवर्ष 33 अरब 76 करोड़ रुपये का वित्तीय प्रोत्साहन पैकेज़ देना होगा। इसके अतिरिक्त, राज्य सरकार बुनियादी ढांचे के विकास के लिए ज़मीन, पानी आदि नि:शुल्क प्रदान करेगी।

राजस्थान के पेट्रोलियम सचिव सुभाष पंत का कहना है कि बाड़मेर में तेल का उत्पादन शुरू होने के बाद से राज्य में अब तक (31 अगस्त, 2013) रुपये 14,000 करोड़ अर्थात एक खरब 40 अरब रुपये का राजस्व प्राप्त हुआ है। बाड़मेर के कुओं से प्रतिदिन 3 लाख तेल निकाला जा सकता है। यदि ऐसा हो सका तो राज्य के राजस्व में पर्याप्त वृद्धि हो सकेगी।

राज्य में सबसे पहले तेल की खोज 2001 में सरस्वती क्षेत्र में हुई थी, जिसके बाद (2003) रागेश्वरी में तेल के कुओं का पता लगा। जनवरी 2004 में केयर्न ने मंगला क्षेत्र की खोज की जो पिछले दो दशकों में भारत में, मैदानी इलाक़ों में, मिलने वाला सबसे बड़ा तेल क्षेत्र है। उसके बाद ऐश्वर्या और भाग्यम तेल क्षेत्रों का पता लगा है। मंगला, भाग्यम और ऐश्वर्या (एमबीए) तेल क्षेत्रों में जो तेल भंडार धरती के गर्भ में छिपे पड़े हैं, उनसे लगभग 1 अरब बैरल तेल प्राप्त किया जा सकता है। यदि इसका मूल्य 100 अमरीकी डॉलर प्रति बैरल लगाया जाए तो समूचे तेल का मूल्य 1 खरब डॉलर तक पहुंच सकता है। केयर्न इंडिया के मुख्य कार्यकारी अधिकारी पी. इलांगों का कहना है कि इस वित्त वर्ष में प्रतिदिन 2 लाख से 2.15 लाख बैरल तेल उत्पादन की योजना है। तेल उत्पादन में 25 हज़ार बैरल प्रतिदिन की वृद्धि हो तो उससे 1 अरब डॉलर की विदेशी मुद्रा बचाई जा सकती है।

इस संयंत्र के अतिरिक्त राजस्थान के लिए एक और सौगात आने वाली है। बहुचर्चित दिल्ली-मुंबई औद्योगिक गलियारे (डीएमआईसी) का 40 प्रतिशत क्षेत्र राजस्थान से होकर गुज़रेगा। जब इस गलियारे में काम-काज पूर्ण रूप से शुरू हो जाएगा तो यह राज्य के कपास, ऊनी वस्त्र, सीमेंट, जस्ता, रसायन, उर्वरक, वाहन और हीरा उद्योगों के लिए भी लाभदायी होगा। निश्चय ही इससे राज्य के विकास में तेज़ी आएगी। शुरू में इसकी उत्पादन क्षमता 45 लाख टन रखी गई थी, परंतु केंद्र सरकार ने देश की भावी आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए क्षमता दो गुनी करने की स्वीकृति दी है। देश और राजस्थान के विकास में यह परियोजना एक मील का पत्थर साबित होगी।

देश में ऊर्जा की बढ़ती मांग को देखते हुए सरकार ने गैर-पारंपरिक क्षेत्र में ऊर्जा संसाधनों के दोहन को गति प्रदान करने के निमित्त 'शैल गैस' की संभावनाएं तलाशनी शुरू कर दी हैं। केंद्रीय मंत्रिमंडल की आर्थिक मामलों की समिति (सीसीईए) ने सितंबर माह में सार्वजनिक क्षेत्र की तेल कंपनियों ओएनजीसी और ऑयल इंडिया को उनको आवंटित प्रक्षेत्रों (ब्लॉक) में शेल गैस के संसाधनों की खोज के लिए खुदाई करने की अनुमति दे दी है। यह गैस झीलों, नदियों और अन्य जलीय क्षेत्रों की तलहटी में जमा रेत, पत्थर और कीचड़ आदि से बनी चट्टानों में दबी पड़ी होती है। यह भी एक प्रकार के हाइड्रोकार्बन होते हैं। इस गैस को निकालने के लिए पानी, रेत और भूमिगत रसायनों में विस्फोट करना होता है। इसकी तक़नीक अत्यंत जटिल और ज़ोखिमभरी होती है। फिलहाल अमरीका, कनाडा, चीन आदि उन्नत देशों में यह तक़नीक उपलब्ध है।

देश में ऊर्जा की बढ़ती मांग को देखते हुए सरकार ने गैर-पारंपरिक क्षेत्र में ऊर्जा संसाधनों के दोहन को गति प्रदान करने के निमित्त 'शैल गैस' की संभावनाएं तलाशनी शुरू कर दी हैं।

ओएनजीसी की योजना इस वर्ष 10 कुएं की खुदाई की है। यदि सब कुछ ठीक-ठाक रहा तो अगले वर्ष से व्यावहारिक उत्पादन शुरू हो सकता है। ओएनजीसी के एक वक्तव्य के अनुसार सर्वप्रथम गुजरात की सम्भात की खाड़ी में शैल गैस के कुओं की खुदाई की जाएगी। इस क्षेत्र में ऐसी चट्टानों के बहुतायत से होने की संभावना जताई गई है जहां से शैल गैस का उत्पादन हो सकता है।

शैल गैस अथवा पृथ्वी के गर्भ में दबी चट्टानों में फंसी प्राकृतिक गैस को पारंपरिक पेट्रोलियम उत्पादों के विकल्प के रूप में देखा जा रहा है। विश्वभर में इसके दोहन के प्रयास शुरू हो गए हैं और अब भारत भी इस अभियान में जुड़ गया है। प्रारंभ में सरकारी कंपनियों को गैस की संभावनाओं की खोज का काम सौंपा गया है। यदि प्रयोग उत्साहजनक रहा तो शीघ्र ही निजी कंपनियों को भी नीलामी के आधार पर दायित्व सौंपा जा सकता है। ❑

(लेखक पत्रकार हैं)

ALS

सामान्य अध्ययन प्रशिक्षण कार्यक्रम हेतु हिन्दी माध्यम का सर्वश्रेष्ठ संस्थान

सर्वश्रेष्ठ टीम | सर्वश्रेष्ठ रिजल्ट | सर्वश्रेष्ठ पाठ्यक्रम

ALS Alternative Learning Systems

ALS Associates

ISGS

Indian School of General Studies

Since 2004

IAS Study Circle interactions Shaping dreams into success

Competition WIZARD A MONTHLY FOR IAS/PCS EXAMS

सामान्य अध्ययन GS EXTENSIVE

मुख्य-सह-प्रारंभिक परीक्षा 2014-15 + CSAT

The Most Comprehensive Programme for IAS Training

सर्वश्रेष्ठ कक्षागत योजना

- ✓ सामान्य अध्ययन मुख्य परीक्षा Paper I, II, III, IV + प्रारंभिक परीक्षा हेतु 700+ घंटे का क्लास रूम प्रशिक्षण।
- ✓ CSAT हेतु 180+ घंटे का क्लास रूम प्रशिक्षण
- ✓ प्रारंभिक व मुख्य परीक्षा हेतु अद्यतन अध्ययन सामग्री
- ✓ निबन्ध हेतु 15 कक्षाओं का अतिरिक्त आयोजन
- ✓ अंग्रेजी Basic हेतु 10 कक्षाओं का अतिरिक्त आयोजन
- ✓ लेखन संवर्धन हेतु 5 कक्षाओं का अतिरिक्त आयोजन
- ✓ प्रारंभिक परीक्षा हेतु 28 टेस्ट सिरीज कार्यक्रम
- ✓ मुख्य परीक्षा हेतु 8 टेस्ट सिरीज कार्यक्रम
- ✓ GS परीक्षा संबंधी रणनीति By Shashank Atom, YD Misra & Manoj K Singh
- ✓ साप्ताहिक समसामयिक घटनाओं का विश्लेषण

Stalwarts Combine to form the Best Ever Team

प्रत्येक खण्ड हेतु विशेषज्ञों की

अनुभवी टीम

MANOJ KUMAR SINGH
MANISH GAUTAM
Y.D. MISRA, ARVIND SINGH
ARUNESH SINGH
SHARAD TRIPATHI
R.C. SINHA, SACHIN ARORA
DR. SANJAY PANDEY
KM PATHI
DR. SHASHI SHEKHAR
AJAY SRIVASTAVA

Programme Director :

Manoj Kumar Singh

Managing Director:

ALS, Interactions IAS Study Circle, Competition Wizard, ISGS

Only Available Batch for IAS 2014-15

IAS 2014 | BATCH IV | 19 November | Time: 08:00am

CSAT *Batch Begins* 11 November

165+ final selections in Civil Services '12

सर्वश्रेष्ठ परीक्षा परिणाम

परीक्षा में अब तक 1593+ सफल अभ्यर्थियों का चयन, वर्ष 2013 में कुल चयन = 165+, अब तक 2 IAS TOPPERS का चयन

हिन्दी माध्यम में सर्वोच्च परिणाम

Manish Kumar AIR 40 (2013) | Deepa Agrawal AIR 52 (2013) | Kana Ram AIR 54 (2013) | Jai Prakash Maurya AIR 9 (2010) | Manoj Jain AIR 15 (2005) | Neelima AIR 23 (2008)

लोक प्रशासन द्वारा

मनोज कुमार सिंह, अजय श्रीवास्तव, मनीष गौतम, शरद त्रिपाठी, सचिन अरोड़ा एवं अन्य विशेषज्ञ

बैच प्रारंभ

12 November

Time: 08:00am

Be in touch...

Manoj K Singh

Managing Director, ALS

manojkumarsingh@alsias.net

ALS ADMISSION ENQUIRY

9999343999, 9999975666
9910602288, 011-27651110

Visit us at: www.iasals.com

ALS Alternative Learning Systems | IAS Study Circle interactions Shaping dreams into success

Alternative Learning Systems (P) Ltd.

Corporate Office: ALS, B-19, ALS House, Dr Mukherjee Nagar, Delhi-09. **South Delhi Centre:** 62/4, Ber Sarai, Delhi-16

YH-181/2013

बाल भारती
निबंध प्रतियोगिता

10 से 16 वर्ष तक के बच्चों के लिए
बालदिवस के अवसर पर नीचे दिए गए विषयों में से
किसी एक विषय पर लगभग 1500 शब्दों में निबंध लिखकर भेजें

विषय

चांद पर चौबीस घंटे
जरूरी है कभी सच तो कभी झूठ
एक फूल की आत्मकथा
मोगली मेरे शहर/गांव में
आज की ताजा खबर
मेरे शिक्षक से कुछ सवाल
मेरा पार्टी टाइम
मेरे सबसे अच्छे अध्यापक/अध्यापिका

प्रथम पुरस्कार : ₹ 5000/– **तृतीय पुरस्कार : ₹ 3000/–**
द्वितीय पुरस्कार : ₹ 4000/– **दस प्रोत्साहन पुरस्कार**

इस प्रतियोगिता में 15 अक्टूबर 1996 से 15 अक्टूबर 2003 के बीच जन्मतिथि वाले बच्चे भाग ले सकते हैं। कृपया स्कूल के प्रधानाचार्य/राजपत्रित अधिकारी से प्रमाणित जन्म प्रमाण पत्र की प्रति प्रविष्टि के साथ भेजें।

निबंध प्राप्त होने की अंतिम तिथि : 30 नवंबर, 2013

निबंध के साथ अपना नाम, उम्र, कक्षा, टेलीफोन व मो. नं. और घर का पूरा पता साफ–साफ अक्षरों में लिखकर निम्न पते पर भेजें :–

'बाल भारती' निबंध प्रतियोगिता
प्रकाशन विभाग
कमरा नं. 120, सूचना भवन, सी जी ओ कॉम्पलेक्स,
लोदी रोड, नई दिल्ली–110003
दूरभाष : 011– 24362910/24362954
ईमेल : balbharti1948@gmail.com वेबसाइट : publicationsdivision@nic.in

प्रकाशक व मुद्रक : ईरा जोशी, अपर महानिदेशक (प्रमुख) द्वारा प्रकाशन विभाग के लिए ब्रजबासी आर्ट प्रेस लिमिटेड, ई-46/11, ओखला औद्योगिक क्षेत्र, फेस-2, नयी दिल्ली-110 020 से मुद्रित एवं प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सी.जी.ओ. कॉप्लेक्स, लोधी रोड, नयी दिल्ली-110 003 से प्रकाशित। वरिष्ठ संपादक : रेमी कुमारी

Licenced under U (DN)-55/2012-14
आर.एन.आई. 951/57
R.N.I. 951/57

रजि.सं.डीएल (एस)-05/3231/2012-14
Reg. No. D.L.(S)-05/3231/2012-14 at RMS, Delhi
23 अक्तूबर, 2013 को प्रकाशित • 29-30 अक्तूबर, 2013 को डाक द्वारा जारी

द्वितीय संशोधित एवं परिवर्द्धित संस्करण 2013-14

Code No. 811 Price ₹ 125.00

Just Released

नवीनतम आँकड़ों एवं तथ्यों का समावेश

बैंकिंग सेवाओं के लिए उपयोगी

वस्तुनिष्ठ प्रश्नोत्तर सहित

विदेशी व्यापार नीति 2013-14

मौद्रिक एवं साख नीति 2013-14

- भारतीय अर्थव्यवस्था की प्रमुख विशेषताएं
- विभिन्न पंचवर्षीय योजनाएं
- जनगणना 2011 के महत्वपूर्ण आँकड़े
- राष्ट्रीय आय, कृषि, उद्योग, मुद्रा, बैंकिंग, परिवहन, संचार, विदेशी व्यापार एवं ऋण, बेरोजगारी एवं निर्धनता आदि के अद्यतन आँकड़े
- भारत में संचालित रोजगारपरक एवं निर्धनता निवारण कार्यक्रम
- केन्द्रीय बजट 2013-14
- रेल बजट 2013-14
- आर्थिक समीक्षा 2012-13
- विदेशी व्यापार नीति : 2009-14

विभिन्न प्रतियोगिता परीक्षाओं के लिए भी उपयोगी

English Edition

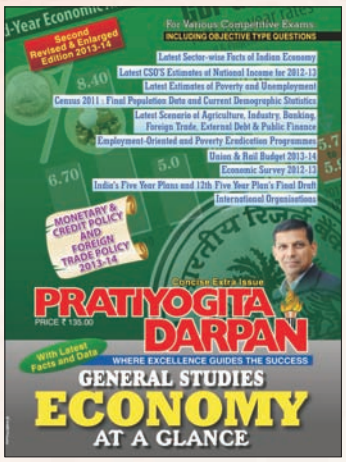

Code No. 799 Price ₹ 135/-

प्रतियोगिता दर्पण 2/11 ए, स्वदेशी बीमा नगर, आगरा – 282 002 फोन : 4053333, 2531101, 2530966; फैक्स : (0562) 4053330
• E-mail : care@upkar.in • Website : www.upkar.in
ब्राँच ऑफिस : • नई दिल्ली फोन : 011- 23251844/66 • हैदराबाद फोन : 040-66753330 • पटना फोन : 0612-2673340 • कोलकाता फोन : 033-25551510

YH-173/2013